अशोक द्वारा परवर्तित मार्ग का नक्षा

एच. बी. माहेश्वरी 'जेसल'
के सौजन्य से

सोनागिर वैभव

लेखक

रामजीत जैन एडवोकेट

१९९७

प्रकाशक

चन्द्रभान जैन २/५, विभव नगर, आगरा

प्रथम

१००० प्रतियाँ

मूल्य

५१/- रुपये

कम्प्यूटर कम्पोजिंग
विवेक जैन (रिंकू)
सोनू एड्वरटायजर्स, सराफा बाजार, ग्वालियर-१
फोन : ३३०६०४

मुख्य पृठ चित्र परिचय :
पर्वतराज के मुख्य मंदिर नं. ५७ चन्द्रप्रभु भगवान
के आगे मान स्तम्भ एवं वर्तमान चौबीसी का विहंगावलोकन

पुस्तक मिलने का पता :
चन्द्रभान जैन, २/५, विभव नगर, आगरा

मुद्रक एवं प्रिन्टर्स
अनिल माहेश्वरी
चंचल ऑफसेट
पडाव, ग्वालियर

प्रारम्भिक विषय सूची

विषय सम्बंधी सूचिका पट्ट

卐 आशीर्वचन 卐

श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय नमः

श्री चन्द्रप्रभाय नमः

अंधकार है वहाँ जहाँ आदित्य नहीं।

है निर्जीव वह देश जहाँ साहित्य नहीं ॥

साहित्य संस्कृति का परिचायक होता है। हमारी संस्कृति हमारे तीर्थस्थलों की रक्षा के लिये आवश्यक है, तीर्थक्षेत्रों की ऐतिहासिकता, पौराणिकता को साहित्य के माध्यम से जन जीवन के सामने रखें। श्री रामजीत वकील सा., ग्वालियर वालों ने सिद्धक्षेत्र सोनागिर जी का एक सुन्दर शोधपूर्ण लेख तैयार कर हमारी धरोहर की रक्षा का सम्बल तैयार किया है। यह पुस्तक प्रत्येक भव्यात्मा के दिमाग में एक नई चेतना, नई श्रद्धा और नवीन जागृति पैदा करेगी। इसमें संशय नहीं। इस शोध के माध्यम से क्षेत्र हमारा है, इसकी सुरक्षा स्वाभाविकता से मननीय होगी।

इस ऐतिहासिक लेख को ध्यान से पढ़कर प्रत्येक तीर्थक्षेत्रों के अध्यक्ष व मंत्रियों का कर्त्तव्य है कि अपने क्षेत्रों का इसी विधि इतिहास लिखवाकर प्रकाशित करावें। जिससे हम, हमारे क्षेत्र व हमारी पीढी सुरक्षित रह सके।

लेखक श्री रामजीत वकील सा. को मेरा इस महान कार्य के लिये आशीर्वाद है, आगे भी इसी प्रकार दिशा बोध देकर अपनी धरोहर की रक्षा करते रहें।

आचार्य श्री १०८ भरतसागर जी

卐 आचार्य श्री १०८ भरत सागर जी 卐

जन्म चैत्र शुक्ला ९ सं. २००६ ग्राम लुहारिया जिला बांसबाडा (वागड प्रान्त) राजस्थान-गृहस्थ नाम छोटेलाल। आपने गृहत्यागकर २२ फरवरी १९६८ से आचार्य श्री विमलसागर जी के संघ में रहे। ६ नवम्बर १९७२ को आचार्य श्री विमलसागर जी से श्री सम्मेद शिखर जी पर मुनि दीक्षा ली। दि. ७ सितम्बर १९७९ को चातुर्मास योग पर श्री सोनागिर जी में उपाध्याय पद पर विभूषित हुए दिनांक २९-१२-९४ को तीर्थराज सम्मेद शिखर जी पर आ॰॰र्य श्री विमल सागर जी महाराज जी के समाधिस्थ होने पर आप दिनांक १०-२-९५ को आचार्य पद पर विभूषित हुए एवं अब आप उनके पट्ट पर विराजमान हैं। सन् १९९६ में आपका चातुर्मास श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्र पर हुआ था। आप ससंघ विराजमान थे सितम्बर १९९६ में पर्यूषण पर मैंने आपके चरणों में विनयवंत होकर इस पुस्तक के लिये आशीर्वचन हेतु निवेदन किया। उस समय आपने कृपावन्त होकर यह आशीर्वचन लिखे।

स्मरण रहे, आप आचार्य श्री विमल सागर जी के संघ में सदैव रहे। आचार्य श्री विमलसागर जी के चातुर्मास श्री सिद्धक्षेत्र सोनागिर जी पर सन् १९७८, १९७९, १९८८, १९८९, १९९०, १९९१ में हुए। सन् १९७९ (सं. २०३६) में आचार्य श्री विमलसागर जी को सन्मति दिवाकर की उपाधि दी गई।
आचार्य विमलसागर जी के सानिध्य में सन् १९७९ में श्री मज्जिनेन्द्र पंच कल्याणक महोत्सव एवं श्री दि. जैन वरैया समाज द्वारा सन् १९९१ में गजरथ एवं श्री मज्जिनेन्द्र पंच कल्याणक महोत्सव सम्पन्न हुए।

आचार्य श्री के सदुपदेश एवं प्रेरणा से श्री सोनागिर जी में निम्नलिखित कार्य सम्पन्न हुए -

श्री नंगानंग प्रतिमाएँ एवं छतरी, वर्तमान चौबीसी, श्रुत स्कंघ, स्याद्वाद नंगानंग विद्यालय, स्याद्वाद विमल ज्ञानपीठ, स्याद्वाद नगर, आचार्य महावीर कीर्ति सरस्वती भवन, नंगानंग औषधालय, पर्वत पर समवशरण मंदिर

आचार्य श्री विमलसागर जी की हीरक जंयती के शुभ अवसर पर 'स्वर्णगिरि श्रवण योग स्मारिका' प्रकाशित हुई।

आचार्य श्री भरत सागर जी महाराज को
शत्-शत् वन्दन।

●●●●●●●
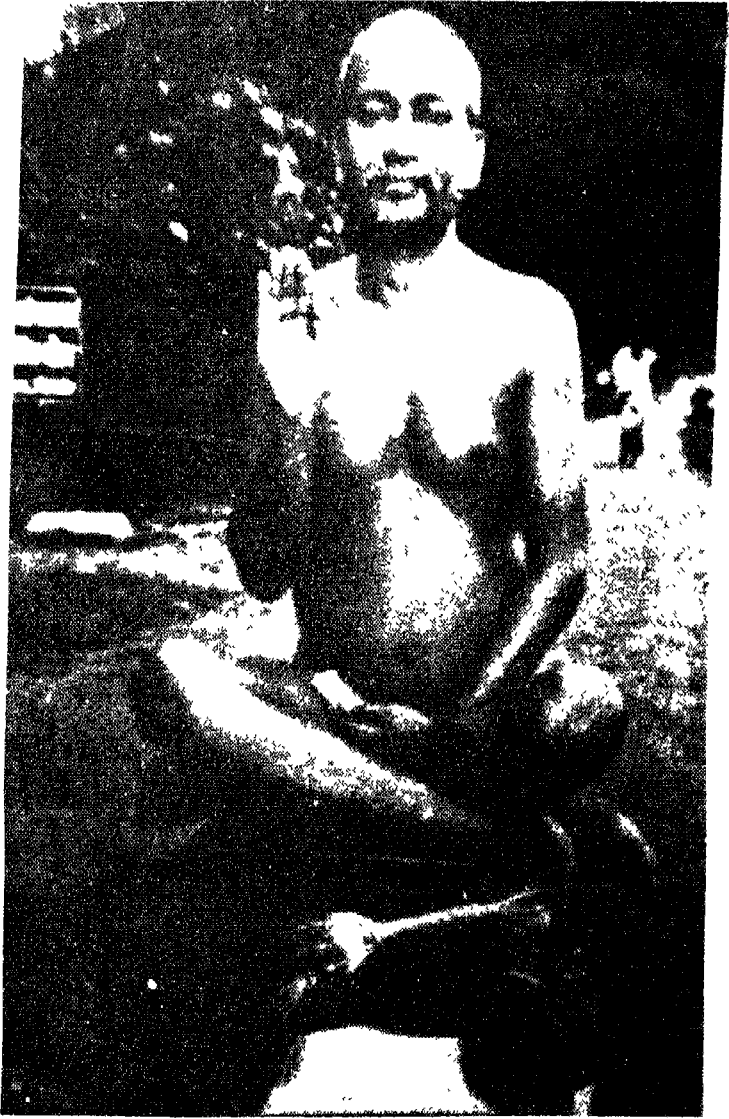
आचार्य श्री १०८ भरत सागर जी महाराज

आचार्य श्री १०८ पुष्पदंत सागर जी महाराज

卐 आशीर्वचन 卐

आचार्य श्री १०८ पुष्पदन्त सागर जी महाराज
मुजफ्फरनगर
२१-४-९७

सोनागिर वैभव की पाण्डुलिपि देखी और कुछ अंश पढ़े। लेखक महोदय ने काफी श्रम किया है। उनका श्रम आपकी श्रद्धा को जगाये और सोनागिर तीर्थ की प्रेरणा में कारण बने।

रामजीत जैन को मंगल आशीर्वाद !

पुष्पदन्त
२१-४-९७

आचार्य श्री पुष्पदन्त सागर जी महाराज का परिचय :

बाल्यकाल नाम : सुशील जैन
जन्मतिथि : ९ जनवरी १९५४
जन्म स्थान : गोंदिया (महाराष्ट्र)
माता का नाम : श्रीमती मथुरा बाई
पिता का नाम : श्री कोमलचन्द जैन
भाई : छः
बहन : चार
शिक्षा : बी.ए., बी.एससी. प्रथम, एलएल.बी. प्रथम वर्ष
एम.ए. इतिहास प्रथम वर्ष
क्षुल्लक दीक्षा : २ नवम्बर १९७८, सिद्धक्षेत्र नैनागिरी
ऐलक दीक्षा : १४ जनवरी १९८०, सिद्धक्षेत्र नैनागिरी
गुरु आचार्य श्री १०८ विद्या सागर जी महाराज
मुनि दीक्षा : ३१ जनवरी १९८०, बाला बैहट (यू.पी.)
गुरु आचार्य श्री १०८ विमल सागर जी महाराज
आचार्य पद : २१ मार्च १९८६, इन्दौर
गुरु आचार्य श्री १०८ विमल सागर जी महाराज

●●●●●●●

प्रस्तावना

भारतीय इतिहास के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि हमारे मनीषियों ने अपने अर्जित ज्ञान एवं चिंतन के आधार पर मूल्य आधारित सामाजिक व्यवस्थाओं को स्थापित करने का समय समय पर प्रयास किया है। इस चिंतन एवं अध्यात्म से जुड़ी हुई मान्यताओं के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय विचारकों का यह मानना है कि इन सामाजिक नियमों में देश, काल एवं परिस्थितयों के अनुकूल परिवर्तन आवश्यक है। वास्तव में इस गतिशीलता के कारण ही भारतीय परम्पराएँ एवं मान्यताएँ देश की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास का कारक रही हैं। परिर्वतन के इस प्रवाह को रोकने से रूढ़िवादिता उत्पन्न होती है जो देश काल एवं परिस्थितियों के अनुकूल न होने के कारण जीवन-मूल्यों के ह्रास का कारण बनती और कालान्तर में समाज के विघटन का भी कारण बनती हैं।

भारतीय इतिहास पर एक विहंगम दृष्टि डालने पर हमें विदित होता है कि मूल्य आधारित इन व्यवस्थाओं पर समय समय पर किया गया इन मनीषियों का विचार उसे उचित मार्ग प्रदान कर व्यवस्था को परम्परा में रखते हुए भी नवीनता प्रदान करते रहे हैं। जिन स्थानों पर निवास कर इस प्रकार के ज्ञान को इन महान् आत्माओं ने प्रकाशित किया है वे स्थान तीर्थस्थानों के रूप में स्थापित हुए हैं। कालान्तर में विकसित ये समस्त तीर्थ भारतीय जीवन पद्धति के इतिहास को निरूपित करने वाले सशक्त हस्ताक्षर हैं। बुन्देलखण्ड़ क्षेत्र में सोनागिर एक ऐसा ही जैन तीर्थ है।

इन तीर्थों का अध्ययन भारतवर्ष की विशाल सतत प्रवाहित होने वाली सांस्कृतिक परम्पराओं की पूर्ण श्रृंखला के ज्ञान के लिए आवश्यक है। विस्मृति की धूल में ढके इन तीर्थों के इतिहास के अज्ञान के कारण उत्पन्न रूढिवादिता की प्रमुखता के कारण सामाजिक परम्पराओं का यथार्थ आकलन संभव नहीं हो रहा है। यद्यपि समय समय पर अनेक प्रतिभाशाली इतिहासकारों ने विस्मृति की धूल को झाड़ कर उनके प्रकाशवान बिन्दुओं को स्पष्ट करने का सदा प्रयास किया है तथापि महत्वपूर्ण तीर्थ स्थानों को छोड़कर देश में बिखरे अनेक तीर्थों का ज्ञान अभी भी अत्याल्प है।

श्रीयुत् रामजीत जैन, एडवोकेट, एक ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने अपने जीवन में भारतवर्ष के इस क्षेत्र के जैन इतिहास एवं पुरातत्व का गहन अध्ययन करते हुए उन पर पड़ी विस्मृति की धूल को हटाने तथा उससे उद्भूत होने वाले प्रकाश-

बिन्दुओं को जनमानस के सम्मुख प्रस्तुत करने का संकल्प लिया है एक लम्बे समय से अपने आप को क्षेत्रीय इतिहास एवं पुरातत्व के शोध के आधार पर ८ पुस्तकें प्रकाशित की हैं। प्रस्तुत पुस्तक ''सोनागिर–वैभव'' के माध्यम से उन्होंने सोनागिर जैसे समृद्ध जैन तीर्थ से सम्बद्ध समस्त सामग्री एकत्रित कर उसके वैभव को प्रदर्शित करने का प्रयास किया है। उनकी इस नवीं पुस्तक में ९ अध्याय हैं जो भारतीय संस्कृति में तीर्थों के महत्व से आरंभ होती हैं। पुस्तक में तीर्थों की परिभाषा, तीर्थों के प्रकार, क्षेत्र की विशेषता आदि के वर्णन के साथ ही साथ क्षेत्र के समस्त मंदिरों का सजीव एवं सशक्त चित्रण है। इस पुस्तक में जिन प्रामाणिक तथ्यों के आधार पर सोनागिर के समस्त आयामों का चित्रण जिस सुन्दरता के साथ दि या गया है, वह श्री रामजीत जैन जैसे कर्मठ, लम्बे समय से शोधरत एवं विचारक व्यक्ति के द्वारा ही संभव है।

मैं आशा करता हूँ कि इस पुस्तक की सामग्री, शोधार्थियों, विद्वानों, छात्रों एवं सामान्य जिज्ञासुओं के लिए उपादेय एवं प्रेरणादायक सिद्ध होगी। मैं श्री जैन के इस अथक प्रयास के लिए उन्हें नमन करता हूँ।

दिनांक – २७ जनवरी, १९९७

राधारमण दास
कुलपति
जीवाजी विश्वविद्यालय
ग्वालियर –४७४ ०११

भूमिका

तीर्थक्षेत्र हमारी श्रद्धा, आस्था, विश्वास, धर्माराधना, धर्म साधना और संस्कृति के आधार हैं। विशेषत: भारत जैसे धर्म प्रधान देश में तीर्थों के बिना जीवन की कल्पना ही कठिन है। हम सभी अनन्तानन्त काल से इस संसार-सागर में परिभ्रमण कर रहे हैं। संसार का प्रत्येक प्राणी दुखी है, वह सुख चाहता है, इसी सुख का मार्ग दिखाने के लिये विभिन्न धर्मो, दर्शनों का उदय हुआ। जैन धर्म के अनुसार चौबीस तीर्थंकर हुए जिन्होंने अपने अमृतमय उपदेश से अनेकानेक भव्य जीवों को कल्याण-पथ का पथिक बनाया। तीर्थंकर शब्द की व्युत्पत्ति है तीर्थं करोति इति तीर्थङ्कर:'। स्वयं संसार-सागर को पार करने तथा दूसरों को पार कराने वाले महापुरूष तीर्थंकर कहलाते हैं। तीर्थ का अर्थ है घाट अर्थात् ऐसा घाट=स्थान=किनारा जहां से संसार-सागर से पार हुआ जा सके। तीर्थंकरों ने ही अहिंसा मूलक धर्म/संस्कृति की ज्योति को प्रकाशमान किया अत: वे पूजनीय, वंदनीय और अर्चनीय हैं।

तीर्थकरों की इस कल्याणमयी महिमा का गुणगान करने के लिये और उनके इस कल्याणकारक अवदान को चिरस्थायी बनाने के लिये हमने उन सभी स्थानों को तीर्थ कहा जहां तीर्थकर गर्भ में आये, वह स्थान हमारे लिये पूज्य हो गया, जहां उन्होंने जन्म लिया, वह स्थान पवित्र बन गया, जहां उन्होंने तप की अग्नि से कर्मों का दहन किया, वह स्थान पावन बन गया, जहां उन्हें बोधि=ज्ञान की प्राप्ति हुई, उस स्थान की वन्दना हमारे जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य बन गया जहां से उन्होंने मोक्ष लक्ष्मी का वरण किया। संक्षेप में जहां भी तीर्थकरों के पंचकल्याणक हुए वह स्थान तीर्थ कहलाया। वह स्थान भी हमारे लिये पूज्य है जहां से किसी पवित्र आत्मा ने अपने कर्मो का नाश कर मोक्ष प्राप्त किया।

जिस पवित्र भूमि के किसी विशिष्ट अतिशय ने श्रद्धालुओं को अधिक श्रद्धायुक्त बनाया या धर्म प्रभावना के चमत्कारों से चमत्कृत होकर जन जन श्रद्धालु बन गये वह भूमि भी कम पवित्र नहीं होती, इसीलिये ऐसी भूमि अतिशय क्षेत्र के रूप में हमारी श्रद्धा का स्थान बनी।

ऐसे परम पवित्र स्थानों में कुछ तो ऐतिहासिक काल के पूर्व से ही पूजे जाते रहे हैं, जिनका वर्णन आगम ग्रन्थों/पुराणों/कथाओं में मिलता है ''सोनागिर'ऐसा ही सिद्धक्षेत्र है। जहाँ से नंग-अनंग कुमार सहित साढे पाँच करोड मुनिराजों ने निर्वाण प्राप्त किया था। निर्वाण काण्ड में उल्लेख आता है कि-

''णंगाणंगकुमारा विक्खा पंचद्धकोडिरिसि सहिया।
सुवण्णगिरिमत्थयत्थे णिव्वाण गया णमो तेसिं॥''

अर्थात् सुवर्णगिरी से नंग–अनंग कुमार सहित साढ़े पाँच करोड़ मुनि निर्वाण गये उनको हमारा नमस्कार हो। अष्टम तीर्थकर चन्द्रप्रभु भगवान का दिव्य विभूतिमय समवशरण भी इस पवित्र पावन धाम पर आया था, इसीलिये यह पवित्र भूमि जैनों की ही नहीं जन–जन की पूजनीय बन गई है। प्राचीन जैन साहित्य में वर्तमान सोनागिर के लिये श्रमणगिरि, स्वर्णगिरि, सोनागिर आदि शब्द मिलते हैं।

व्यवसाय से वकील, काय से कृश और इतिहास जैसे नीरस विषय को सरसता के कैपसूल में रखकर जन–जन को जैन साहित्य/संस्कृति/धर्म/समाज की ऐतिहासिकता का बोध कराने वाले मेरे ही नहीं हम सभी के ज्ञानवृद्ध और वयोवृद्ध विद्वान श्री रामजीत जैन एडवोकेट ने जिस श्रद्धा/लगन/भावना से 'सोनागिर वैभव' जैसे श्रमसाध्य, देखने में पुस्तक पर विषय वस्तु में ग्रन्थ का निर्माण किया है वह अभिवन्दनीय ही नहीं, अभिनन्दनीय ही नहीं अपितु अनुकरणीय भी है।

श्री जैन ने श्रमणगिरि, स्वर्णगिरि सोनागिर आदि नामों की ऐतिहासिकता पर ऐतिहासिक सन्दर्भो/कथाओं के माध्यम से प्रकाश डाला है। क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति क्या है, उस पर कितने मंदिर, जिनबिम्ब, धर्मशालायें है। क्या क्या सुविधायें हैं। यह सब लिखकर उन्होंने इस क्षेत्र की यात्रा करने वालों की यात्रा सुगम बना दी है। सभी मंदिरों का विस्तृत परिचय भी दिया है। वहां के भट्टारकों की परम्परा, जैन संग्रहालय, स्याद्वाद विश्वविद्यालय आदि का परिचय भी इस कृति में दिया गया है। यदि उन. । इस कृति को पढकर क्षेत्र के दर्शन की भावना बने तो श्री जैन का श्रम सार्थक होगा।

ऐतिहासिक दृष्टि से शोध करने वालों को श्री जैन ने बहुमूल्य उपहार दिया है। उन्होंने कुछ शिलालेखों मूर्तिलेखों का मूल पाठ देकर अनुसंधाताओं को घर बैठे ही वह सब दे दिया जिसके लिये उन्हें जानलेवा दौडधूप करनी पड़ती है।

हमारे देश के विभिन्न भागों में फैले हुए कल्याणक क्षेत्रों/तीर्थ क्षेत्रों/ अतिशय क्षेत्रों के मंत्रियों/अध्यक्षों से यह निवेदन है कि अपने अपने क्षेत्र का ऐसा ही इतिहास तैयार करायें जिससे दिगम्बर जैन क्षेत्रों का क्रमबद्ध इतिहास तैयार हो सके।

मैं आशा करती हूँ कि जिस प्रकार श्री रामजीत जैन एडवोकेट की अन्य कृतियों यथा 'गोपाचल इतिहास', 'खरौआ इतिहास', 'जैसवाल इतिहास', गोलालारे इतिहास', आदि ग्रन्थों का विद्वत समाज में समादर हुआ है उसी प्रकार 'सोनागिर वैभव' का भी स्वागत होगा। श्री जैन की लेखनी इसी प्रकार अविराम जैन साहित्य/धर्म/संस्कृति की सेवा करती रहे ऐसी भावना है।

(डॉ.) श्रीमती ज्योति जैन
एम.ए.पी.एच.डी.
W/o डॉ. कपूरचन्द जैन
अध्यक्ष संस्कृत विभाग
श्री कुन्दकुन्द जैन पी.जी. महाविद्यालय
खतौली २५१२०१ (उ.प्र.)
फोन : ०१३१६-७३३३९

● प्रकाशक परिचय ●

लगभग ४५०-५०० वर्ष पूर्व की बात है वर्तमान उत्तर प्रदेश के आगरा जिले की तहसील फतेहाबाद में दो गाँव कुर्रा तथा चित्तरपुर २ किलो मीटर के फासले पर बसे हुए थे। कालान्तर में यह दूरी घटकर दोनों एक मिलकर कुर्रा चित्तरपुर कहलाने लगे। यह ग्राम आगरा से २० किलो मीटर की दूरी पर है। इसका अस्तित्व मुगल सम्राट के राज्यकाल में पाया जाता है। कविवर बनारसीदासजी भी यहाँ कुछ समय रहे हैं। यह ग्राम इतिहासकार डा. ईश्वरीप्रसाद, विद्वान लेखक पं. बलभद्र जैन एवं इस पुस्तक के लेखक की जन्म भूमि है।

वि.सं १६०९ से वि सं १९०० तक यहाँ जैन समाज की काफी संख्या रही विशेषकर वरहिया (वरैया) समाज की संख्या अधिक थी। वरहिया समाज में ही प्रसिद्ध, समृद्धिशाली परिवार भण्डारी गोत्र का था जो पंसारी घराना के नाम से प्रसिद्ध है और यह घराना भी लगभग ४५० वर्ष से अवस्थित है।

इसी भण्डारी परिवार का एक मकान आगरा के मानपाडा मौहल्ले में है। यह मकान पूर्व में गुरुवर्य पं. गोपालदास जी वरैया का था जो अब भण्डारी परिवार की सम्पत्ति है। इस भण्डारी परिवार में ही दिनांक १ अक्टूबर सन् १९३९ ई. को आगरा में श्रीयुत चन्द्रभान जैन का जन्म हुआ। पिता का नाम स्व. श्री होतीलाल जैन एवं माता स्व. श्रीमती इमरती देवी जैन थी। शिक्षा एम.ए (अर्थशास्त्र) बी. कॉम सेन्ट जान्र कालेज, आगरा से है। चन्द्रभान जैन में सादगी, निराभिमानता एवं कार्य में लगनशीलता का गुण अपने बाबा स्व. श्री करनसिंह जैन एवं दादी स्व. श्रीमती रौनादेवी की देन है। वहीं परिश्रम की प्रेरणा पिता स्व. श्री होतीलाल जैन की है।

भण्डारी परिवार प्रारम्भ से ही समृद्धिशाली घराना रहा है तथा धार्मिक जागरूगता इसमे कूट-कूट कर भरी है। पहले एक जैन मंदिर एक धर्मशालानुमा स्थान पर था। इसके बाद पार्श्व में ही नवीन मंदिर समाज के सहयोग से निर्माण कराया। इस मंदिर के बाहरी भाग में पत्थर की नक्कासी अत्यंत सुन्दर है। आसपास के १०० किलो मीटर के घेरे मे इस प्रकार का पत्थर का काम देखने को नहीं मिलता यहाँ इस मंदिर एव वेदी का चित्र दिया गया है।

यह मंदिर लगभग २५० वर्ष पुराना है। बैसाख कृष्णा ७ रविवार सम्वत् १९६० में इस परिवार के श्री सुन्दरलाल, ख्यालीराम, रघुनाथप्रसाद व काशीराम जी की गिरनार यात्रा के उपलक्ष में बाबा बल्देवदास जी ने तेरह द्वीप विधान का पाँच दिन का आयोजन किया था एव नगर भोज किया था। सन् १९५१ में इस परिवार के श्री करनसिंह सुखलाल ने शिखर पर कलश चढाये। सन्१९९२,
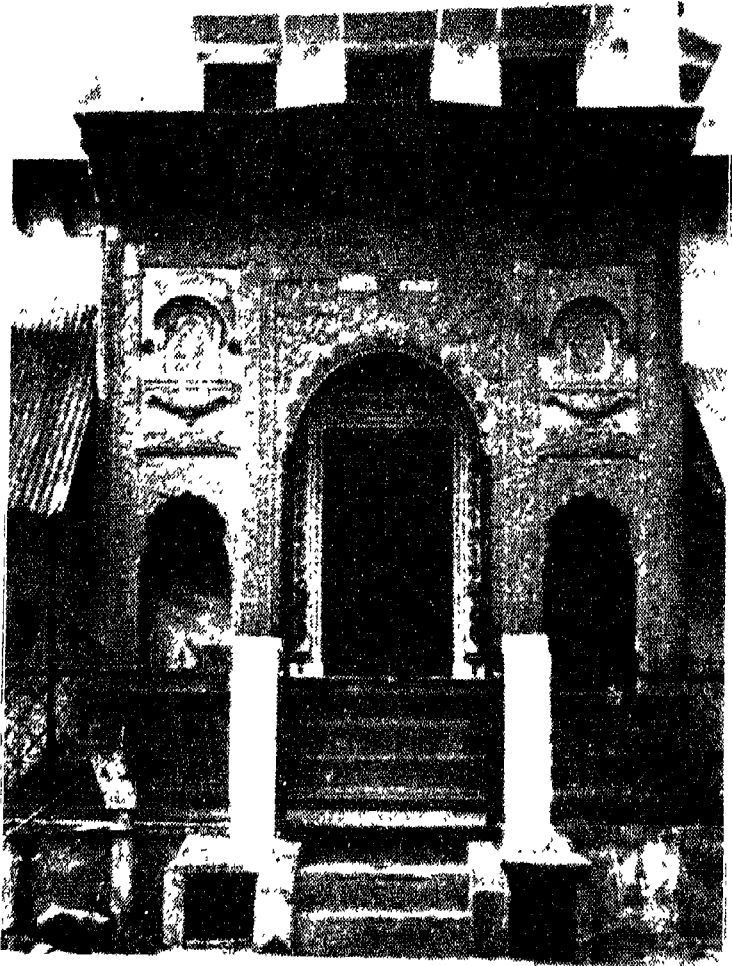
चन्द्रभान जैन
२५ विभव नगर, आगरा

नवम्बर में श्री डालचन्द गयाप्रसाद जैन सुपुत्र स्व. श्री भगवतीप्रसाद जैन ने सिद्धचक्र मंडल विधान कराया। इस परिवार के श्री बल्देवदास जी जिनका सन्दर्भ ऊपर आया है, बडे अध्यात्म प्रेमी थे। उन्होंने स्वयं के पठनार्थ ग्रन्थों की प्रतिलिपि कराई थी उनमें से चार पुस्तकें अभी भी श्री मंदिर जी में विद्यमान है।

परिवार की धार्मिक प्रवृत्ति का प्रभाव श्री युत चन्द्रभान पर पूर्ण रूपेण है।मंदिर में होने वाले प्रत्येक धार्मिक समारोहों में सम्मिलित होना एवं यथा शक्ति मंदिर में धन लगाना एक कार्यक्रम बना लिया है तथा पर्यूषण पर्व में चतुर्दशी को अवश्य गाँव आकर मंदिर जी की प्रभावना हेतु कार्य करते रहना है।

एक बात उल्लेखनीय यह है कि इस परिवार के कुछ लोग यत्र तत्र ग्वालियर, जौरा, इन्दरगढ आदि स्थानों में व्यवसायिक दृष्टि से एवं नौकरी हेतु चले गये हैं। श्रीयुत चन्द्रभान के मन में एक भाव आया कि परिवार के सभी सदस्यों को सम्मिलित करके एक सिद्ध चक्र मण्डल विधान का आयोजन कराया जाये। यथा योग्य शक्तिअनुसार प्रत्येक परिवार सहयोग दे। योजना प्रारम्भ की गई सभी परिवारजनों ने यथा योग्य तन, मन, धन से सहयोग दिया और सन् १९९५ में विधान सम्पन्न हुआ। आयोजन अत्यन्त सफल रहा।

श्रीयुत चन्द्रभान जैन समाज के विकास एवं आयोजनों में सदैव सहयोग देते रहे हैं। फरवरी सन् १९९१ में सिद्धक्षेत्र सोनागिर श्री दि. जैन वरैया समाज की ओर से पंचकल्याणक एवं गजरथ महोत्सव का आयोजन किया गया था, उसके स्वागताध्यक्ष रहे एवं सहयोग दिया।

वरैया समाज के छात्रों को प्रोत्साहित करने हेतु अपने स्व. पिता श्री होतीलाल जैन की स्मृति में पुरस्कार योजना प्रारंभ की जिसके अन्तर्गत समस्त स्कूलों व विद्यालयों के प्रथम व द्वितीयश्रेणी के छात्रों को पुरस्कार दिया जाता है समय समय पर आवश्यकतानुसार परिवार के सदस्यों की सहायता गुप्तरूप से करते रहना सहज स्वभाव है।

यश, मान, प्रतिष्ठा से दूर गुप्त रूप से सहायता करना एक स्वाभाविक मनोवृत्ति है। परिणाम स्वरूप मैंने जब इस सोनागिर वैभव पुस्तक के प्रकाशन के सम्बंध में चर्चा की तो तुरंत स्वीकृति प्रदान की। स्मरण रहे लेखक भी इस परिवार का सदस्य है और प्रकाशक उसका भतीजा है। परिवार का वंश वृक्ष बहुत बडा होने से प्रकाशक से सम्बंधित वंश वृक्ष इस प्रकार है :-

तुलसीराम–हीरामन–कृपाराम–गंगाराम–नंदलाल–धनीराम
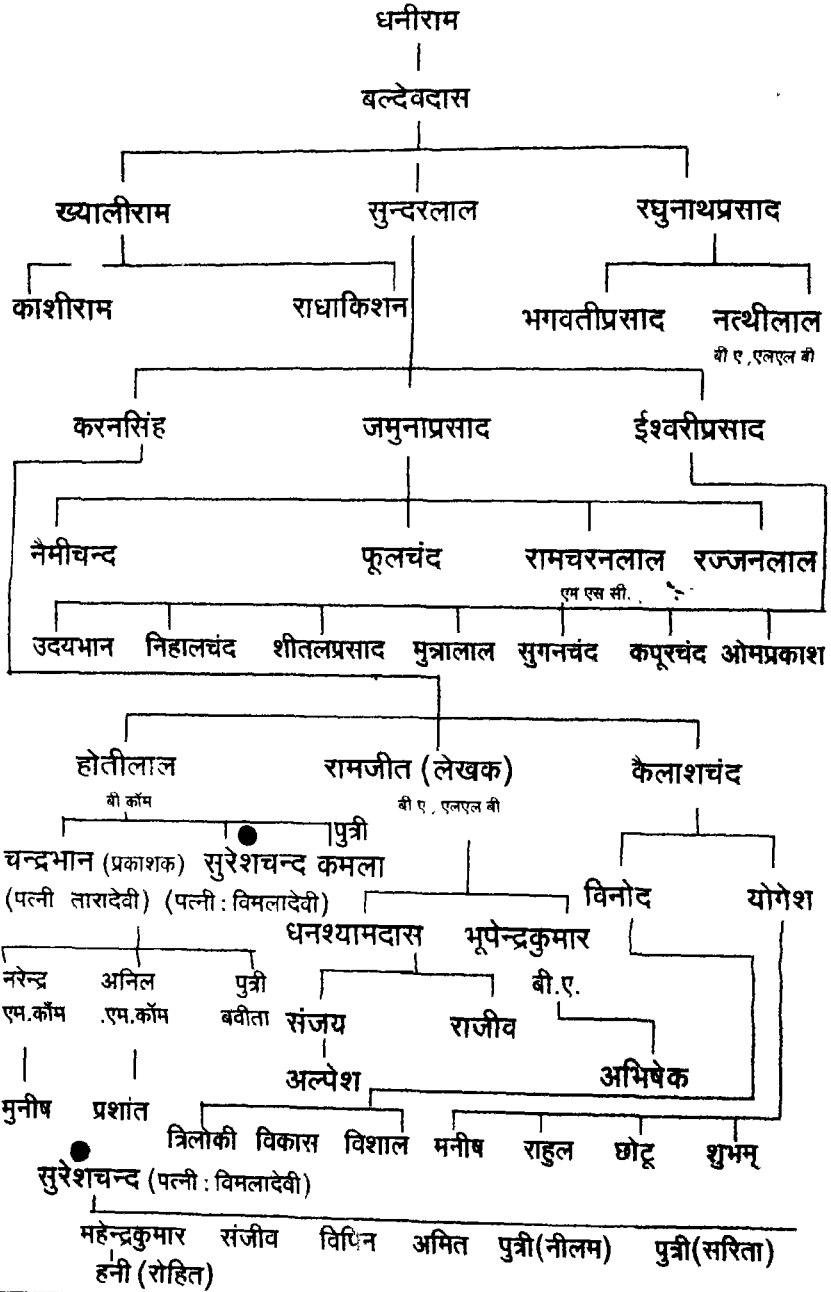
दो शब्द

धन्य है बुन्देलखण्ड की माटी जो अपने आंचल में अनेक सिद्धक्षेत्रों, तीर्थक्षेत्रों एवं अतिशयक्षेत्रों को समेटे हुए है। सिद्ध पुरुषों एवं महापुरुषों के चरण जिस जगह पडे एवं मानवता का संदेश जहां से दूरदूर तक फैला, ऐसी पवित्र भूमि चिर वंदनीय है। ऐसे ही बुन्देलखण्ड प्रान्त में ग्वालियर-झांसी के मध्य किसी भी वाहन से यात्रा करने पर कई किलोमीटर की दूरी से ही सुरम्य पहाडियों पर सुशोभित भव्य जिनालय जन-जन को बरबस ही अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं। भगवान श्री चन्द्रप्रभु के समवशरण के आगमन से इस स्थान का कणकण पूज्य हो गया नंगकुमार अनंगकुमार आदि साढे पाँच कोटि मुनियों के निर्वाण से इस स्थल को 'सिद्धक्षेत्र' का गौरव प्राप्त हुआ। चतुर्थ काल से ही पूजित इस भूमि पर जिस धर्म गंगा का अवतरण हुआ उसकी अविरल धारा वर्तमान में भी बह रही है।

सिद्धक्षेत्र सोनागिर की प्राचीनता,भगवान श्री चन्द्रप्रभु का समवशरण जिनालयों एवं छत्रियों का इतिहास,भट्टारक गद्दियों का काल आदि से संबंधित अनेक प्रश्न जन मानस में उठते है एवं अधिकांश अनुत्तरित ही रह जाते है क्योंकि एक जगह संपूर्ण जानकारी उपलब्ध नहीं हो पाती है। कुछ महानुभावों ने तो इस क्षेत्र की प्राचीनता पर ही प्रश्न चिन्ह लगा दिया था। यह सर्व ज्ञात है कि इस प्रकार के प्रश्न चिन्हों से धर्म,क्षेत्र एवं समाज को कितनी हानि उठाना पडती है। ऐसे समय लेखक ने इस कृति की रचना कर निश्चित ही महत्वपूर्ण एवं अनुकरणीय कार्य किया है। क्षेत्र की प्राचीनता को सप्रमाण प्रस्तुत किया गया है। जिनालयों की विस्तृत जानकारी,श्री जी की प्रतिमाओं की अवगाहना,वेदिकाओं एवं प्रतिष्ठाचार्यों का सुन्दर ढंग से वर्णन किया है। प्राचीन भट्टारक गद्दियों के अधिष्ठाताओं से लेकर वर्तमान में चल रही विभिन्न संस्थाओं तक की क्रमबार जानकारी इस कृति में हैं। क्षेत्र से जुडी हुई घटनाओ एवं कथानकों का भी उल्लेख किया गया है। यह सब लेखक के कठिन परिश्रम एवं उत्कृष्ट शोध कार्य का परिचायक है।

श्री रामजीत जैन, एडवोकेट बधाई एवं धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने ऐसी अनुपम कृति की रचना कर समाज पर उपकार किया है। आशा है कि भविष्य में अन्य तीर्थों की विस्तृत जानकारी उपलब्ध होगी एवं ऐसी कृतियों की रचना की जावेगी।

डॉ. अशोक जैन (उपाचार्य)
वानस्पतिकी अध्ययनशाला
जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर

● सम्मतियाँ ●

''सोनागिर वैभव'' पुस्तक एक शोधपूर्ण एवं इतिहास की जुडती कडियॉं हैं। सोनागिर क्षेत्र अति प्राचीन है इस पर लेखक ने सुन्दर प्रकाश डाला है। पाठकों की उत्सुकता का समाधान एवं शोधार्थियों को उत्कृष्ट शोध सामग्री प्रदान की गई है।

लालमणि प्रसाद जैन 'मणि'
उपाध्यक्ष
श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन
(धर्मसंरक्षिणी) महासभा, लखनऊ)

सिद्धक्षेत्र सोनागिर के संबंध में विस्तृत विवरण देते हुए ''सोनागिर वैभव'' के नाम से प्रकाशित हो रही पुस्तक वास्तव में एक अभूतपूर्व रचना है और लेखक ने सभी मंदिर व धर्मशालाओं का विवरण देते हुये इस सिद्धक्षेत्र के महत्व पर प्रकाश डाला है जो प्रशंसनीय कार्य है व इसकी अत्याधिक आवश्यकता थी जिसकी कमी को पूरा किया गया है। वास्तव मे सम्मेद शिखर के बाद सोनागिर जी एक पूज्यनीय वन्दनीय सिद्धक्षेत्र है। लेखक का यह कृत सराहनीय है।

निर्मलकुमार जन, एडवोकेट
अध्यक्ष श्री वीर शिक्षा समिति, लश्कर
उपाध्यक्ष श्री सिद्धक्षेत्र सोनागिर संरक्षिणी कमेटी
सोनागिर

I am glad to go thhrough the book published by you on "Sonagir Tirth Kshetra". I find that the book published by you will be very useful for Jain Samaj as it fulfils the expectations of pilgrims.

SATISH AJMERA

''सोनागिर वैभव'' में लेखक महोदय ने गागर में सागर भरने का प्रयास किया है। सोनागिर सिद्धक्षेत्र जो एक प्राचीन क्षेत्र है इस पर विस्तृत विवरण देकर एक बहुत बडी कमी को पूरा किया है। इसके लिए आदरणीय वकील सा. बधाई एवं धन्यवाद के पात्र है।

धन्यवाद !

नरेन्द्र जैन 'सोनू'
पूर्व महामंत्री
अ.भा.श्री दिग. जैन वरैया महासभा

● डॉ. अशोक जैन एक व्यक्तित्व ●

जब ''सोनागिर वैभव'' का लेखन समाप्त हुआ तो एक विचार मन में आया कि इस बीच में एक ऐसे व्यक्ति का परिचय सम्मिलित किया जावे कि जिसका व्यक्तित्व इस वैभव में समा जावे। तब एक नाम उभरा मस्तिष्क में 'डॉ. अशोक जैन'। आप सोनागिर क्षेत्र को समर्पित, निष्ठावान एवं श्रद्धालु व्यक्ति है। आप ने सोनागिर पर्वतराज पर उत्पन्न एवं प्राप्त होने वाली वनस्पतियों पर शोध किया है तथा उनकी संख्या एवं गुणों पर प्रकाश डाला है। यही नहीं आपने शोध पुस्तिकाओं में से 'स्वर्णगिरि का भू-गर्भ शास्त्रीय' अवलोकन कर इसकी प्राचीनता को प्रमाणित करने में सहयोग किया है। ऐसे व्यक्तित्व का संक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जा रहा है।

नाम	:	डॉ. अशोक कुमार जैन
जन्म तिथि	:	७ जनवरी १९५४
माता का नाम	:	स्व. श्रीमती कमलादेवी जैन
पिता		श्री शान्तिलाल जैन
धर्मपत्नी	·	श्रीमती सुधा देवी जैन
निवासी	:	अशोक नगर, जिला-गुना (म.प्र.)
वर्तमान पद	:	उपाचार्य, वानस्पतिकी विभाग जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर
शिक्षा	:	एम.एस सी., पी एच.डी. एल-एल.बी., डिप्लोमा इन जर्मन
शोध कार्य	.	२२ वर्ष से संलग्न; लगभग ४० शोध पत्र राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित।
शैक्षणिक भ्रमण	.	कनाडा, अमेरिका, इंग्लैण्ड, थाइलैण्ड, मलेशिया, कीनिया आदि देशों में वनस्पति शास्त्र से संबंधित विषयों पर व्याख्यान
अन्तराष्ट्रीय सम्मान	:	(१) पी.एच ग्रेगरी अवार्ड (२) अमेरिकन वायोग्राफिकल इन्स्टीट्यूट अमेरिका का स्वर्ण पदक
शोध परियोजनायें		भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद नई दिल्ली द्वारा 'वायु जैविक तत्वों पर शोध परियोजना' सफलतापूर्वक संचालित। वर्तमान में पर्यावरण एव वन मत्रालय, नई दिल्ली द्वारा प्रदत्त शोध परियोजना के अन्तर्गत विभिन्न क्षेत्रों के वायु जैविक तत्वों के शोध कार्य में संलग्न।

शोध निर्देशन	:	मार्ग दर्शन में चार पी एच.डी. एवं १२ शोधार्थी एम.फिल उपाधियों से विभूषित।
मानद फेलोशिप	:	(१) भारतीय वानस्पतिकी सोसायटी (२) भारतीय इथनोबोटेनिकल सोसायटी (३) सोसायटी ऑफ बायोनेचुरेलिस्ट
पुस्तकें प्रकाशित	:	(१) पादप जगत का परिचय प्रकाशक : म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी (२) इन्वायरोन्मेंट एण्ड एरोबायलॉजी
प्रकाशक	:	रिसर्चको पीरिओडिकल्स हाउस्टन अमेरिका
धार्मिक रुचि	:	प्रारंभ से ही सूक्ष्म जीवों की गतिविधियाँ एवं जैन धर्म में वर्णित आहार विहार के मध्य संबंधों पर वैज्ञानिक शोध। वनस्पतियों में कषायें, लेश्यायें एवं आभामण्डल पर वैज्ञानिक शोध सराक जनजाति के अर्थिक विकास पर नैरोबी (कीनिया) में अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में विशेष व्याख्यान (१९९६) जैन धर्म की वैज्ञानिकता के विभिन्न पहलुओं पर शोध में रत। विभिन्न धार्मिक पत्र-पत्रिकाओं में समय समय पर लेख प्रकाशित। बैंकाक में जैन मूर्तियों के क्षरण एवं संरक्षण पर विशेष व्याख्यान (१९९५) ऋषभदेव प्रतिष्ठान के संयुक्त महासचिव। शाकाहार के प्रचार प्रसार में सक्रिय।

संकलन कर्ता :-
रामजीत जैन, एडवोकेट
टकसाल गली, दाना ओली लश्कर, ग्वालियर - ४७४ ००१

● लेखक द्वारा आभार ●

तीर्थ वन्दना, गुरुदर्शन व आर्शीवचन के एक साथ मिलने का सौभाग्य मिला सन् १९९६ के पर्यूषण पर्व पर लेखक को। लेखक अपने संबंधियों एवं पुत्री आशा जैन एवं दामाद लक्ष्मणप्रसाद जैन तथा पौत्र अभिषेक जैन के साथ चम्पापुर तीर्थ गया। वहाँ पर आचार्य श्री १०८ भरतसागर जी महाराज ससंघ विराजमान थे। मैंने आचार्य श्री से ''सोनागिर वैभव'' पाण्डुलिपि पर आर्शीवचन हेतु निवेदन किया, जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर आर्शीवचन लिखकर दिये। ग्वालियर में ''पुष्पवार्ता'' के सम्पादक श्री प्रमोदकुमार जैन मिले। वे आचार्य श्री १०८ पुष्पदंत सागर जी महाराज के पास जा रहे थे। मैंने अपनी पाण्डुलिपि देकर आचार्य श्री से आर्शीवचन लिखवाने के लिये कहा। आचार्य श्री ने कृपावंत होकर आर्शीवचन भेजे। दोनों आचार्य श्री की कृपा मुझ पर रही। आचार्य श्री के चरणों में शतबार नमोस्तु।

घटनाक्रम इस प्रकार है कि लगभग चार वर्ष पूर्व भोपाल से श्री राजमल जी पवैया ने एक पत्र भेजकर मुझे कहा कि दूरदर्शन के लोग सोनागिर पर जानकारी चाहते हैं। उस समय मेरे पास कोई जानकारी न होने से यत्र तत्र एकत्रित कर कुछ सामग्री भेज दी। परन्तु मन मे खिन्नता थी। अतः स्वयं कुछ लिखने के प्रयास में जैन, जैनेत्तर एवं दतिया के विद्वानों को पत्र लिखे परन्तु संतोषजनक हल नहीं निकला। मन उद्विग्न था। एक दिन श्री भगवानदास शर्मा, एडवोकेट, नया बाजार, निम्बालकर की गोठ, लश्कर से चर्चा हुई क्योंकि मेरी लेखन पुस्तकों में उनके सहयोग की झलक किसी न किसी रूप में रही है। उन्होंने ''दतिया: उदभव एवं विकास'' पुस्तक का जिक्र किया और तलाश कर देने को कहा। परन्तु वह पुस्तक मुझे मेरे सहयोगी मित्र श्री एच.बी. माहेश्वरी 'जसल' चेतकपुरी, ग्वालियर से मिल गई। उसका अध्ययन करने के पश्चात् उस में दिये गये सन्दर्भ की पुस्तको के लिये ''ज्ञान मन्दिर'' पाटनकर बाजार, लश्कर के श्री नरेन्द्रकुमार गुप्ता से काफी सहयोग मिला। इतिहास की कडियाँ जुडती चली गई। सन्दर्भ पुस्तक सूची मे लिखी हुई पुस्तको का अध्ययन कर पाण्डुलिपि तयार की। पहले एक बडे आकार में पुस्तक तयार हुई परन्तु प्रकाशन व्यय अधिक होने से आकार छोटा किया गया।

पुस्तक के विषय को सुन्दर बनाने मे डॉ. अशोक जैन, उपाचार्य वानस्पतिकी अध्ययन विभाग, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर का बहुत सहयोग रहा। श्री

जैन ने पुस्तक की प्रस्तावना लिखने हेतु जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर के कुलपति महोदय डॉ. आर. आर. दास से स्वीकृति प्राप्त की।

कार्य विशेष के लिये श्री भगवतीप्रसाद सिंहल एवं नोटरी, रवि नगर, ग्वालियर का सदैव आभारी रहूँगा क्योकि विश्वविद्यालय में डॉ. अशोक जैन एवं कुलपति महोदय से भेंट करने एवं प्रस्तावना की जानकारी लेते रहने एवं प्रस्तावना लिख जाने पर उसे लाने में पूर्ण सहयोग किया। इससे पहले भी 'ग्वालियर गौरव गोपाचल' पुस्तक के लिखते समय भी विश्वविद्यालय से संबंधित कार्य कराये।

अपने व्यस्ततम कार्यक्रम में एवं पदभार के कार्यों में व्यस्त रहने पर भी डॉ. आर.आर. दास कुलपति महोदय ने प्रस्तावना लिखी तदर्थ मैं उनका बहुत बहुत आभारी हूँ।

कई वर्ष पूर्व के संक्षिप्त अल्प परिचय में (डॉ.) श्रीमती ज्योति जैन 'खतोली' (उ.प्र.) ने इस पुस्तक की भूमिका लिखी उसके लिए मैं उन्हें हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

श्री मानिकचन्द गंगवाल, एडवोकेट, लश्कर, जो सोनागिर कमेटी के निरंतर ३५ वर्षों तक मंत्री रहे उन्होंने भी महत्वपूर्ण जानकारी दी। श्री तेजकुमार गंगवाल, सराफा बाजार, लश्कर ने लेखन में प्रोत्साहन देकर पुस्तक के प्रकाशन में भी प्रयत्न किया। मैं दोनों महानुभावों का आभारी हूँ।

पुस्तक की उपयोगिता सम्मति के लिए श्री लालमणिप्रसाद जैन, श्री निर्मलकुमार जैन, एडवोकेट, श्री सतीश अजमेरा एवं श्री नरेन्द्र जैन 'सोनू' का आभारी हूँ तथा डॉ. अशोक जैन ने दो शब्द लिखकर दिये इसके लिए में उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

डॉ. एच.बी. माहेश्वरी 'जैसल' का तो मैं बहुत आभारी हूँ जिन्होंने स्वयं सोनागिर स्थल पर जा कर उस मार्ग का नक्शा बनाया जो इस पुस्तक के (मुख्य पृष्ठ कवर पेज) पर छपा है इसके अलावा कुछ प्राचीन चित्र दिये तथा समय समय पर मार्गदर्शन भी किया।

श्री निर्मलकुमार जैन, एडवोकेट का तो सदैव आभारी रहूँगा जिन्होंने मेरी लिखी कई पुस्तकों को छपवाने हेतु प्रकाशकों की व्यवस्था में सहयोग दिया एवं इस पुस्तक के छपवाने हेतु प्रयत्न किया। श्री मानिकचंद जैन, एडवोकेट, नया बाजार, लश्कर एवं श्री नेमीचन्द जैन एडवोकेट, छत्री बाजार, लश्कर का भी मैं

बहुत आभारी हूँ जिन्होंने के उन निराशा भरे क्षणों में उत्साहित किया जबकि पुस्तक के प्रकाशन में एक कठिनाई महसूस हुई।

मैं उन सभी पुस्तक लेखकों का आभारी हूँ जिनकी पुस्तकों का आधार लेकर इस पुस्तक को लिखने में सहयोग मिला। लक्ष्मी फोटो स्टूडियों के.श्री गुप्ताजी का भी आभारी हूँ जिन्होंने सोनागिर जाकर प्रभावक फोटो लिये। श्री धर्मचंद जैन एवं कैलाशचंद जैन ने भी धूपभरे वातावरण में सोनागिर के फोटो खिचवानें में सहायता की।

श्री विवेक जैन ने कम्प्युटर कम्पोजिंग बडे लगन से किया तथा श्री अनिल माहेश्वरी ने पुस्तक को छापा उनके सहयोग का मैं आभार मानता हूँ इसके अलावा मैं उन समस्त सहयोगियों का बहुत-बहुत आभारी हूँ जिन्होंने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग किया।

रामजीत जैन, एडवोकेट
टकसाल गली, दानाओली
लश्कर, ग्वालियर - ४७४ ००१
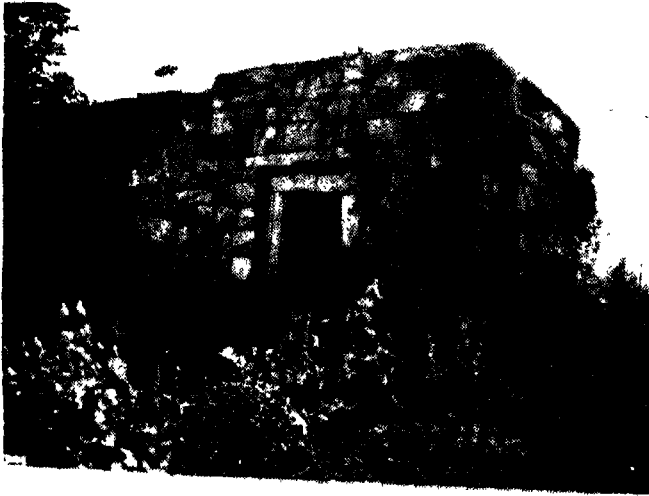
पर्वत के प्राचीन मंदिर नं. ५० के भीतर के प्राचीन खम्भों का दृश्य

१
卐 तीर्थ क्षेत्र 卐

भारतीय संस्कृति में तीर्थों का बडा महत्व है। प्रत्येक धर्म और सम्प्रदाय में तीर्थों का प्रचलन है। प्रत्येक धर्म के अनुयायी अपने तीर्थों की वन्दना यात्रा के लिये भक्ति-भाव से जाते हैं और आत्मशान्ति प्राप्त करते हैं। तीर्थ स्थान पवित्रता, शान्ति और कल्याण के धाम माने जाते हैं। जैन धर्म में तीर्थों का विशेष महत्व रहा है। इस धर्म के अनुयायी प्रति वर्ष श्रद्धाभाव से तीर्थों की यात्रा करते हैं। उनका विश्वास है कि तीर्थयात्रा से पुण्य संचय होता है और परम्परा से यह मुक्ति लाभ का कारण होती है। पूजा में कहा है -

'एक बार वन्दे जो कोई, ताहि नरक पशुगति नहिं होई।'

तीर्थ की परिभाषा -

तीर्थ शब्द का अर्थ है जो तिरादे या पार करादे। अथवा जो तिरने या पार हो जाने में सहायक हो, साधक हो। अत: जिस धर्म मार्ग के आश्रय से आत्मोन्नति करके, जन्म-मरण एवं दु:ख रुप संसार-सागर से मुक्ति प्राप्त की जा सके उसे धर्म तीर्थ कहते हैं और उस धर्म तीर्थ के प्रवर्त्तक, उद्धारक एवं व्यस्थापक 'तीर्थंकर' कहलाते हैं। यही भाव जिनसेन ने आदि पुराण में दर्शाया है - ''जो इस अपार संसार-समुद्र से पार करे उसे तीर्थ कहते हैं। ऐसा तीर्थ जिनेन्द्र भगवान का चरित्र ही हो सकता है। अत: उसके कथन को तीर्थाख्यान कहते हैं।'' इसमें जिनेन्द्र भगवान के चरित्र को तीर्थ कहा गया है।

आत्मंजयी तीर्थंकरों के आदर्श का अवलम्बन लेकर मोक्ष मार्ग की साधना करने वाले निष्परिग्रही साधु 'जंगम तीर्थ' कहलाते हैं। तीर्थंकरों एवं अन्य मोक्षगामी महामानवों के जीवन से सम्बन्धित स्थल 'स्थावर तीर्थ' कहलाते हैं।

क्षेत्र मंगल -

कुछ प्राचीन जैनाचार्यों ने स्थावर तीर्थों को क्षेत्र-मंगल की संज्ञा दी है। षट्खण्डागम (प्रथम खण्ड पृ.२८) में इसी आशय को प्रकट करते हुये बताया है कि जहाँ पर योगासन,वीरासन आदि आसनों से तद्नुकूल अनेक प्रकार के योगाभ्यास,जितेन्द्रियता आदि गुण प्राप्त किये गये हों ऐसे केवल ज्ञानोत्पत्ति क्षेत्र और निर्वाण क्षेत्र आदि को क्षेत्र-मंगल कहते हैं। इसके उदाहारण उर्ज्यन्त (गिरनार), चम्पा, पावा आदि नगर क्षेत्र हैं अथवा साढे तीन हाथ से लेकर पाँच

सौ पच्चीस धनुष तक के शरीर में स्थित और केवलज्ञानादि से व्याप्त आकाश प्रदेशों को क्षेत्र मंगल कहते हैं। क्षेत्र मंगल की यात्रा, वन्दना आदि को 'क्षेत्र पूजा' कहा है तथा उसका फल आत्मशुद्धि बताया है।

मूलत: पृथ्वी पूज्य या अपूज्य नहीं होती। उसमें महापुरूषों के संसर्ग से पूज्यता आती है। प्राय: आत्मकल्याण के राही शान्ति प्राप्ति की इच्छा से वनों में, नदी तटों पर, पहाड़ों की कन्दराओं, गुफाओं में एकान्त होकर आत्म ध्यान में लीन हो जाते थे – ऐसे तपस्वी जनों के शुभ परमाणु उस क्षेत्र के वातावरण में फैलकर उसे पवित्र कर देते थे। वहाँ परस्पर विरोधी जीवों के भी मन का भय और एक दूसरे के संहार की भावना न जाने कहाँ तिरोहित हो जाती थी। वे उस तपस्वी की पुण्य भावना की छाया में परस्पर किलोल करते हुये निर्भय होकर विहार करते थे।

इस प्रकार का चमत्कार तो तपस्वी, और ऋद्धिधारी मुनियों की तपोभूमि में देखने को मिलता है। जो उस तपोभूमि में जाता है वह संसार की आकुलताओं व व्याकुलताओं से कितना ही प्रभावित क्यों न हो, मुनियों की उस तपोभूमि में जाते ही उसे निराकुल शान्ति का अनुभव होने लगता है। जब तक वह उस तपोभूमि में रहता है, संसार की चिन्ताओं और आधि–व्याधियों से मुक्त रहता है।

जब तपस्वी और ऋद्धिधारी मुनियों का इतना प्रभाव होता है तो तीन लोक के स्वामी तीर्थंकर भगवान के प्रभाव का तो कहना ही क्या है। उनका प्रभाव तो अचिन्त्य और अलौकिक होगा ही, और है। तीर्थंकर प्रकृति की पुण्य वर्गणाएँ इतनी तेजस्वी और बलवती होती हैं कि जब तीर्थंकर माता के गर्भ में आते हैं, उससे छह माह पूर्व से ही वे देवों और इन्द्रों को तीर्थंकरों के चरणों का विनम्र बना देती हैं। इन्द्र छह माह पूर्व ही कुबेर को आज्ञा देता है–''भगवान त्रिलोकीनाथ के उपयुक्त निवास स्थान बनाओ। उनके आगमन के उपलक्ष में अभी से उनके जन्म पर्यन्त तक रत्न और स्वर्ण की वर्षा करो जिससे नगर में कोई निर्धन न रहे।''

ऐसे वे तीर्थंकर भगवान जिस नगर में जन्म लेते हैं, वह नगर उनकी चरण–रज से पवित्र हो जाता है, जहाँ वे दीक्षा लेते हैं उस स्थान का कण–कण उनके कठोर तप और आत्म–साधना से पवित्र हो जाता है। जिस स्थल पर उन्हें केवलज्ञान होता है वहीं देव समवशरण की रचना करते हैं। जहाँ भगवान की दिव्य ध्वनि प्रकट होकर धर्मचक्र का प्रवर्तन होता है और अनेक भव्य जीव उनके उपदेश से संयम धारण करते हैं वहाँ तो कल्याण का आकाश चुम्बी मानस्तम्भ ही गढ

जाता है, जो संसार के प्राणियों को आमन्त्रित करता है – 'आओ और अपना कल्याण करो।' इसी प्रकार जहाँ तीर्थंकर शेष अघातियाँ कर्मों का विनाश करके निरंजन परमात्म पद को प्राप्त करते हैं, वह तो शान्ति और कल्याण का ऐसा अजस्त्र स्त्रोत बन जाता है जहाँ भक्ति-भाव से जाने वालों को अनिर्वचनीय शान्ति अवश्य ही मिलती है और उनका कल्याण अवश्य ही होता है।

यह महात्म्य अन्य मुनियों के निर्वाण-स्थल का भी है। यह महात्म्य उस स्थान का नहीं है, वरन् उन तीर्थंकर प्रभु अथवा उन निष्काम तपस्वी मुनिराजों का है जिनके अन्तर में आत्यन्तिक शुद्धि प्रकट हुई, जिनकी आत्मा जन्म-मरण से मुक्त होकर सिद्ध अवस्था को प्राप्त हो चुकी है। इसलिये तो आचार्य शुभचन्द्र ने कहा है :-

सिद्धक्षेत्रे महातीर्थे पुराणपुरुषाश्रिते।
कल्याणकलिते पुण्ये ध्यानसिद्धः प्रजायते॥

भावार्थ – सिद्धक्षेत्र महान तीर्थ होते हैं। यहाँ पर महापुरुष का निर्वाण हुआ है। यह क्षेत्र कल्याणदायक एवं पुण्यवर्धक होता है। यहाँ आकर यदि ध्यान किया जावे तो ध्यान की सिद्धि हो जाती है। जिसकी ध्यानसिद्धि हो गयी, उसे आत्म-सिद्धि होने में विलम्ब नहीं लगता।

आचार्य वादीभसिंह सूरि कहते हैं कि सत्पुरुषों के सत्संग से अन्य स्थान भी पवित्र हो जाते हैं, फिर जहाँ उनका निवास रहा हो वे क्षेत्र तो पूज्य होंगे ही। जिस प्रकार पारसमणि के स्पर्श से लोहा स्वर्ण बन जाता है उसी प्रकार पावन तीर्थों के सेवन से आत्मा कर्म मल रहित निर्मल हो जाती है।

आचार्य बसुनन्दि भी कहते हैं कि तीर्थक्षेत्र के मार्ग की धूल इतनी पवित्र हो जाती है कि उसके संसर्ग से भक्तजन कर्म मल रहित हो जाते हैं। तीर्थयात्रा करने से भव भ्रमण समाप्त हो जाता है। तीर्थक्षेत्र पर द्रव्य लगाने से अक्षय सम्पदा प्राप्त होती है और वहाँ जाकर भगवान की शरण लेने से व्यक्ति स्वयं जगतपूज्य बन जाता है।

ये जैन तीर्थक्षेत्र भावतीर्थ के भौतिक वे पावन स्थल हैं जहाँ तीर्थंकर भगवानों का गर्भावतरण, जन्मोत्सव, अभिनिष्क्रमण, तपश्चरण, केवलज्ञान प्राप्ति, निर्वाणलाभ हुआ हो, पारणा विहार आदि हुए हों, जहाँ कोई विशिष्ट धार्मिक घटना घटी हो, कोई अतिशय हुआ हो या अतिशयपूर्ण जिनबिम्बादि हों, अथवा

जो प्राचीन सांस्कृतिक केन्द्र या प्रसिद्ध कलाधाम रहे हों। ये तीर्थ चिरकाल से जैन संस्कृति के केन्द्र तथा धार्मिक प्रेरणा के स्त्रोत रहते आये हैं। पुरातात्विक सर्वेक्षकों का मत है कि भारतवर्ष में किसी भी स्थान को केन्द्र मानकर यदि बारह मील अर्धव्यास का वृत्त खींचा जाय तो उसके भीतर एक या अधिक जिनायतन, जैन पवित्र स्थान, धार्मिक स्मरण या कलाकृतियों के भग्नावशेष अवश्य ही प्राप्त हो जाते हैं।

तीर्थों के भेद – आचार्य कुन्दकुन्द की प्राकृत निर्वाण काण्ड (भक्ति) में तीर्थ–भूमियों की भेद कल्पना से दिगम्बर समाज में तीन प्रकार के तीर्थक्षेत्र प्रचलित हैं – १. सिद्धक्षेत्र (निर्वाण क्षेत्र), २. कल्याणक क्षेत्र ३. अतिशय क्षेत्र।

१. सिद्धक्षेत्र (निर्वाण क्षेत्र) – वे क्षेत्र कहलाते हैं जहाँ तीर्थंकरों या किन्ही तपस्वी मुनिराज का निर्वाण हुआ हो।

२. कल्याणक क्षेत्र – जहाँ किसी तीर्थंकर का गर्भ, जन्म, दीक्षा (अभिनिष्क्रमण) और केवलज्ञान कल्याण हुआ हो।

३. अतिशय क्षेत्र – जहाँ किसी मन्दिर या मूर्ति में कोई चमत्कार दिखाई दे, वह अतिशय क्षेत्र कहलाता हे। जो निर्वाण–क्षेत्र अथवा कल्याणक–क्षेत्र नहीं हैं वे भी अतिशय क्षेत्र कहे जाते हैं।

सोनागिर सिद्धक्षेत्र – सोनागिर दिगम्बर जैन समाज का अति प्राचीन सिद्ध क्षेत्र है –

> णंगाणंग कुमारा कोटी पंचद्ध मुणिवरा सहिआ।
> सोनागिरि वरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं॥

– प्राकृत निर्वाण काण्ड

सोनागिर शिखर से नगं–अनंगकुमार सहित साढे पाँच कोटि मुनिराज मोक्ष पधारे।

हमारा आशय भी इस बुन्देलखण्ड के प्रसिद्ध दिग. जैन सिद्धक्षेत्र सोनागिरि से है। इसकी सम्पूर्ण जानकारी ही इस पुस्तक में अभीष्ट है। क्षेत्र दर्शन आपका, पाठकों का कल्याण करें।

२

卐 बुन्देलखण्ड का जैन तीर्थ 卐

भगवज्जिनसेन के 'आदिपुराण' के अनुसार भगवान ऋषभदेव की आज्ञा से इन्द्र ने भारत को बावन जनपदों में विभाजित किया था। उनमें चेदि और वत्स दो जनपद भी थे। इन्ही दो जनपदों को मिलाकर कालान्तर में मध्यप्रदेश बना। हिमालय और विन्ध्याचल के बीच का देश मध्यप्रदेश कहा गया है। यही भूमि भारतीय सांस्कृतिक जीवन की आधार शिला रही है। इस मध्य देश के चेदि वत्स जनपद में चेदि वर्तमान बुन्देलखण्ड और वत्स वर्तमान बघेलखण्ड समझा जाता है। चेदि यदुजन की शाखा थी तथा महाभारत काल में शिशुपाल यहाँ का शासक था और चन्देरी उसकी राजधानी थी। यहाँ वनों का विस्तार रहा है। विन्ध्याचल को महाभारत के वन्य पर्व में घोर अटवी, महारण्य, दारूण अटवी, महाघोरवन कहा गया है। यहाँ शबर आदि वन्य जातियाँ एवं साधु समाज आदि निवास करते थे। निषद देश के राजा नल एवं उसकी रानी दमयन्ती कठिन समय में चेदि नरेश सुबाहु की शरण में रहे थे।

वर्तमान में जिस भू-भाग से बुन्देलखण्ड का बोध होता है वह उत्तरप्रदेश के दक्षिणी भाग से लेकर उत्तरी भाग पर्यन्त, मालवा एवं बघेलखण्ड के मध्य स्थित है। इस क्षेत्र में जैन धर्म का प्रसार एवं प्रभाव चिरकाल से रहा है और वर्तमान में भी देखा जा सकता है। अनेक नगरों, कस्बों एवं ग्रामों में जैनियों की अच्छी बस्तियाँ, अनेकों जिन मन्दिर और जैन संस्थायें हैं। स्वभावत: इस प्रदेश में अनेको तीर्थस्थल एवं कला धाम विद्यमान हैं।

पौराणिक गाथाओं के अनुसार चेदि जनपद का राजा कसु था जिसे महाभारत में बसु नाम से जाना गया है। ऋग्वेद की ऋचाओं की दान स्तुति में इसकी प्रशंसा की गई है। भगवान महावीर के पश्चातवर्ती काल में कलिंग चक्रवर्ती सम्राट महामेघवाहन, खारवेल के पूर्वज भी मूलत: चेदिवंशी ही रहे प्रतीत होते हैं ईस्वी सन् के प्रथम सहस्त्राब्द के पूर्वार्ध में इस प्रदेश में कलचुरी वंशी नरेशों का अभ्युदय हुआ और यह प्रदेश दाहल मंडल कहलाया। दाहल नर्मदा का तटवर्ती भाग है। गुप्त काल में कालंजर इसकी राजधानी थी और महाभारत काल में शक्तिमती उसकी राजधानी थी। चेदि को इसकी राजधानी त्रिपुरा के कारण त्रिपुरी भी कहा जाता है। त्रिपुरी को वर्तमान में तेवर भी कहते हैं। तदनन्तर जब चन्देल वंशी नरेशों का अभ्युदय हुआ और चन्देलों के अवसान के बाद, १४ वीं शती के लगभग

यहाँ बुन्देले राजपूतों का उदय एवं विस्तार हुआ तब यह भू-भाग बुन्देलखण्ड कहलाने लगा। इसका अपरनाम विन्ध्यप्रदेश भी है।

पूरे बुन्देलखण्ड में १४ जिले हैं। इनमें पाँच जिले - हमीरपुर, बांदा, जालौन, झांसी और ललितपुर तो उत्तरप्रदेश राज्य में उसके दक्षिण भाग में अवस्थित हैं। शेष दतिया, गुना, टीकमगढ़, छतरपुर, पन्ना, सतना, दमोह, मंडला और सागर मध्यप्रदेश राज्य में उसकें उत्तरी भाग में स्थित है। पश्चिम के भिंड, मुरैना, ग्वालियर और शिवपुरी जिलों को तथा पूर्व में रीवा दक्षिण में जबलपुर जिले को भी कभी बुन्देलखण्ड में सम्मिलित कर लिया जाता है।

तीर्थक्षेत्रों के उपयुक्त बुन्देलखण्ड - वैसे तो इस जनपद की भूमि वीर प्रसूता है, परन्तु यहाँ की प्राकृतिक स्थिति सुरम्य शैल मालायें, नदियों के तट, कलकल निनाद करते झरने और वन-वीथियाँ भव्य ज्ञानी जनों को आत्म कल्याणार्थ तपस्या करने को और ध्यानमग्न होकर आत्म स्वभाव में विभोर होने को आकर्षित करती हैं। करोड़ों निर्ग्रन्थ मुनियों की आत्म-साधना इस प्रदेश के पर्वत शिखाओं पर गुफाओं एवं नदी तटों पर ध्यान करते हुए सफल हुई हैं। उन्हौंने केवलज्ञान प्रगट होने पर जगत के जीवों को कल्याणकारी और हितकारी उपदेश दिया और आयु कर्म पूर्ण होने पर यहीं से मुक्त हुए। इस प्रदेश में कुछ ऐसे स्थान हैं जहाँ मुनियों का निर्वाण हुआ और इसलिये वे सिद्ध क्षेत्र या निर्वाण क्षेत्र कहे जाते हैं। ऐसे ही पवित्र स्थानों में एक सिद्धक्षेत्र है बुन्देलखण्ड का प्रसिद्ध तीर्थ क्षेत्र सोनागिर।

धार्मिक स्थिति - प्राचीन चेदि वंश के अनेक नरेश जैन धर्मानुयायी थे। सम्राट खारवेल तो इतिहास काल (ईसा पूर्व दूसरी शती) में ही एक सर्व महान जैन नरेश था। दाहल मंडल या त्रिपुरी के कलचुरि नरेश या तो जैन धर्मावलम्वी थे अथवा इस धर्म के प्रति सहिष्णु थे। चन्देल नरेशों (८ वीं-१३वीं ई.शती) में प्राय: कोई भी जैन नहीं था किन्तु जैन धर्म के प्रति सब ही सहिष्णु थे और उनके शासन में जैन धर्म और उनके अनुयायी फलते फूलते रहे। बुन्देले राजपूतों को जैन धर्म के साथ कोई सहानुभूति नहीं थी किन्तु जैनों और अनेक धर्म पर बुन्देलों ने कभी कोई अत्याचार नहीं किया। इस प्रकार इस प्रदेश में जैन धर्म का प्रसार एवं प्रभाव अल्पाधिक सदैव बना रहा है। इस तथ्य के साक्षी हैं बुन्देलखण्ड के यत्र-तत्र बिखरे प्राचीन जैन तीर्थ, कलाधाम, विशाल जिन प्रतिमाऐं, कलापूर्ण जिन मन्दिरों के भग्नावशेष ।

अति विशिष्टता – यहाँ भगवान ऋषभदेव, चन्द्रप्रभु, पार्श्वनाथ और महावीर स्वामी का विहार तो हुआ ही पर एक तथ्य विशिष्ट तौर पर ध्यान योग्य है कि सोलहवे तीर्थंकर भगवान शान्तिनाथ का इस बुन्देलखण्ड प्रदेश से कोई साक्षात सम्बंध नहीं रहा, परन्तु ये तीर्थंकर इस प्रदेश में सर्वाधिक लोकप्रिय और इष्टदेव रहे हैं। इस प्रदेश में विशाल, मनोज्ञ एवं चमत्कारी प्रतिमाऐं भगवान शान्तिनाथ की प्रचुर मात्रा में पाई जाती है। पाँचवी–छठी शताब्दी ई. में बुन्देलखण्ड भू–भाग पर बर्बर हूणों ने आक्रमण किया और विध्वंस लीला की। अराजकता के दौर में त्राहि–त्राहि करती जनता ने ही शान्ति प्रदाता भगवान शान्तिनाथ की प्रतिष्ठा एवं उपासना को प्रोत्साहन दिया। चार–पाँच सौ वर्ष के शान्तिपूर्ण देशीय शासन के पश्चात् मुसलमानों का प्रवेश हुआ और वही स्थिति हो गई जो प्राय: पूरे मध्यकाल में चलती रही। इस कारण भगवान शान्तिनाथ की पूजा की सार्थकता बनी रही। बुन्देलखण्ड के प्राचीन जिन मन्दिरों में पाडाशाह द्वारा प्रतिष्ठित भगवान शान्तिनाथ की प्रतिमाओं के बारे में अनेक कहानियाँ प्रचलित हैं। इसका मूलनाम अज्ञात है, परन्तु भैंसे पर ही कारोबार करने के कारण पाडाशाह नाम से प्रसिद्ध है। इसका समय ९ वीं –१०वीं शताब्दी का मध्य अनुमान किया जाता है।

पुण्य भूमि व धर्म प्राण जनता –

सृष्टि के प्रारम्भ से ही बुन्देलखण्ड की भूमि पुण्य–भूमि रही है। यहाँ की जनता धर्म प्रिय रही है। इसी कारण आठवे तीर्थंकर भगवान चन्द्रप्रभु का समवशरण यहाँ अनेकों बार आया और कोटि–कोटि मुनीश्वरों ने धर्मोपदेश श्रवण कर जैनेश्वरी दीक्षा धारण कर तपश्चरण किया और निर्वाण पद प्राप्त किया। तीर्थंकर चन्द्रप्रभु ने सिद्धक्षेत्र सोनागिर पर भी अनुमानत: १५ वार विहार किया तथा नंग–अनंगकुमार सहित साढ़े पाँच कोटि मुनिराज मोक्ष पधारे।

प्रकृति परिर्वतनशील है और परिर्वतन को विकास की संज्ञा दी जाती है। भगवान आदिनाथ काल में चेदि जनपद की स्थापना हुई और अनेकों परिवर्तन के पश्चात् ही बुन्देलखण्ड नाम से ख्याति पाई जिसका कुछ भाग मध्यप्रदेश में विलीन हुआ और उस विलीनकृत भाग में ही मध्यप्रदेश के एक जिले दतिया में प्रसिद्ध तीर्थ क्षेत्र सोनागिर अवस्थित है।

प्राचीन काल में चेदि राज्य में दतिया सम्मिलित था। इसका प्राचीन नाम दिलीपनगर था। जिसे इक्ष्वाकु वंशी राजा दिलीप (अयोध्या के राजा दशरथ के बहुत पूर्व) ने बसाया था। ययाती के पश्चात् जब यदु (यादव वंश का संस्थापक)

राज गद्दी पर बैठा उस समय दतिया भी उनके राज्य में शामिल था। पौराणिक गाथा है कि दतिया का राजा एक राक्षस था जिसका नाम दन्तवक्र था जिसने इसका नाम दतिया रखा। इसे श्रीकृष्ण ने हराया था।

वर्तमान दतिया जिले में दतिया राज्य का भू-भाग और खनियाधाना रियासत का वसई परगना सम्मिलित है। एक समय दतिया राज्य काफी दूर तक फैला था-भांडेर, दवोय, खगरीसा और समथर के परगने दतिया रियासत के अंग थे। आज दतिया जिला दो तहसीलों का मध्यप्रदेश का सबसे छोटा जिला है इसके उत्तर में भिंड व ग्वालियर के जिले, दक्षिण में शिवपुरी जिला तथा उत्तरप्रदेश का झांसी जिला, पश्चिम में ग्वालियर, शिवपुरी और भिंड जिला तथा पूरब में ग्वालियर जिले की भांडेर तेहसील है। इस दतिया जिले में ही बुन्देलखण्ड का प्रसिद्ध जैन तीर्थ सिद्धक्षेत्र सोनागिर है।

यह पवित्र पर्वत दतिया के उत्तर-पश्चिम में ९ कि.मी. पर है। सेन्ट्रल रेलवे के झांसी-देहली सैक्सन पर सोनागिर रेलवे स्टेशन है जहाँ सडक मार्ग से पर्वत ५ किलो मीटर है। यही सोनागिर हमारे इतिहास का विषय है। सोनागिर, श्रमणगिरि व स्वर्णगिरि नाम से भी जाना जाता है।

३

卐 श्रमणगिरि 卐

धन्य है वे लोग जिन्हें सौभाग्य से इस भारत भूमि पर जन्म मिला। इस देश के निवासी स्वर्ग के ऐश्वर्य को भी भोगते हैं और उनके पग निर्वाण पथ की ओर अग्रसर होते हैं। इसी कारण देवता भी अपना देवत्व परित्याग कर इस भारत भूमि पर जन्म लेने को उत्सुक रहते हैं जिससे उस पद को प्राप्त कर सकें जिसे मोक्ष पद कहते हैं। यह श्रमण संस्कृति युगों युगों से आज तक चली आ रही है और इसी प्रकार चलती रहेगी।

आचार्य श्री विद्यानन्द के शब्दों में आत्म-शुद्धि-रूप श्रम करने को श्रमण कहते हैं। दशवैकालिक सूत्र १७३ की टीका में आचार्य हरिभद्र सूरि ने श्रमण शब्द की व्याख्या इस प्रकार की है - 'श्राम्यन्तीति श्रमणा: तपस्वन्ते इत्यर्थ:' अर्थात् जो श्रम करता है, कष्ट सहता है, तप करता है वह श्रमण है। अपने पुरुषार्थ पर विश्वास करने वाले और पुरुषार्थ द्वारा आत्म-सिद्धि करने वाले क्षत्रिय होते हैं। इसलिए कहना होगा कि श्रमण संस्कृति पुरुषार्थ मूलक क्षत्रिय संस्कृति रही है। प्राचीन साहित्य में जैन धर्म के लिये 'श्रमण' शब्द का भी प्रयोग मिलता है। प्राचीन काल में जैनों को ही श्रमण कहा जाता था। प्राचीनतम साहित्य में श्रमणों के उल्लेख मिलते हैं।

प्रत्येक कल्पकाल में चौबीस महापुरुष होते हैं जो धर्मतीर्थ की स्थापना करने के कारण तीर्थंकर कहलाते हैं। वे ही लोक में पूज्य होने के कारण 'अर्हत' कहलाये। श्रीमद्भागवत (५१६) में भगवान ऋषभदेव के सन्दर्भ में लिखा है - 'तपाग्नि से कर्मों को नष्ट कर वे सर्वज्ञ 'अर्हत' हुए और उन्होनें 'आर्हत' मत का प्रचार किया।

क्रोधादि अंतरंग शत्रुओं को जीतने की अपेक्षा 'जिन' अथवा 'जितेन्द्र' कहलाये।

निष्परिग्रही और निरस्संग होने के कारण वे महापुरुष 'निर्ग्रन्थ' नाम से प्रख्यात हुये।

परमोत्कृष्ट समभावी संयमशील होने की वजह से उन्हें ही लोग 'श्रमण' कहकर पुकारते हैं।

वैदिक ग्रन्थों में जैन धर्मानुयायियों को अनेक स्थलों पर व्रात्य भी कहा

गया है। व्रतों का आचरण करने से वे व्रात्य कहे जाते थे।

व्रत उपवास में निराहार रहकर स्वाभाविक स्वच्छ वायु में जप-तप-स्वाध्याय में लीन रहे, तब उन्ही को 'वातरशन' (वायु सेवी) कहा गया। भगवान आदिनाथ के काल में जैन मुनियों को वातरशना कहा जाता था।

इन नामों की अपेक्षा से ही जैन धर्म 'तीर्थक', 'आर्हत', 'जैन', 'निर्ग्रन्थ' तथा श्रमण आदि नामों से समयानुसार इस जगत में प्रसिद्ध हुआ पाया जाता है।

श्रमण की प्राचीनता - जैन धर्म के विभिन्न नाम क्रम में श्रमण शब्द का उल्लेख इस प्रकार है - 'अर्हन' का उल्लेख ऋग्वेद संहिता (अ.२ व. १७) में हुआ। ऋवर संहिता (१०-१३६-२) में आगे 'मुनयः वातरशना' के रूप में दिगम्बर जैन मुनियों का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद (३-३-१४-२८) में ऐसे श्रमणों का भी उल्लेख मिलता है जो यज्ञों में होने वाली हिंसा का विरोध करते थे।

पुराणों में सर्व प्राचीन 'विष्णु पुराण' है। उनमें जैन तीर्थंकर सुमतिनाथ (पांचवे तीर्थंकर) और जैन धर्म की उत्पत्ति विषयक लेख हैं। इसमें असुरों को जैन धर्म रत और 'आर्हत' कहा है।

रामायण बाल काण्ड (सर्ग १४ श्लोक २२) के मध्य राजा दशरथ का श्रमणों को आहार देने का उल्लेख है।

उपरोक्त उल्लेख से स्पष्ट होगा कि भगवान सुमतिनाथ के पश्चात् बीसवें तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ के समय से पूर्व जैन धर्मानुयायियों को 'श्रमण' नाम से जाना जाता था। अतः 'श्रमण' प्रागैतिहासिक है।

ऋग्वेद में 'श्रमण' शब्द तथा 'वातरशना' मुनियों का उल्लेख हुआ है। वृहदारण्यक उपनिषद में श्रमण के साथ -साथ 'तापस' शब्द का प्रथक प्रयोग हुआ है। इससे स्पष्ट है कि प्राचीन काल से तापस ब्राह्मण एवं श्रमण ब्राह्मण भिन्न माने जाते थे। आरण्यक में तो ऋग्देव के 'मुनयो वातरशनाः' को श्रमण ही बताया गया है। इन उद्धरणों से प्राचीन वैदिक काल से ही श्रमणों का अस्तित्व एवं प्रभाव स्पष्ट रूप से व्यक्त होता है।

वैदिक वाङ्मय के अतिरिक्त रामायण, महाभारत तथा भगवत पुराण में श्रमणों का स्पष्ट उल्लेख हुआ है। श्रमण संस्कृति के आदि प्रवर्त्तक भगवान ऋषभदेव का भी उल्लेख वेदों तथा पुराणों में श्रृद्धापूर्वक किया गया है।

इस संक्षिप्त विवरण में जिसे जैन श्रमण संस्कृति कहा गया है वह वैदिक

और बौद्ध संस्कृति से पूर्व की संस्कृति है और भारत की आदि संस्कृति है। यह श्रमण संस्कृति श्रमणांचल में ऋषभदेव के काल से ही अपने पूर्ण प्रभावक रूप में फैली हुई थी।

श्रमणगिरि और श्रमणांचल –

मध्यभारत की प्राचीन दक्षिण–अवन्ति–जनपद जहाँ आजकल निमाड़ नामक जिला है, विन्ध्यपाद अथवा सतपुड़ा पर्वत का क्षेत्र है और उसके पश्चात् मध्यभारत का प्रधान पर्वत विन्ध्याचल है। जैन शास्त्रों में जिस विजयार्ध पर्वत का वर्णन है, कतिपय विद्वान उसकी कल्पना विन्ध्याचल से करते हैं। विन्ध्याचल का महात्म्य भारतवासिओं के हृदय में सदा से बहुत रहा है। इस विशाल पर्वत श्रृंखला को एक पर्वतकुल माना जाता था जिसके विभिन्न सदस्यों के नाम थे महेन्द्र, मलय, सह्य, शक्तिमान, ऋक्षवान, विन्ध्य और पारियात्र। ये विन्ध्याचल के विभिन्न भागों के नाम थे। विन्ध्याचल बिहार से प्रारम्भ होकर गुजरात तक लगभग ७०० मील लम्बा है। इस विन्ध्याचल की पर्वतमालायें भेलसा, चन्देरी, कोलारस, ग्वालियर, गुना, सरदारपुर, नीमच, आगरा तथा शाजापुर तक फैली हुई हैं। इस विन्ध्याचल की श्रृंखला में ही वर्तमान दतिया में गोपगिरि एक शाखा है जिसमें ग्रेनाइट पत्थर की चट्टानों के ऊपर श्रमणगिरि पर्वत शिखा है। इसी श्रमणगिरि पर्वत के अंचल में बसा श्रमणांचल आज सिनावल ग्राम है।

नंग–अनंगकुमार सहित साढ़े पाँच कोटि मुनिराजों की निर्वाण भूमि श्रमणगिरि –

> नंगानंगकुमारा विक्खा पंचद्धकोडिरिसि सहिया।
> सुवण्णगिरिमत्थयत्थ णिव्वाण गया णमो तेसिं।

निर्वाण काण्ड के उपरोक्त श्लोक में 'सुवण्णगिरि' शब्द आया है जिसका तात्पर्य श्रमणगिरि से है। 'श्रमण' शब्द का अर्थ व्यापक है। विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध श्रमण शब्द के विविध रुप – समण, शमण, सवणु, श्रवण, सरमताय, श्रमगेर, आदि श्रमण शब्द की व्यापकता सिद्ध करते हैं। मिश्र, सुमेर, असुर, कावुल, यूनान, रोम, चीन, मध्य एशिया, प्राचीन अमेरिका, अरब, इसरायल आदि आदि प्राचीन देशों में भी श्रमण संस्कृति किसी न किसी रुप में विद्यमान थी यह अनेक एतिहासिक एवं पुरातात्विक साक्ष्यों से सिद्ध हो चुका है।

श्लोक का भावार्थ यह है कि श्रमणगिरि शिखर से नंग–अनंगकुमार साढे

पाँच करोड मुनियों सहित मोक्ष पधारे। उनको नमस्कार करता हूँ।

नंग-अनंगकुमार कौन थे ?-

आठवे तीर्थंकर भगवान चन्द्रप्रभु के समय में योधेय देश भारत का प्रमुख देश था। श्रीपुर उसकी राजधानी थी। योधेय नरेश अरिंजय क्षत्रियों में सिरमौर थे उनकी रानी का नाम विशाला था। उन दोनों के सूर्य और चन्द्र के समान पराक्रमी प्रतापवान दो पुत्र थे जिनके नाम नंग और अनंग कुमार थे। महान पुण्यवान और महान तेजस्वी थे। वे कर्मवीर रणाङ्गण में गये तो घर न लौटे बल्कि धर्मशूर बन गये। इसका वर्णन आगे की पंक्तियों में पढें और देखें कि पूर्ण यौवनावस्था में इन योधेय वीरों ने क्यों और किस प्रकार श्रमणगिरि से शाश्वत् सिद्ध पद पाया।

निष्काम कर्म का मर्म -

सूर्यपुरी नामक देश का शासक हेमसेन था। उसकी रानी का नाम प्रियंसेना था।

प्रभाकरीपुर का नरेश सोमसेन था। बडा विषयी और लम्पटी था। विशाला नाम की अत्यंत रूपवती नर्तकी के प्रेम पाश में सदैव लीन रहता था। नर्तकी के रूप की प्रशंसा सूर्यपुरी के नरेश हेमसेन ने सुनी तो उसने उस नर्तकी का अपहरण कराकर अपने राजमहल में रख लिया। वह अपनी रानी प्रियसेना को छोडकर नर्तकी के मोहजाल में फंस गया और दिनरात उसके साथ विलास में रत रहने लगा।

प्रभाकरीपुर नरेश सोमसेन को जब यह मालूम हुआ कि उसकी प्रिय नर्तकी विशाला को सूर्यपुरी नरेश हेमसेन ने अपहरण कराकर अपने महल में रख लिया है तो उसे छुडाने को सैन्य सहित हेमसेन पर चढाई कर दी, परन्तु हार गया। इस हार से दुःख हुआ और विषयों से विरक्त होकर साधु हो गया।

इधर हेमसेन विषयों में लीन हो गया। एक दिन श्रुत देवता ने वृद्धा का रूप रखकर हेमसेन को सम्बोधन किया। राजा हेमसेन को भोग-विलास एवं संसार से विरक्ति हो गई और चिरंतन की आराधना में वनवासी हो गया। निष्काम भाव के मर्म को समझा तो वह महान बन गया।

सोमसेन और हेमसेन दोनों ही जब तक भोगों में पगे रहे, विशाला नर्तकी के रूप पर मुग्ध रहे, तब तक दुःखी ही रहे-उन्होंने युद्ध लडा। सोमसेन युद्ध में परास्त होकर साधु हुआ और तप तपा, फिर भी मान भंग की तडपन उसके अन्तर

में गहरी गांठ बन कर रह गई। हेमसेन और सोमसेन दोनों ही तपस्या के सुफल से स्वर्गों में देवताओं के सुख भोगने लगे। यह था आत्मा को जीतने का सुखद परिणाम ! आत्मंजयी बनना ही श्रेष्ठ है।

स्वर्गों का सुख भोगकर हेमसेन का जीव मालव देश में अरिंजयपुर का धनंजय नामक नरेश और सोमसेन स्वर्गीय जीवन के अंत में तिलिंग देश का नरेश अमृतविजय हुआ। शरीरों के बदलने पर भी अन्तर का विष बदला न था। बैर का खोटा संस्कार अमृतविजय के अन्तर में छुपा रहा और ज्योंही उसने देखा कि उसके पूर्व भव के बैरी के जीव धनंजय का प्रताप और प्रभाव फैल रहा है तो उसके क्रोध का पारावार नहीं रहा। वह धनंजय पर युद्ध के लिये चढ आया।

धनंजय महामण्डलीक राजा था। उसके अधीन अनेक राजा थे। धनंजय को अमृतविजय की योजना का जैसे ही पता लगा, उसने अपने मित्र राजाओं को आमंत्रण-पत्र भिजवा दिये। योधेय नरेश राजा अरिंजय के पास भी निमंत्रण पत्र आया।

नंग और अनंग कुमारों का युद्ध में भाग लेना –

महाराज धनंजय का निमंत्रण पाकर महाराज अरिंजय युद्ध के लिये तैयार होकर प्रस्थान करने लगे। नंग और अनंगकुमारों ने पिता को युद्ध के लिये तैयार देखकर आश्चर्य से पूछा कि हे तात् ! हमारे होते हुए आप युद्ध को कहाँ जा रहे हो ? महाराजा अरिंञ्जय ने सारा वृतान्त कह सुनाया। उसे सुनकर दोनों कुमारों के भुजदण्ड फडकने लगे और पिता से बोले कि हे तात् हमारे होते हुए इस वृद्धावस्था में आप युद्ध को जावें यह कहाँ तक ठीक है ? महाराजा अरिंञ्जय ने उन्हें बहुत कुछ समझाया मगर दोनों कुमार न माने और विनम्रता पूर्वक पिता की आज्ञा लेकर स्वयं युद्ध के लिये चल पडे। रास्ता पारकर दानों राजकुमार अरिंञ्जयपुर (अरिष्ठपुर) पहुँचे। सम्राट धनंजय ने दोनों राजकुमारों का विशेष आदर सत्कार किया।

समयानुसार दोनों सेनायें रणाङ्गण में आडटी, घोर युद्ध होने लगा। तिलिंग नरेश के योद्धा तगडे पडे उन्होंने धनंञ्जय की सेना के पैर उखाड दिये। नंग और अनंग कुमारों ने यह दयनीय दशा देखी तो वे तिलिंगानों पर टूट पडे जैसे सिंह हिरन पर टूट पडता है। देखते ही देखते उन्होंने अमृतविजय को बन्दी बनाकर धनंजय के सम्मुख उपस्थित कर दिया। घमंडी का सिर नीचा होता ही है। अमृतविजय का ह्दय मानभंग होने से विकल हो रहा था।

उसके भावों में निर्मलता आई और वह संसार के स्वरूप को देखकर

भयभीत हुआ। सम्राट धनंजय ने उससे पूछा- 'बताओ अब तुम क्या चाहते हो?' अमृतविजय ने विकल होकर कहा- 'कुछ नहीं चाहता। अब तो यह चाहूंगा कि चाह को जीत लूँ। यह महायुद्ध मुझे लडना है।

सम्राट धनंजय उसका शौर्य भाव एवं विरागवृत्ति देखकर चकित हो गये। अनायास उनके मुख से निकला 'जे कम्मेसूरा ते धम्मे सूरा'। उसी समय दूर क्षितिज में आनन्दायक बाजों का शब्द सुनाई दिया। ठंडी सुगंधित पवन बहने लगी। आकाश देवताओं के विमानों से भर गया। वे एक स्वर से बोल रहे थे। 'तीर्थंकर प्रभु की जय'। यह सुनते ही सबको विश्वास हो गया कि तीर्थंकर प्रभु का समवशरण उधर आरहा है। आगे धर्मचक्र चल रहा है। स्वयं इन्द्र अहिंसा ध्वज उठाये हुये हैं और भगवान चन्द्रप्रभु उधर स्वर्ण कमलों पर चल रहे हैं। देखते ही देखते समवशरण की भव्य रचना हो गई जिसमें गंधकुटी के अंतर्गत अशोक वृक्ष की छाया, तीन छत्र और चमरों युक्त सिंहासन पर स्वर्ण कमलों से अछूते अंतरीक्ष तीर्थंकर प्रभु विराजमान हुए अपूर्व छटा बिखेर रहे हैं। सर्वत्र प्रेम और दया, सुख और शान्ति का साम्राज्य छाया हुआ है। सिंह और शावक परस्पर क्रीडा कर रहे हैं। धनंजय आदि राजा लोग अपूर्व दृश्य देखकर आश्चर्य चकित हो गये।

सभी ने समवशरण में प्रवेश किया। भक्ति से सभी के मस्तक झुक गये। धनंजय, अमृतविजय , नंग-अनंग सभी ने मिलकर गद्‌गद् स्वर में भगवान चन्द्रप्रभु की स्तुति की। फिर भगवान चन्द्रप्रभु के मुख कमल से झरती हुई सुधा जैसी अमृतवाणी का रसास्वादन किया जो सभी के लिये समान हितकारी है ।

प्रभु का उपदेशामृत पानकर सभी निहाल हो गये। संसार दु:ख से छूटने के लिये धनंजय और अमृतविजय ने मुनिव्रत ले लिये। नंग और अनंग कुमारों ने जब उन राजाओं को मुनि होते देखा तो उन्होंने भी मुनि दीक्षा की याचना की। धनंजय नरेश उनकी कौमारावस्था देखकर मोह से विहल होकर बोले- 'वत्स तुम्हारी यह अवस्था नहीं, तुम्हें तो राज्यभोग करके ही सन्यास लेना उचित है।' किन्तु कुमारों का मन वैराग्य में रंग चुका था। उन्होंने कहा- 'तात् क्या कहते हैं आप? इस नश्वर शरीर का क्या ठिकाना? मृत्यु के मुख में पडे हुये जीवन का क्या भरोसा? अहोभाग्य हमारा जो तीर्थकर चन्द्रप्रभु का समागम हुआ। अत: हम भी निर्ग्रन्थ श्रमणों की प्रवज्या लेंगे।' यह कहकर दोनों ही कुमार चन्द्रप्रभु के चरणों में निग्रन्थ मुनि हो गये।

श्रमणगिरि के अंचल में-

भगवान चन्द्रप्रभु का समवशरण आगे विहार करता हुआ श्रमणगिरि पर पहुँचा जिसे वर्तमान में सोनागिर कहते हैं। वह पहले से ही पुण्यस्थल था तभी तो तीर्थंकर प्रभु के समवशरण को धारण करने में समर्थ हुआ। उसकी पवित्रता के कारण सारा बद्र देश ही वरद और शरद हो गया। समवशरण की दीप्तिवान प्रतिमा से सारा पर्वत स्वर्ण के समान प्रतीत होने लगा और श्रमणगिरि स्वर्णगिरि हो गया सभी लोग प्रभु की शरण में आये। जीव मात्र उनको पाकर सुखी हो गया। दु:ख का नाम न रहा।

उज्जयनी के उद्यान में -

एक समय महामुनि नंग और अनंग मुनि संघ सहित अनेक देशों में बिहार करते हुए उज्जैन के राजउद्यान में पहुँचे। उस समय उज्जैन का राजा श्रीदत्त था। श्रीदत्त ने मुनिराज के शुभागमन की बात सुनते ही नगर में भेरी बजवाई और राज्य के नर-नारियों के साथ दर्शन-वन्दना को गया। वन्दना करके अपने को धन्य माना। मुनिराजों ने 'धर्मलाभ' का आशीर्वाद दिया और धर्मोपदेश दिया। धर्मोपदेश सुनकर राजा श्रीदत्त को संसार से विरक्तता हो गई और स्वप्रेरणा से अपने पुत्र स्वर्णभद्र को राज्य सौंपकर नंग औरअनंग कुमार श्रमणों की तरह उनके चरणों में ही मुनि हो गये।

सिद्धि की साधना सफल हुई और श्रमणगिरि नाम को सार्थक किया

कुछ काल व्यतीत हो जाने पर विहार करते हुए मुनिराज नंग-अनंग कुमार श्रमणगिर पर्वत पर आन विराजे। श्रीदत्तादि अनेक मुनिगण उनके साथ थे। श्रमणगिरि के सिद्धदायक साधना स्थल में उन दोनों योधेय नरपुंगव और धर्मवीरों ने तथा उनके साथ अन्य अनेक मुनिराजों ने समाधि का आश्रय लेकर उग्र तप करना प्रारम्भ कर दिया। शुक्ल ध्यान की गहन एकाग्रता में विचार और वितर्क से ऊपर उठकर उन्होंने घातिया कर्मो का नाश कर केवलज्ञान प्राप्त किया। कुछ समय पश्चात् इसी पर्वत से निर्वाण प्राप्त किया। अनेक मुनियों ने भी निर्वाण प्राप्त किया। उनकी शुद्ध-बुद्ध-मुक्त आत्मा उर्ध्वलोक को प्रयाण कर गई। लोक में महान तेज प्रकाश फैल गया। अनेक देवगण आये। उज्जैन नरेश स्वर्णभद्र (श्रीदत्त के पुत्र) भी आये और देवों के साथ निर्वाण उत्सव मनाया।

स्वर्णभद्र को मुक्ति का लाभ -

कुछ समय पश्चात् स्वर्णभद्र को भी संसार से विरागता हुई और उसने

मुनिव्रत अंगीकार कर लिया। उसने श्रमणगिरि (स्वर्णगिरि) पर तपस्या करके पाँच हजार मुनियों के साथ मुक्ति प्राप्त की।

इस प्रकार नंग, अनंग, चिन्तागति, पूर्णचन्द्र, अशोकसेन, श्रीदत्त, स्वर्णभद्र आदि अनेक मुनियों की निर्वाण भूमि होने के कारण यह क्षेत्र निर्वाण क्षेत्र कहलाता है।

४

卐 स्वर्णगिरि 卐

यद्यपि श्रमणगिरि का संस्कृत रूपान्तर स्वर्णगिरि है लेकिन उसके साथ भी भावनात्मक गाथायें जुड़ी हैं जो प्राचीनता की द्योतक हैं। स्वर्णाचल महात्म्य में बताया है कि– ' उज्ञयिनी के महाराज श्रीदत्त(विवरण पिछले अध्याय में आ चुका है) और उसकी पटरानी विजया के कोई सन्तान नहीं थी जिसके कारण अत्यंत दु:खी रहते थे। भाग्य से एक दिन महर्षि आदियत और प्रभागत दो चारण ऋद्धिधारी मुनीश्वर महाराजा श्रीदत्त के राजमहल में आकाश से उतरे। महाराजा और पटरानी ने भक्तिपूर्वक आहार दिया। आहारदान के प्रभाव से पंचाश्चर्य हुए। आंहार के पश्चात् महाराजा श्रीदत्त और पटरानी विजया ने पुत्र लाभ के विषय में विनयपूर्वक पूछा। ऋषियों ने उत्तर दिया कि राजन् चिन्ता छोड़ो, तुम्हें अवश्य पुत्र लाभ होगा तुम श्रद्धापूर्वक श्रमणगिरि की यात्रा करो। यह पर्वत पृथ्वी पर भूषण और अद्वितीय पुण्य क्षेत्र है। यह श्रमणगिरि क्षेत्र जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में बद्र नामक देश है, जिसे भाषा में बुन्देलों का देश कहते हैं। इस देश का पालन बडे बडे समृद्ध राजा करते रहे हैं और आज भी कर रहे हैं। यह देश नाना प्रकार की समृद्धियों से भरपूर है जिस प्रकार समुद्र में रत्न भरे पडे हैं।

राजा श्रीदत्त पाँच दिन श्रमणगिरि पर रहा। उस समय भगवान चन्द्रप्रभु का समवशरण विराजमान था। उसने पर्वत और भगवान की पूजा अर्चना और वन्दना में रहकर रात्रि जागरण किया। तत्पश्चात् अपने नगर वापिस आ गया एवं धर्म कार्य में समय व्यतीत करने लगा। इस प्रकार धर्म कार्य करते नौ मास व्यतीत हो गये। दसवे मास के शुभ मुहुर्त और शुभ नक्षत्र में बालक का जन्म हुआ। पुत्र का रूप सोने जैसा देखकर प्रसन्न होकर राजा ने उसका नाम स्वर्णभद्र रखा और पर्वत का नाम स्वर्णाचल प्रसिद्ध किया।

द्वितीय कथानक –

कहते हैं कि राजा भर्तहरि के बडे भाई शुभचन्द्र ने यहाँ स्वर्णगिरि पर मुनि अवस्था में तपस्या की थी। तप के प्रभाव से मुख पर कान्ति व्याप्त थी परन्तु उनका शरीर कृश हो गया।

शुभचन्द्र परिचय –

सम्पूर्ण मालव देश आध्यात्मिक व सांस्कृतिक उन्नति का सदैव से प्रमुख

केन्द्र रहा है। इस क्षेत्र की आध्यात्मिक उन्नति का वर्णन ग्रन्थों और पुराणों में प्रचुरता से मिलता है। इक्कीस सौ वर्ष पूर्ण सम्राट विक्रमादित्य के नाम से विक्रम संवत् प्रसिद्ध हुआ।

उज्जयिनी और धार नगरी दोनों लक्ष्मी के सदृश सगी बहनें हैं नौवी शती में उज्जयिनी का राजा सिन्धु था। राजा धर्म परायण और नीतिवान था। परन्तु उसके कोई संतान नहीं हुई। एक दिन उसे मुंज के खेत में एक नवजात शिशु मिला उसे राजा अपने यहाँ ले आए और रानी के गूढ गर्भ से सन्तान होने की घोषणा कर दी। मुंज के खेत में मिलने के कारण उसका नाम मुंज रखा गया।

तत्पश्चात् राजा सिन्धु के घर पुत्र ने जन्म लिया। उसका नाम सिंहल रखा गया। राजा सिन्धु ने वृद्धावस्था में अपने दोनों पुत्रों को राज्य सौंपकर दीक्षा लेकर सन्यास ले लिया। राजा मुंज राज्य शासन के मुख्य अधिकारी थे।

राजा सिंहल के तीन पुत्र हुए- १. शुभचन्द्र, २. भर्तहरि और ३. भोज। राजा मुंज ने शासन को सुचारूरुप से चलाने के लिये शुभचन्द्र को उज्जयिनी का, भर्तहरि को विदिशा का और भोज को धारा नगरी का शासन सौंपा। संयोगवश निमित्त पाकर शुभचन्द्र ने जैनेश्वरी दीक्षा धारण की और भर्तहरि ने सनातन धर्म दीक्षा ली। इस प्रकार ये दोनों राजा सन्यासी हो गये। 'ज्ञानार्णव' ग्रन्थ की रचना शुभचन्द्र ने की और भोजपुर में श्री मानतुंगाचार्य को भगवान शान्तिनाथ के पादमूल में सिद्ध सिला पर विराजकर समाधि दिलाई।

राजा भर्तहरि ने अपने गुरु के पास में विद्या सिद्धकर रसायन प्राप्त की जिसे पत्थर पर डालने से सोना बन जाता था।

एक समय राजा भर्तहरि को अपने भाई शुभचन्द्र की याद आई और एक शिष्य को भेजकर खोज कराई। खोजने पर आचार्य शुभचन्द्र श्रमणगिरि पर्वत पर ध्यान करते देखे। दिगम्बर मुद्रा एवं कृश शरीर देखकर शिष्य अत्यन्त दु:खी मन से राजा भर्तहरि को यथावत् समाचार सुनाया कि आपके भाई अत्यन्त कृश शरीर हैं और तन पर कोई वस्त्र तक नहीं है। ऐसा सुनकर भर्तहरि ने थोड़ी सी रसायन सोना बनाने वाली शिष्य के हाथ भेजकर कहलाया कि पत्थर पर डालते ही सोना बन जावेगा जिसका उपयोग कर आनन्दमयी जीवन व्यतीत करें।

शिष्य रसायन लेकर पहुँचा तो उस समय आचार्य महामुनि श्रीशुभचन्द्र ध्यान में लीन थे। ध्यान पूर्ण होने पर शिष्य ने रसायन देकर निवेदन किया कि इसे आपके भाई भर्तहरि ने भिजवाया है। इस रसायन को पत्थर पर डालने से सोना

बन जावेगा जिसे प्राप्त कर आप सुखमय जीवन व्यतीत करें। महामुनि आचार्य श्री शुभचन्द्र ने मन में विचार किया कि भर्तहरि कितना अज्ञानी है जो सोना चाँदी की इच्छा रखता है। उन्होंने रसायन को उसी समय जमीन पर मिट्टी में फेंक दिया।

शिष्य ने यह समाचार भर्तहरि को सुनाया जिससे वह क्रोधित हुआ और स्वयं भाई से मिलने चल दिये। ध्यान में भाई को देखा तथा कृश शरीर को देखकर बडा दु:खी हुआ। जब ध्यान मुद्रा समाप्त हुई तो भर्तहरि ने कहा कि मुझे कितने साल के परिश्रम से रसायन प्राप्त हुई और आपने इसे जमीन पर फेंककर बर्बाद कर दिया। उस वचन को सुनकर आचार्य श्री शुभचन्द्र बोले- ''तुमने जो तप किया, वह व्यर्थ किया। यह संसार ही परिभ्रमण का कारण है। अगर धन सम्पत्ति सोना आदि की आवश्यकता थी तो इसकी राजमहलों में क्या कमी थी जो छोडकर तप करने निकले। भर्तहरि ने शंका निवारणार्थ पूछा कि आपने इतने वर्षों में क्या किया ? आचार्य ने उसी समय एक मुट्ठी धूल उठाकर प्रभु का नाम स्मरण कर पहाड की तरफ फेंक दिया जिससे सारा पहाड सोने का बन गया और कहा कि इस मोह जाल से दूर हटकर मोक्ष मार्ग में प्रवत्त होना ही ध्यान और तपस्या का ध्येय है। यह सम्पदा तो माया जाल है।'' भर्तहरि को बोध हुआ। उस समय से इस पहाड का नाम 'सुवर्णगिरि' प्रसिद्ध हुआ।

स्वर्णगिरि का सरल हिन्दी रुपान्तर सोनागिर है। भट्टारकों ने यहाँ आकर मन्दिर और मूर्तियों का निर्माण कराया और सोनागिर को ख्याति प्रदान की। वैसे भी मन्दिर और मूर्ति का निर्माण काल तो भगवान महावीर के निर्वाण प्राप्ति के काफी समय बाद का है। यह सिद्ध क्षेत्र तो वर्तमान अवसर्पिणी काल के चतुर्थकाल का है।

समृद्धिता ही स्वर्णगिर है – भारत सोने की चिडिया कहलाता था क्योंकि यह समृद्धिशाली था। इसी प्रकार सोनागिर पर्वत श्रंखला एवं क्षेत्र की समृद्धिता भी स्वर्णगिर या सोनागिर नाम की सार्थकता को सिद्ध करती है और यह भी इसकी प्राचीनता का एक स्वयंसिद्ध प्रमाण है। इसी कारण अनेक कथानक जुडे हैं।

इस पर्वत श्रृंखला में प्रदेश के निवासियों को सदा से ही बहुमूल्य पदार्थ मिलते हैं। अवन्ति-आकार से बहुमूल्य रत्न प्राप्त होते थे, ऐसा उल्लेख ईसा की प्रथम और दूसरी शताब्दि में मिलता है। सतपुडा वैडूर्यमणि का प्रसिद्ध उत्पत्ति स्थान रहा है। भृंगुकच्छ के पोतपत्तन से विदेशों में भेजने के लिए खनिज यहाँ से जाते थे उनमें संगेशाह, अकीक तथा लोहातांक भी होते थे। आज भी इन गिरि

श्रृंखलाओं पर स्थित बामौर, कुलैथ, मोहना, रेंहट, अमोला, मोहार, सरदारपुर, मन्दसौर, श्योपुर तथा चन्देरी आदि स्थानों से भवन निर्माण का सुन्दर पत्थर मिलता है। विजयपुर परगने में मोहरा नामक स्थान में संगमरमर के समान ही अत्यन्त बहुमूल्य पत्थर प्राप्त होता है। काँच और भवन में उपयोगी लाल पत्थर शिवपुरी, गिर्द, भेलसा, गुना, मोरैना, मन्दसौर जिलों में पाया जाता है। चूना और स्लेट के पत्थर भी इन गिरिमालायों की खदानों में मिलता है। अनेक गुणकारी औषधियाँ भी इन पर्वतमालाओं पर प्राप्त होती हैं।

इन पर्वतों का सबसे बडा वरदान ये नदियाँ है जो इनसे निकलकर यमुना में मिल जाती हैं। इन नदियों में सिंचित प्रदेश ही मध्यप्रदेश अथवा उसका ही एक रूप आज का मध्यभारत है। इस प्रकार खनिज, वन, औषधियाँ, धन-धान्य, आदि सम्पदा से भरपूर तथा श्रद्धा एवं भक्ति से परिपूर्ण यह क्षेत्र वास्तविक रूप से ही स्वर्णाचल रहा है। अत: यह स्वर्णाचल नाम सार्थक है। इस स्वर्णाचल तलहटी में वसा ग्राम श्रमणांचल का सरल रुपान्तर सनावल है।

भौगोलिक स्थिति - स्वर्णगिरि पौराणिक वृत्ति में निषद के छोर पर बताया है। महाभारत में नल-दमयन्ती के उपाख्यान में नल को निषद का राजा और दमयन्ती को विदर्भ नरेश भीम की पुत्री कहा है। यह निषद वर्तमान नरवर है जिसे नलपुरा कहा गया है। इससे लगा हुआ सोनागिर का भू-भाग है। बाल्मीक के सुन्दर काण्ड में सीताजी कहती हैं- 'नैषधं दमयंतीव भैयी पतिमनुव्रता' इस कथन से स्पष्ट है कि नल दमयन्ती रामचन्द्रजी से पूर्व प्रख्यात हो चुके थे। राजा नल अयोध्या के राजा ऋतुवर्ण के समकालीन थे जो दशरथ से कई पीढी पूर्व हुए। कल्याण गोरखपुर महाभारत विशेषांक में जो मानचित्र प्रकाशित किया है उसमें दतिया मण्डल निषध के अन्तर्गत है। महाभारत के नलोपाख्यान में भी निषध का जो वर्णन है वह भी दतिया मण्डल का है। स्मरण रहे ऋषभदेव के काल में जो बावन जनपद स्थापित किये गये उनमें निषध जनपद नहीं था। यह जनपद बाद में बना है जिसके नल राजा थे।

५

卐 सोनागिर 卐

बुन्देलखण्ड के दतिया मण्डल में धर्म साधना के क्रमिक विकास का इतिहास उत्तर भारत के धार्मिक इतिहास से कुछ भिन्न लगता है। परन्तु कुछ जातियों के रीति रिवाजों में द्रविड़ परम्परा के अंश वर्तमान में दृष्टिगोचर होते हैं। इससे यह प्रगट है कि वैदिक सभ्यता अथवा वैदिक समुदायों के इस ओर आगमन से पूर्व द्रविड़ संस्कृति से सम्पृक्त धार्मिक परम्परा दीर्घकाल तक यहाँ इस क्षेत्र में चलती रही।

जैन शास्त्रों में उत्तर और दक्षिण भारत के मनुष्यों में कोई भेद नजर नहीं पड़ता। इससे मालूम होता है कि उनमें उस समय का वर्णन है जबकि सारे भारत में एक ही सभ्यता और संस्कृति थी। उस समय वैदिक आर्यों का उनको पता नहीं था। प्राचीन शोध भी हमें उसी दशा की ओर ले जाती है। हड़प्पा और मोहन जोदडो की ईस्वी से पाँच हजार वर्षों पहले की सभ्यता और संस्कृति वैदिक धर्मानुयायी आर्यों की नहीं थी, यद्यपि उसका सादृश द्राविड सभ्यता और संस्कृति से था, यह आज के विद्वानों के निकट एक मान्य विषय है। साथ ही यह भी प्रकट है कि एक समय द्राविड़ सभ्यता उत्तर भारत तक विस्तृत थी। सारांशत: यह कहा जा सकता है कि वैदिक आर्यों से पहिले सारे भारत वर्ष में ही एक सभ्यता और संस्कृति को मानने वाले लोग रहते थे। यही वजह है कि जैन शास्त्रों में उत्तर और दक्षिण में कोई भेद नहीं दिखाई पड़ता। अत: प्रश्न स्वाभाविक है कि आर्यों से पहले रहने वाले कौन लोग थे ? यदि मेजर जनरल फरलाँग के अभिमत को मान्य ठहरायें तो इस प्रश्न का उत्तर होगा कि वे द्राविड़ और जैन थे। मि. फरलाँग लिखते हैं कि अनुमानत: ई. पूर्व १५०० से १८०० बल्कि अनगिनत समय से पश्चिमी तथा उत्तरीय भारत द्राविड़ों द्वारा शासित था। उसी समय उत्तरीय भारत में एक पुराना और सभ्य सैद्धान्तिक और विशेषत: साधुओं का धर्म अर्थात जैन धर्म भी विद्यमान था। ये द्राविड़ और जैनी सबही मरूदेवी और नाभिराय कुलकर की सन्तान थे। उनकी एक सभ्यता थी, एक संस्कृति और एक धर्म था। जैसा कि कुलकरों और आदिब्रह्म ऋषभदेव ने निर्धारित किया था। इससे स्पष्ट होता है कि ऋषभदेव काल से सोनागिर क्षेत्र श्रमण संस्कृति का क्षेत्र रहा है। ऋषभदेव ने सर्वप्रथम भारतवर्ष में सभ्यता और संस्कृति का सूत्रपात किया। समूचे देश को व्यवस्थित किया और धर्मतीर्थ की स्थापना हेतु समस्त भारत में विहार किया।

ऋषभदेव ने ५२ जनपदों का निर्माण किया उनमें एक चेदि जनपद भी है जिसे बुन्देलखण्ड के नाम से जाना जाता है। इसी बुन्देलखण्ड के दतिया मण्डल में प्रसिद्ध जैन तीर्थ सोनागिर है।

प्रागैतिहासिक – जैसा कि उल्लेखित किया जा चुका है कि ऋषभदेव काल से ही दतिया मण्डल का सोनागिर क्षेत्र जैन धर्म का प्रभावी क्षेत्र रहा है। समय समय पर यहाँ तीर्थंकारों का आगमन होता रहा है। आठवें तीर्थंकर श्रीचन्द्रप्रभु का समवशरण अनेक बार यहाँ आया जिसके प्रतीक स्वरुप यहाँ भगवान चन्द्रप्रभु के अनेक मन्दिर हैं। नंग–अनंगकुमार सहित अनेक मुनिराज के निर्वाण काल की घटना वर्तमान अवसर्पिणी काल के चतुर्थ काल की है।

ऐतिहासिकता – महावीर स्वामी के निर्वाण के दो सौ वर्ष बाद चन्द्रगुप्त मौर्य के समय में मगध में अकाल पड़ने के कारण जैन साधु मगध की ओर से यहाँ इस क्षेत्र पर आये थे। चन्द्रगुप्त मौर्य की इस ओर यात्रा करने और सिन्ध चम्बलों के बीहडों में सेना रखने का उल्लेख मिलता है। अत: इस समय में जैन साधुओं का आना आश्चर्य की बात नहीं।

इसी मौर्य वंश के संस्थापक चन्द्रगुप्त ने अपने साम्राज्य की प्रशासनिक सुविधा की दृष्टि से अपने साम्राज्य को पाँच भागों में विभक्त किया था। उनमें एक भाग दक्षिण पथ का था जिसकी राजधानी स्वर्णगिरि थी।

सम्राट अशोक (ईसा पूर्व सन् २६९) का सम्राज्य पूर्वी अफगानिस्तान से बंगाल की खाड़ी तक था और काश्मीर से काबेरी नदी तक फैला था। अशोक के राज्य में राजतंरगिणी के अनुसार काश्मीर भी सम्मिलित था। पाटलिपुत्र में स्वयं सम्राट अशोक साम्राज्य की तथा भारत के पूर्वी भाग की शासन व्यवस्था देखते थे यहाँ उनकी सहायता के लिये एक उपराज रहता था। पाटलिपुत्र के अतिरिक्त चार ऐसी उपराजधानियों का अशोक के शिलालेखों से विवरण मिलता है जहाँ युवराज शासन संभालते थे। तक्षसिला, उज्ञयिनी, स्वर्णगिरि और तोषाली चार राजधानियाँ थी जहाँ कुमारामात्य नियुक्त थे।

दतिया नगर के अग्नेय कोण में पारासरी ग्राम के लगभग ३ कि.मी. दक्षिण में दतिया और उन्नाव के बीच गुजर्रा नामक ग्राम में सिद्धों की टौरिया के नीचे एक बलुआ पत्थर की गोलाकार चट्टान है। इस चट्टान पर अशोक का शिलालेख है। यह शिलालेख प्राकृत भाषा में है और लिपि ब्राह्मी है। अशोक ने अपनी उपस्थित में इसे उस समय खुदवाया था जब राजधानी पाटलिपुत्र छोडे हुए २५६ दिन व्यतीत हो चुके थे।

''बौद्ध'' धर्म के प्रचार का श्रेय सर्वप्रथम सम्राट अशोक को है। गुजर्रा शिलालेख ये ज्ञात होता है कि अशोक ने दतिया मण्डल की यात्रा धर्म प्रचार हेतु की थी। स्मरणीय है कि स्वर्णगिरि पर श्रमण जैन साधुओं का अत्यधिक प्रभाव था दूसरे इस प्रदेश में उस समय आटव्य और वनवासी रहते थे। जिनकी स्वातंत्र्य भावना समाप्त न की जा सकी थी। अतएव बौद्ध धर्म के प्रभाव को बढाने के लिये तथा जैन धर्म के स्थान पर बैद्ध धर्म की स्थापनार्थ एवं आटव्यों पर नियंत्रण रखने के लिये स्वर्णगिरि को राजधानी बनाना आवश्यक था। निष्कर्स यह है कि अशोक के समय में भी स्वर्णगिरि उप-राजधानी थी जो उत्तरी भारत में वर्तमान दतिया जिले में है।

स्वर्णगिरि धर्मस्थल के साथ साथ प्रमुख राजपथ भी था। यह राजपथ पाटलिपुत्र से काशी, कोशाम्बी, स्वर्णगिरि, पद्मावती, नरवर, चेदि होकर अवन्ती जाने वाला दक्षिण पथ था जो मौर्य सम्राटों के काल में प्रमुख स्थान रखता था। अशोक ने इसे थोड़ा बदलकर स्वर्णगिर के स्थान पर गोपेश्वर नामक बिहार से मोड दिया। बौद्धों ने सोनागिर पहाड़ी के सामने गोपेश्वर पहाड़ी पर डेरा डालकर प्रचार किया। लेकिन इस क्षेत्र में जन साधरण पर बौद्धों का प्रभाव नहीं पड़ा। इससे जैन धर्म की व्यापक प्रभावना विदित होती है।

कालान्तर में चन्दगुप्त के वंशज सम्राट अशोक व उसके शासकों द्वारा जैन धर्म के स्थान पर बौद्ध धर्म को प्रमुखता देने के कारण यह स्थल अपेक्षित सा हो गया और जैन धर्म दतिया मण्डल में विकास नहीं पा सका। जैनियों का कार्य क्षेत्र सोनागिर से हटकर नरवर और बाद में ग्वालियर में सिमट गया। ग्वालियर में तोमर काल में जैन धर्म का बड़ा प्रभाव रहा। दूर दूर के अंचलों से आकर ग्वालियर दुर्ग में जैनियों ने अनेक गुहा मन्दिरों का निर्माण किया। यहाँ पर भट्टारक पीठ स्थापित हुई। तत्पश्चात् सोनागिर की महिमा और उसके बारे में जानकारी प्राप्त होने पर इन भट्टारकों ने सोनागिर में भी भट्टारक पीठ की स्थापना कर सोनागिर का पुन: उद्धार किया और पूर्ववत् गरिमा प्रदान की।

पुरातात्विक मापदण्ड – हालांकि सोनागिर क्षेत्र में पुरातात्विक मापदण्डों के अनुसार खुदाई इत्यादि का कार्य अभी सम्पादित नहीं हुआ है, लेकिन भूतेल पर विद्यमान कुछ साक्ष्य जिसमें ग्रेनाइट पत्थरों से बने लघु व दीर्घ मण्डप कुछ अलंकृत स्तंभ अपने स्थापत्य के आधार पर स्वयं सिद्ध करते हैं कि वे प्रथम से तीसरी सदी के आसपास के बने हुए हैं। इसी प्रकार के कुछ लघु व दीर्घ मण्डप

व देवस्थल सोनागिर के समीप नरवर, दूवकुण्ड के मध्य प्राचीन मार्ग पर पुरातत्व शास्त्री जनरल कनिंघम ने खोजे थे व ग्वालियर राज्य के पुरातत्व विभागाध्यक्ष श्री गर्दे ने वहाँ पर उन्हें गुप्तकालीन अवशेष होने का प्रस्तर भी अंकित कराकर उन्हें सुरक्षित स्थल घोषित किया था। ये आज भी विद्यमान हैं। इस प्रकार के ये मण्डप इस क्षेत्र में बहुतायत से प्राप्त होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि कदाचित यह तत्कालीन परम्परा रही होगी।

सोनागिर पर्वत पर स्थिल कतिपय मन्दिरों में विद्यमान जिन प्रतिमाएँ एवं जिनालय आदि अपने स्थापत्यानुसार पहली सदी के आसपास के निर्माणों एवं मूर्तिकला से सामंजस्य रखते हैं। जिसके आधार पर इस तीर्थस्थल की प्रचीनता को निरूपित किया जा सकता है।

अन्य लेख – विक्रम की सातवीं शताब्दी में गुलाबचन्द जिसके नाम से गोलालारे जाति प्रसिद्ध हुई। ने सोनागिर में १३ मन्दिर बनवाये। गुलाबचन्द के भाई वीरमचन्द, जिसके नाम से वरहिया जाति प्रसिद्ध हुई, उसने सोनागिर में चन्द्रप्रभु का मन्दिर बनवाया।

६
卐 सोनागिर वैभव 卐

बुन्देलखण्ड के पवित्र स्थलों में सिद्धक्षेत्र सोनागिर है। जैन संस्कृति का प्रतीक वास्तव में विन्ध्यभूमि का गौरव है। धार्मिक जनता के लिये प्रेरणा स्त्रोत है तो पर्यटकों के लिये दर्शनीय स्थल है और कलामर्मज्ञों के लिये अध्ययन क्षेत्र है। सोनागिर जिसका प्राचीन नाम श्रमणगिरि और स्वर्णगिरि है मध्यप्रदेश के दतिया जिले में स्थित सुन्दर एवं मनोरम पहाड़ी है। रेलगाड़ी से ही मन्दिरों के दर्शन होते हैं। मन्दिरों की पंक्ति स्वभावत: दर्शकों का मन मोह लेती है। सुन्दर पहाड़ी पर मन्दिरों की माला प्रकृति की छटा निरखते ही बनती है।

पहाड़ की समतल भूमि पर श्री चन्द्रप्रभु का विशाल भव्य एवं मनोहारी मन्दिर है। यहाँ का यह मुख्य मन्दिर क्रमांक ५७ है। इसमें मूलनायक चन्द्रप्रभु की ११ फुट ऊँची कायोत्सर्ग आसन में स्थित ध्यान मुद्रा युक्त प्रतिमा है। मूर्तिकार शिल्पी ने अपनी छैनी से सचमुच ही वीतरागता एवं सजीवता भरदी है। यह प्राचीन गढाव एवं भावदर्शन की दृष्टि से सर्वांगपूर्ण है। इसके सामने पहुँचते ही मस्तिक श्रद्धा एवं भक्ति से नत हो जाता है।

चन्द्रप्रभु के मंदिर से पहाड का और तलहटी का सुन्दर दृश्य देखते ही बनता है। प्रकृति नटी क्रीडा तो वर्षा ऋतु में देखते बनती है। चारों ओर हरियाली छा जाती है। जगह जगह कलकल ध्वनि करते झरने बहने लगते हैं और मोरों की मीठी ध्वनि 'मेघ आओ मेघ आओ' कहकर कूक उठती है। जिसे सुनकर मयूर भाव विभोर होकर एक दृष्टि से उस छटा को निरखने लगता है। क्षेत्र अत्यंत रमणीक मनोहर है। दर्शकों को भक्ति भाव के लिये स्वत: ही प्रेरणा मिलती है और वे भक्ति में लीन हो जाते हैं।

शर्मनलाल ''सरस'' की भाव भरी पंक्तिया देखें -

'यह है अमिट-यहाँ का गौरव, यही रंग लायेगा,
कोई भी पल इसे न पलभर, बदल कहीं पायेगा ॥
यह विराग वन, जिसकी रेखा अब तक बोल रही है,
जिसने छोड दिया घर सोना, वह सोनागिर आयेगा ॥
हाँ ऐसा सोनागिर, जिसमें चन्द्रप्रभु की छाया है,
कदम-कदम पर, चन्द्रप्रभु की, चरणों की माया है ॥

अब भी चमत्कार प्रतिमा से, नैनों से जल भारी,
प्रकट हो गई पुन: वेग से, अतिशय की चिनगारी ॥
प्रतिमा का चेहरा, प्रतिमा का पावन रूप लिये है,
मन जैसा वैसा फल देने, फल अनुरूप लिये है ॥
रुकता नही रुकाए अतिशय, अभी धार जारी है,
फिर वरदान प्राप्त करने की, आई यह बारी है ॥
दिन पर दिन अब दर्शन करने, लगा हुआ है मेला,
हर आशा हो सकती पूरी, हो न छलों का ठेला ॥
तुम पहुँचो देखलो अतिशय, अचरज में आओगे,
वन्दन किया 'सरस' शुभ मन से सफल कार्य पाओगे ॥

(सोनागिर सुषमा से)

हाँ यही तो है अतिशय युक्त भगवान चन्द्रप्रभु की प्रतिमा, मनहारी, बरवस *आकर्षित करने वाली। बस दृष्टि पड़ते ही मन भक्ति में, ध्यान में लीन हो जाता है* भक्त !

'बुन्देलदेशो भाषायं बद्रदेश प्रभातिष' – बुन्देलखण्ड का नाम शास्त्रकारों ने बद्रदेश स्वीकार किया है। इसी बुन्देलखण्ड के उत्तरी सीमान्त क्षेत्र (दतिया भूतपूर्व स्टेट और अब मध्य प्रदेश का एक जिला) है। इस जिले के अंतर्गत यह प्रसिद्ध क्षेत्र सोनागिर और यहीं पर विराजमान है भगवान चन्द्रप्रभु की प्रतिमा। इसके दर्शन के लिये आपको पर्वतराज की झांकी अवलोकन कराते हुए ले चलते हैं।

सोनागिर पर्वत पर ७७ शिखर युक्त जिनालय हैं। प्रत्येक मंदिर के ऊपर क्रम संख्या लिखी है। इन मन्दिरों में १३५ जिन बिम्व पद्मासन और खड़गासन मुद्रा में विराजमान हैं तथा प्रत्येक मंदिर में उस मन्दिर में विराजमान भगवान के अर्ध्य चढाने का दोहा भित्ति पर लिखा हुआ है। आरती और भजन भी कतिपय मन्दिरों में हैं। प्रत्येक मन्दिर तक पहुँचने के लिये पक्का टायल का मार्ग बना है। अधिकांश जिन बिम्व चितकबरे पाषाण में हैं जो एक फुट से तीन फुट ऊँचे पद्मासन में और एक फुट से ११ फुट ऊँचे तक खड़गासन मुद्रा में है। पर्वत पर छतरियाँ ऋषीश्वर और नंग-अनंग मुनियों की हैं। प्रत्येक मंदिर में विद्युत व्यवस्था है। पहाड़ी अधिक ऊँची नहीं है।

पहाडी के चारों ओर परिक्रमा पथ बना हुआ है। परिक्रमा के चारों कोनों

पर चार छतरियाँ हैं जिनमें चरण चिन्ह हैं। यह परिक्रमा पथ क्षेत्र की सीमा रेखा है जो जैनियों के स्वामित्व व अधिकार की रेखा है। पहाड़ के ऊँचे स्थल से खड़े होकर दृष्टि डालें तो शिखर के कलश सूर्य में चमकते तथा शिखर पर लहराती हुई ध्वजाएँ बड़ी मनोरम, मनोहारी एवं मुग्धकारी लगती हैं। मेले के अवसर पर यहाँ की शोभा देखते ही बनती है। रात्रि में बिजली के प्रकाश से सारा पर्वत जगमगा उठता है। भक्ति-विह्वल भक्त जन स्त्री पुरूष और बच्चे भक्तिगान और जयघोष करते हुए वन्दना को पहाड़ पर जाते तथा परिक्रमा पथ पर चलते हैं तो अद्भुत दृश्य दिखाई देता है, मानो किसी स्वप्नलोक में विचरण कर रहे हों। वातावरण एक अलौकिक उल्लास, भक्ति एवं अध्यात्म का बन जाता है। इस सिद्ध क्षेत्र के दर्शन से भक्तों के मन में उल्लास भर जाता है और एक अलौकिक दिव्य छटा को निरख पुलकित हो उठता है।

पर्वत पर अनेक मन्दिरों की निर्माण शैली तथा निर्माण युग की विशेषता के कारण ध्यान देने योग्य है। मंदिर संख्या सात एक मेरू की रचना है। इसे चक्की वाला अथवा पिसनहारी का मन्दिर नाम से जाना जाता है। कथा प्रचलित है कि एक निर्धन महिला ने चक्की पिसाई की मेहनत से इसका निर्माण कराया था। मंदिर संख्या ५९ गुम्बजदार मन्दिर है। इस मन्दिर की छटा निराली है। इसके चारों कोनों पर बड़ी-बड़ी तथा बीच-बीच में छोटी-छोटी मीनारें हैं। बीच बीच में कंगुरे लगे हैं। मंदिर संख्या ५८ प्राचीन शैली का है।

यहाँ का मुख्य मंदिर नम्बर ५७ भगवान चन्द्रप्रभु का मन्दिर है। मूर्ति खड़गासन, विशाल, भव्य एवं अतिशय युक्त है। भगवान चन्द्रप्रभु का समवशरण यहाँ आया था और उनकी दिव्य ध्वनि सुनकर नंग-अनंग कुमार ने संयम धारण किया था एवं अनेक भक्त जनों ने मुनि दीक्षा ग्रहण की। इस प्रकार भगवान चन्द्रप्रभु के पावन जीवन के साथ इस पर्वत का विशिष्ट सम्बन्ध जुडा हुआ है। इसलिये इस पर्वत पर चन्द्रप्रभु भगवान को मूलनायक के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। इस मन्दिर के निकट एक छत्री में मुनि नंग और मुनि अनंग के चरण-चिन्ह विराजमान हैं जो साढ़े पाँच करोड़ मुनियों के निर्वाण के प्रतीक रूप है। दूसरी ओर नंग-अनंग कुमार के विम्ब अलग अलग छतरियों में विराजमान हैं तथा इन दोनों छतरियों के बीच एक छत्री में बाहुबलि की प्रतिमा विराजमान है।

भक्तजन भगवान चन्द्रप्रभु के मंदिर में चँवर छत्र चढ़ाकर अनेक प्रकार की मनौतियां मनाते हैं तथा दीप धूप से वन्दना अर्चना करते हैं। मन्दिर का सम्पूर्ण

भाग जिनवाणी के अनमोल वाक्यों से जुड़ा है। मन्दिर के बाहर आते ही खुला चौक है। सामने उत्तुंग मान स्तम्भ है। इसकी ऊँचाई ४० फुट है। श्वेत पाषाण का निर्मित है। इसके तीन ओर वर्तमान चौबीस तीर्थंकरों की प्रतिमा छतरियों में विराजमान हैं। उनके पीछे ३० फुट ऊँचा भव्य समोशरण मंदिर है। इसे सेठ मुक्खीमल जैन जैसवाल आगरा वालों ने बनवाया था। इसमें चतुर्मुखी जिन बिम्ब विराजमान हैं। मंदिर के नीचे उतरते ही एक छोटा सा जलाशय है जिसका जल पीने और पूजा प्रक्षाल के काम आता है।

पर्वतराज पर चन्द्रप्रभु के मन्दिर के निकट बाई ओर एक स्थल है जहाँ विद्वानों के प्रवचन होते हैं जो समवशरण का प्रतीक है जब भगवान चन्द्रप्रभु की दिव्य वाणी खिरी थी। पर्वत पर ही श्वेत संगमरमर का २९ फुट ऊँचा 'कीर्तिस्तम्भ' है जिसे सेठ गुलाबचन्द चांदवाड दानाओली, लश्कर, ग्वालियर वालों ने बनवाया इसमें अनेक दोहे लेखवद्ध हैं। इसके पहिले एवं इसके सामने 'ज्ञानगुदडों' नामक स्थल है जो केवलज्ञान प्रप्ति के स्थल का प्रतीक है। यहाँ पर भक्तजन कुछ समय के लिये अवश्य बठैले हैं और केवलज्ञान स्वरुप का ध्यान कर आनन्दित होते है। इसके अतिरिक्त श्वेतपाषाण का 'पंच परमेष्ठी स्तूप' भी है। जिसमें णमोकार मंत्र का महात्म्य खुदा हुआ है। सोनागिर पर्वत पर महत्वपूर्ण प्रसिद्ध पवित्र तीर्थों की झलक प्राप्त हो सके इस हेतु २० टोंक युक्त सम्मेद शिखर का निर्माण आचार्य १०८ की सुमतिसागर जी महाराज के सहयोग एवं प्रेरणा से हुआ है। प्रत्येक टोंक मकराने के प्रसिद्ध पाषाण की बनी हैं। उनमें चरण चिन्ह हैं। कैलाश पर्वत, पावापुर एवं सोनागिर क्षेत्र की उत्तम रचना है। पहाड के ऊपर पाँच क्षेत्रपाल हैं।

पर्वतराज पर दो चमत्कारक स्थान भी हैं। एक नारियल कुण्ड और दूसरा बाजनी शिला। नरियल कुंड १७ फुट गहरा एक नरियल की शक्ल का एक ही चट्टान में अकीर्त्तम सा बना हुआ है। कुण्ड में पानी आने का कोई अदृश्य स्त्रोत है कथा है कि वहाँ एक मुनिराज विराजमान थे। एक दर्शनार्थी का बालक प्यास से पीड़ित था। मुनिराज ने बालक की आतुरता देखकर यात्री से नरियल फोड़ने को कहा। वहाँ नरियल की शक्ल का एक कुण्ड बन गया और उसमें जल उमड़ आया यह कुण्ड प्रत्येक ऋतु में समान रुप में भरता रहता है। जल मिष्ट एवं शीतल है। किवदन्ती यह भी है कि पुत्र की कामना करने वाले मनोयोग पूर्वक चन्द्रप्रभु का ध्यान कर एक बादाम इस कुण्ड में डालें और अगर वह बादाम ऊपर तैरने लगे तो अवश्य पुत्र लाभ होगा। इस बात के प्रत्यक्ष साक्षी भूतपूर्व मैनेजर स्व. श्री दौलतराम

जी थे जिन्होंने एक घटना सुनाई। "एक बार एक दर्शनार्थी अपनी पत्नी सहित वन्दना के लिये आया। कुण्ड के पास आकर उसने भगवान चन्द्रप्रभु का स्मरण किया और एक बादाम कुण्ड में डालते हुए कहा कि अगर मुझे पुत्र लाभ होवे तो बादाम ऊपर आजाये और वह बादाम ऊपर आ गया। दर्शनार्थी वन्दना कर चला गया। एक वर्ष बाद वह यात्री पत्नी के साथ पुन: सोनागिर आया। उनकी गोद में बच्चा था। उसने यह बात उस मैनेजर को बताई। यथाशक्ति दान देकर अपनी मनवांछित कामना सफल की।

बाजनी शिला – यह शिला १५ फुट लम्बी और ३ फुट मोटी है। इसको पत्थर से बजाने पर घंटी जैसी ध्वनि निकलती है। इसके विषय में कथा है कि वहाँ एक मुनिराज तपस्या कर रहे थे। उनके सिर पर शिला गिर पड़ी। पत्थर में सिर धँस गया और शिला वहीं स्थिर हो गई और उसमें सर के बराबर गड्ढा बन गया। मुनिराज के चोट नहीं आई। यह बाजनी शिला के नाम से प्रसिद्ध हुई। यह स्थान धर्मध्यान के लिये उपयुक्त है इसके चारों ओर प्रकृति का रमणीक वातावरण है।

इस तीर्थ पर मंदिर नं. ७६ जो चन्देरी वालों के नाम से प्रसिद्ध है, में तीन पाषाण की मूर्तियां श्वेत संगमरमर की अति मनोज्ञ विराजमान है। इस मन्दिर में संग्रहालय भी है जिस की व्यवस्था सोनागिर कमेटी करती है।

पर्वतराज पर प्राप्त होने वाली वनस्पतियाँ – सोनागिर की सुरम्य पहाड़ियाँ जहाँ जिनालयों से सुशोभित हैं, वही इस पर्वत पर पैदा होने वाली अनेक प्रकार की उपयोगी वनस्पतियाँ भी पाई जाती हैं। एक स्थान पर इतने प्रकार के पेड पौधों का होना दुर्लभ ही प्रतीत होता है। जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर के शोध ग्रन्थ से पता चलता है कि यहाँ लगभग १२० वनस्पतियों की प्रजातियाँ उगती हैं। वनस्पतियों ने इन प्रजातियों को ४९ कुलों में वर्गीकृत किया है। आम, इमली, नीम, पीपल, गूलर, कर्नट, बेर, मौलिकी आदि मुख्य वनस्पति के अलावा गोखरू, शंखपुष्पी, कांकडे, अंधझारा, रत्ती(गुंची), विलायती झाड, दुधी गिलोय, पुनर्नवा, असगंध जैसी कई उपयोगी औषधि वनस्पतियाँ भी प्रचुर मात्रा में उत्पन्न होती हैं। इस पहाड़ी के आस पास एक सुरम्य औषधीय उद्यान विकसित किया जा सकता है।

स्वर्णगिरि का भू-गर्भशास्त्रीय अवलोकन – इस पवित्र भूमि की भौगोलिक एवं भू-गर्भ शास्त्रीय स्थिति भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। भू-गर्भ शास्त्रियों एवं पुराविदों के अनुसार सोनागिर एवं दतिया क्षेत्र का उद्भव लगभग ढाई अरब

वर्ष पूर्व 'पुराजीवी महाकल्प' काल में हुआ। यह काल सर्वाधिक प्राचीन माना जाता है इस महाकल्प में पृथ्वी के गर्भ से लावा इत्यादि का बहाव हुआ एवं यह तरल पदार्थ चट्टानों के रूप में एकत्रित हुआ और वर्तमान संरचना निर्मित हुई। अनेक प्रकार की चट्टानों एवं खनिजों का समावेश इस अलौकिक पर्वत एवं आसपास के क्षेत्र में पाया गया है। यह क्षेत्र विश्व मानचित्र पर २५°, ३५' से अक्षांश एवं ७८°, २०' से ७८°, ३० रेखांश मध्य स्थित है। इस प्रकार की भू-गर्भ शास्त्रीय संरचना का क्षेत्र सोनागिर एवं उसके चारों तरफ लगभग ३०० वर्ग किलो मीटर में फैला हुआ है। इन चट्टानों को 'बुन्देलखण्ड नीस' भी कहा जाता है

इस क्षेत्र में प्रमुख रूप से बुन्देलखण्ड ग्रेनाइट, डोलेराइट एवं अल्मुनियम की सतहें एवं चट्टानें पाई जाती हैं। ग्रेनाइट पाषाण भी गुलाबी एवं भूरे रंग के हैं। इसके अलावा क्वार्टज रीफ भी काफी मात्रा में स्थित हैं जो कि तीन प्रकार के हैं - (आ) रिछारी डाइक, (ब) वरौनी खुर्द डाइक एवं (स) निचरौली डाइक। अल्यूनियम की उत्पत्ति भी ग्रेनाइट पत्थरों से हुई है।

प्रमुख खनिजों में फेलस्पार, पाइरोक्सीन, बायोटाइट एवं क्लोराइट प्रमुख रूप से पाये गये हैं। लोह खनिज भी अनेक शिला खण्डों एवं भूमि परतों में पाया जाता है। ग्रेफाईट एक सुन्दर एवं विशेष आकर्षक प्रकार का पत्थर है। आधुनिक समय में अधिकांश धनाढय वर्ग के लोग अपने भवन निर्माण में इसका उपयोग करते हैं। प्राचीन काल में इस प्रकार के भौगोलिक रूप से परिपक्व एवं विशेष स्थल का चयन ऐसे तीर्थ हेतु सोच समझ कर किया गया होगा।

क्षेत्रफल - सोनागिर क्षेत्र का क्षेत्रफल १३२.८० एकड है। सर्वे नं. १२५२ क्षेत्रफल ९८.१८ एकड, सर्वे नं. १२३२ क्षेत्रफल ८.३८ एकड, सर्वे नं. १२५४ क्षेत्रफल ९.५० एकड, सर्वे नं. १२५५ क्षेत्रफल २.५० एकड तथा सर्वे नं. १२५६ क्षेत्रफल ४.२४ एकड कुल क्षेत्रफल १३२.८० एकड़ ग्राम सिनावल जिला दतिया है। जो सोनागिर पहाडी के नाम से प्रसिद्ध है।

प्रबन्ध - एक समय था जब भट्टारकों द्वारा इस पर्वत की व्यवस्था होती थी। बीच में कुछ पंडों ने भी अपना अड्डा जमा लिया था। श्रीमान् स्वर्गीय सर सेठ हुकमन्द जी साहब, इन्दौर की अध्यक्षता में एक प्रतिनिधि मंडल सन् १९२२ में तत्कालीन दतिया स्टेट के महाराजा के पास गया। सर सेठ हुकमचन्द जी के प्रयत्न से दतिया महाराज ने क्षेत्र का प्रबन्ध तीर्थ क्षेत्र कमेटी के सुपुर्द किया तथा

तत्कालीन भट्टारकजी को कुछ आर्थिक सहायता दिलाई थी। तब से इस क्षेत्र का प्रबन्ध कमेटी के द्वारा होता चला आ रहा है। कमेटी का नाम '' **श्री दिगम्बर जैन सिद्ध क्षेत्र सोनागिर संरक्षिणी कमेटी'' पो. सोनागिर, जिला दतिया, म.प्र.** है। कमेटी के प्रबन्ध में आने के पश्चात् से उत्तरोत्तर विकास होने से यह क्षेत्र इतना भव्य बन गया है कि रेल में आते जाते यात्री रेल में बैठे ही उसके मनोरम दृश्य देखकर दर्शन के लिये लालायित हो उठते हैं।

पहाड़ की तलहटी पर भी एक दृष्टि – पहाड के नीचे तलहटी में पहले अठारह विशाल मन्दिर थे। लेकिन यह संख्या अब और बढ गई है। इनमें एक पंचमेरू मन्दिर, परमागम मन्दिर, स्याद्वाद संस्थान चैत्यालय, विशाल धर्मशाला में बाहुबलि मन्दिर और स्थापित हो चुके हैं। एक जिनालय त्यागीव्रती आश्रम में है।

निवास प्रबन्ध :- धर्मशालायें – सोनागिर रेलवे स्टेशन पर एक धर्मशाला है जो खुर्जा नगर के रानीवालों की है। इसका प्रबन्ध कमेटी के अंतर्गत है। इसमें लगभग २० कमरे हैं व एक कुआ है। आवश्यकता पडने पर इसका उपयोग होता है। रात विरात या असमय जब यातायात सुलभ न हो तो यहाँ विश्राम कर सकते हैं।

मध्यप्रदेश शासन द्वारा यहाँ विश्राम गृह का निर्माण कराया गया है। जो नियमानुसार उपयोग में लिया जा सकता है।

पहले यहाँ १८ धर्मशालायें थीं। परन्तु अब कुछ नई और धर्मशालायें निर्मित हो गई हैं। लमेंचू जैन धर्मशाला, अमायन के श्री शिखरचन्द जैन की धर्मशाला, अटेर वालों की धर्मशाला, विशाल धर्मशाला आदि कई धर्मशालायें बनी हैं। दिल्ली वाली धर्मशाला क्षेत्र कमेटी के प्रबन्ध में पहले से ही है। अब उसमें काफी नव निर्माण आधुनिक सुविधाओं के साथ किया गया है। विशाल धर्मशाला के पास चन्द्रनगर बनाया है जहाँ अब प्रतिवर्ष का मेला लगने लगा है तथा अनेक विशाल आयोजन पंचकल्याणक जिन बिम्व प्रतिष्ठा महोत्सव आदि होते हैं। परमागम मन्दिर की बगल में कमेटी ने आधुनिक सुविधाओं सहित फ्लैट व्यवस्थानुसार कमरे निर्मित किये हैं। तथा थाने की बगल में भी त्यागी आश्रम नाम से नवीन निवास व्यवस्था की गई है। यात्रियों की निरन्तर वृद्धि के कारण धर्मशाला निर्माण में वृद्धि होती जा रही है। जैसवाल समाज ने भी एक नई विशाल धर्मशाला बनाई है। त्यागी आश्रम में भी यात्रियों के ठहरने की व्यवस्था है।

अन्य संस्थायें – नंगानंग पुस्तकालय में हस्तलिखित प्राचीन ग्रन्थ व गुटके हैं। यात्रीगण स्वाध्याय का लाभ ले सकते हैं।

नंगानंग औषधालय में नि:शुल्क औषधियाँ वितरण की जाती हैं।

त्यागी आश्रम में त्यागियों के लिये सुविधा है तथा यात्रीगण सत्संग का लाभ लेते हैं। यह आश्रम स्व. आचार्य श्री सुमतिसागर जी की प्रेरणा एवं सहयोग से निर्मित किया गया है। इसमें मुनि,आर्यिका,एलक,क्षुल्लक व ब्रह्मचारी आकर रहते हैं। उनके लिये आहार का भी प्रबंध है तथा त्यागीजन अपना धर्मध्यान करते हैं।

स्याद्वाद शिक्षण परिषद यहाँ स्थापित है। उसके अंतर्गत परिषद के पाठ्यक्रमानुसार छात्रों को शिक्षण दिया जाता है। छात्रों के लिये छात्रावास है। छात्रों को छात्रवृत्ति दी जाती है। शिक्षण शिविरों का भी आयोजन किया जाता है 'स्याद्वाद ज्ञान गंगा' पत्र का मासिक प्रकाशन किया जाता है। स्याद्वाद विश्वविद्यालय का भी शिलान्यास हो चुका है।

जैन संग्रहालय की स्थापना भी सन् १९४८ ई. में हुई। इसमें प्राचीन मूर्तियाँ, शिलालेख, चित्र तथा अन्य कलाकृतियाँ का सग्रह है जो पर्वत के मंदिर नं. ७६ में है।

७

चन्द्रप्रभु भित्ति अभिलेख

卐 स्पष्टीकरण 卐

मन्दिर क्रमांक ५७ मूलनायक श्री चन्द्रप्रभु मन्दिर द्वार की भित्ति में अभिलेख निम्न है :-

प्रथम भाग- दोहा -

मन्दिर सह राजत भये, चन्द्रनाथ जिन ईश।
पौष सुदी पूनम दिना, तीन सतक पेंतीस ॥
मूलसंघ और गण करे, बलात्कार समुझाय।
श्रवणसेन और दूसरे, कनकसेन दुइ भाय ॥
बीजक अक्षर बांचिके, कियो सुनिश्चित राय।
और लिख्यो तो बहुत सो, नहिं परयों लखाय ॥
द्वादस सतक वरूतए, पुन्यी जीवन सार।
पार्श्वनाथ चरण तरे, तासो विदी विचार ॥

द्वितीय भाग -
श्री श्रवणाचल चन्द्रनाथ नम वंस बुन्देल पारीछत महाराज दतिया पति बाढै सदा फूले फले मनकिन मनीराम जी संगि पितु की आज्ञा पाय चंपाराम-(व) सेरू करि यात्रा सुख पाय वर। संवत् अष्टादश कहे तेरासी की साल लाला लक्ष्मीचन्द ने पहिरी श्री जयमाल। प्रथम कियो प्रारंभ उनि मंदिर जीर्णोद्धार। श्रावक हिय हरषित भए सब मिलि करी समार। विजय कीर्ति जिन सूरि सिष्य करै प्रभु सेव। परम शिष्य भागीरथ जुग देस परमेव फाल्गुन सुदि १३।

प्रथम भाग के शिलालेख में यह बताया है कि संवत् ३३५ पौष सुदी पूनम का जीर्ण शिलालेख था। और उसमें मूलसंघ बलात्कारगण के श्रवणसेन और कनकसेन दो भाइयों का उल्लेख था। जीर्णोद्धार के समय उक्तशिलालेख चरणों के नीचे लिखा हुआ था। मूल लेख तो दब गया पर उसमें जो कुछ पढने में आया वह ऊपर उद्धत कर दिया गया। यह संवत् ३३५ सही नहीं है लेख में मूलसंघ बलात्कारगण लिखा गया है। किन्तु ईसा की तीसरी चौथी शताब्दी में बलात्कारगण नहीं था।

डा. नेमीचन्द ज्योतिषाचार्य ने इसे संवत् १०३५ माना है। उनके अनुसार

ज्योतिष काल गणना के अनुसार १०३५ में पौष पूर्णिमा रविवार की पडती है। दिना का अर्थ जयोतिषशास्त्र के अनुसार रविवार भी होता है। अत: यह शुद्ध पाठ 'एक सहस्त्र पैंतीस' होना चाहिये। श्री नाथूराम प्रेमी जी ने इसका अनुमान १३३५ लगाया है। उनका तर्क है कि लेख का प्रथम अंक अस्पष्ट हो जाने से बीजक पढने वाले उस एक अंक को नहीं पढ सके। हमारा मत भी यही है, कारण निम्न है -

भट्टारक सम्पद्राय पुस्तक सम्पादक श्री विद्याधर जोहरापुरकर के पृष्ठ ४६-४७ पर बलात्कार प्राचीनकाल पट दिया है। कालपट का उल्लेख इसी इतिहास में आगे 'भट्टारक परम्परा एवं गादी सोनागिर' में किया गया है। इसमें श्रवणसेन-कनकसेन (सं. १३३५) लिखा है। ये दोनों बन्धु थे। इस प्रकार संवत् १३३५ उचित प्रतीत होता है।

एक उल्लेखनीय तथ्य है कि उपरोक्त उद्धरण में दोहे की अंतिम दो पंक्तिया इस प्रकार हैं -

''द्वादस सतक वरूतए, पुण्यी जीवन सार।
पारसनाथ चरण तरे, तासों विदी विचार॥''

मूलनायक चन्द्रप्रभु के बगल में पार्श्वनाथ की खडगासन प्रतिमा है। लेख से स्पष्ट संकेत है कि पारसनाथ के चरणों के नीचे संवत् १२७२ है। इससे विद्वानों को विचार करना चाहिये। अगर चन्द्रप्रभु की प्रतिमा का सम्वत् ३३५ होता तो पार्श्वनाथ की प्रतिमा के संवत् १२७२ का उल्लेख कदापि नहीं हो सकता था।

अभिलेख के दूसरे भाग के अनुसार 'दतिया के राजा पारीछत के राज्य में पं. परमसुख व भागीरथ के उपदेश से लाला लक्ष्मीचन्द द्वारा सं. १८८३ में मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया गया। मनीराम के साथ उनके पुत्र लक्ष्मीचंद ने सोनागिर की यात्रा की और जिनमाल ली और जीर्णोद्धार कराया। इस जीर्णोद्धार के समय मूल लेख जमीन में दब गया।

८

भट्टारक सम्प्रदाय एवं
卐 गादी सोनागिर 卐

साधु संघ की साधारण परम्परा से भट्टारक प्रथा पृथक हुई। इसका प्रथम कारण वस्त्र धारण था। यह पद्धति पहले से ही विवाद का विषय बन चुकी थी। लेकिन आचार्य कुन्दकुन्द के नेतृत्व वाले संघ ने दिगम्बरत्व का पूर्ण समर्थन किया तब हमेशा के लिये श्वेताम्बर और दिगम्बर दो भेद हो गये। लेकिन दिगम्बर सम्प्रदाय में भी वस्त्र धारण की प्रथा शुरू हुई। मुस्लिम राज्यकाल में इसे अधिक बल मिला अन्त में भट्टाराकों के लिये अपवाद मार्ग के रूप में मान्यता मिली। यद्यपि भट्टारकों के लिये वस्त्र की मान्यता मिली अवश्य पर पूज्य दिगम्बरत्व ही माना गया। भट्टारक होने के समय कुछ क्षणों के लिये नग्न अवस्था आवश्यक थी। कुछ भट्टारक तो मृत्यु के निकट आने पर नग्न अवस्था लेकर संल्लेखना करते थे।

भट्टारक परम्परा में मन्दिरों और मठों में रहने की परम्परा हुई जिसके कारण मन्दिरों और मठों का निर्माण कार्य प्रारम्भ हुआ। इस हेतु भूमिदान कराये जाने का उल्लेख मिलता है तथा मन्दिरों की व्यवस्था हेतु खेती आदि भी भट्टारक देखते थे।

इन दो प्रथाओं के कारण भट्टारकों का स्वरूप साधुत्व से अधिक शासकत्व की ओर झुका और अंत में प्रकट रूपेण इसकी मान्यता रहने लगी। वे अपने को राजगुरू कहलाते थे और उसके समान पालकी, छत्र, चमर, गादी आदि का उपयोग करते थे। वस्त्रों में भी राजा के योग्य जरी आदि के वस्त्रों का उपयोग करते थे तथा कमण्डल और पिच्छी में भी सोने चांदी का उपयोग करने लगे। उनका पट्टाभिषेक भी राज्याभिषेक की तरह बडी धूमधाम से होता था।

विभिन्न पिच्छियों का उपयोग विभिन्न परम्पराओं का प्रतीक रहा। सेनगण और बलात्कारगण में मयूर पिच्छ का उपयोग होता था, लाडबागड गच्छ में चमर का पिच्छी जैसा उपयोग होता था, नंदीतट गच्छ में भी यह प्रथा प्रचलित थी। माथुरगच्छ में कोई पिच्छी नहीं होती थी। कुछ अन्य आचार्यों ने बलाकपिच्छ गृधपिच्छ का भी उपयोग किया है।

भट्टारकों का कार्य – सबसे अधिक कार्य मूर्ति और मन्दिरों की प्रतिष्ठा कराना था। इस काल में बडे पैमाने पर मूर्ति प्रतिष्ठा का कार्य हुआ। भट्टारक युग में

पुराण, कथा, पूजा पाठ इनकी रचनाएँ अधिक हुई। सबसे श्रेष्ठ कार्य प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों की सुरक्षा का रहा। पुराने हस्तलिखित ग्रन्थ खरीदकर उनका संग्रह करना, पुराने संग्रहों को ठीक किया जाना एवं ग्रन्थों की भाषा कठिन हो तो उन पर टिप्पणी लगाकर पढ़ने के लिये सहायता करना आदि इनके कार्य रहे। भट्टारक मंत्र तंत्रों की साधना भी करते थे जो मुनियों के लिये निषेध था। भट्टारकों ने संगीत, शिल्प, चित्र, नृत्य आदि कलाओं को प्रोत्साहन दिया। इससे जैन समाज में कलाओं का अस्तित्व बना रहा।

भट्टारक स्थल – साधुत्व के नाते भट्टारकों का आवागमन भारत के प्राय: सभी भागों में होता था। दक्षिण में मूडविद्री, श्रवणवेलगोला, कारकल, हुमच स्थानों पर देशीयगण आदि शाखाओं के पीठ स्थापित हुए। महाराष्ट्र में बलात्कारगण का केन्द्र मलखेड पीठ थी। इसी की शाखा में कारंजा और कोल्हापुर पीठ स्थापित हुई। कोल्हापुर में लक्ष्मीसेन और जिनसेन भट्टारकों की परम्पराये थी। कारंजा में बलात्कारगण के अलावा सेनगण और लाडबागडगच्छ के भी पीठ थे। इन पीठ स्थानों के अतिरिक्त विदर्भ के रिद्धिपुर, वालापुर, रामटेक, अमरावती, आसगांव, एलिचपुर, नागपुर आदि स्थानों में इन पाँच पीठों के शिष्य वर्ग रहते थे

गुजरात में सूरत बलात्कारगण का केन्द्र था और सोजित्रा नन्दीतट गच्छ का केन्द्र था। समुद्रतटवर्ती इलाकों में नवसारी, भडोच, खंभात, जंबूसर, धोधा आदि स्थानों में भट्टारकों का अच्छा प्रभाव था। उत्तर गुजरात में ईडर का पीठ महत्वपूर्ण था। मालवा प्रदेश के सागवाडा और अटेर में पीठ स्थापित थे। उत्तर में ग्वालियर और सोनागिर में माथुरगच्छ और बलात्कारगण के केन्द्र थे।

राजस्थान में नागौर, जयपुर, अजमेर, चित्तौड, भानपुर और जेरहट में बलात्कारगण के केन्द्र थे। हिसार में माथुरगच्छ का प्रधान पीठ था।

सोनागिर में भट्टारक पीठ – सोनागिर क्षेत्र पर भट्टारकों की चार गद्दियाँ थी। प्राय: सभी प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा इन्ही गद्दियों के भट्टारकों द्वारा की गई है। यहाँ भट्टारक गद्दी गोपाचल (ग्वालियर) की शाखा रही है। भट्टारक विश्वभूषण के समय तक गोपाचल, सोनागिर और बटेश्वर तीनों स्थान एक ही भट्टारक के अधीन रहे। एक स्थान का भट्टारक तीनों स्थानों की देखभाल करता था। सोनागिर क्षेत्र मूलत: बलात्कारगण के भट्टारकों का था। अत: विश्वभूषण के पश्चात् यहाँ की गद्दी पर स्वतंत्र रूप से भट्टारक अभिषिक्त होने लगे। इस परम्परा में देवेन्द्रभूषण, जिनेन्द्रभूषण, नरेन्द्रभूषण एवं चन्द्रभूषण आदि के नाम उपलब्ध होते हैं। १५ वीं

शती के अपभ्रंश भाषा के विद्वान कवि रइधू ने 'रिट्ठणेमि चरिउ' की प्रशस्ति में सोनागिर का उल्लेख कनकगिरि के नाम से किया है। इस प्रशस्ति में कमलकीर्ति भट्टारक के पश्चात् शुभचन्द्र का अभिषेक सोनागिर पर हुआ ऐसा बताया गया है। कमलकीर्ति काष्ठासंघी, माथुरगच्छ और पुष्करगण भट्टारक हेमकीर्ति के शिष्य थे वि.स. १५०६, १५१०, १५३० और १६३९ के अभिलेखों से ज्ञात होता है कि हेमकीर्ति के पट्ट पर कमलकीर्ति उनके पट्ट पर शुभचन्द्र और उनके पट्ट पर यश:सेन देव आसीन हुए। कमलकीर्ति के दो शिष्य थे (१.) शुभचन्द्र और (२.) कुमारसेन सोनागिर क्षेत्र का अधिकार शुभचन्द्र और उनकी शिष्य परम्परा के अधीन रहा। उनका अधिकार १७ वीं शताब्दी के मध्य तक रहा। अर्थात् तब तक माथुरगच्छ और पुष्करगण के भट्टारक यहाँ की गद्दी के अधिकारी रहे। १७ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से यह क्षेत्र कुछ दिनों तक बलात्कारगण की अटेर शाखा के भट्टारकों के हाथों रहा।

काष्ठा संघ - माथुरगच्छ काल पट

(सोनागिर क्षेत्र से सम्बंधित जिनका अधिकार १७ वीं शताब्दी के मध्य तक रहा)

यश:सेन
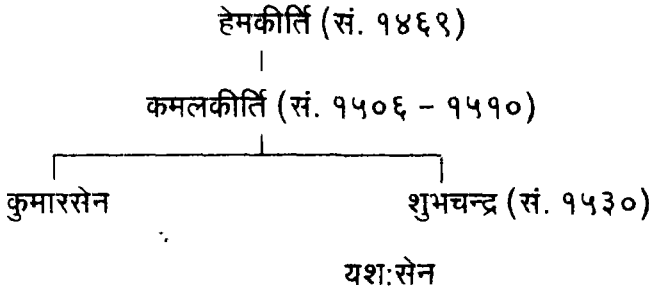
बलात्कारगण – अटेर शाखा – काल पट
(सोनागिर से सम्बंधित जिनका अधिकार पश्चात्वर्ती रहा)

१. जिनचन्द्र (दिल्ली जयपुर शाखा)
|
२. सिंहकीर्ति (संवत् १५२० – १५३१)
|
३. धर्मकीर्ति
|
४. शीलभूषण (सं. १६२१)
|
५. ज्ञानभूषण
|
६. जगदभूषण (सं. १६८६– १६९५)
|
७. विश्वभूषण (संवत् १७२२ – १७२४)
|
८. देवेन्द्रभूषण (विश्वभूषण से सोनागिर गद्दी प्रारंभ होती है)
|
९. सुरेन्द्रभूषण
|
१०. लक्ष्मीभूषण

- ११. जिनेन्द्रभूषण
- मुनीन्द्रभूषण (सं. १८४८) सोनागिर शाखा
  |
  जिनेन्द्र भूषण
  |
  देवेन्द्र भूषण
  |
  नरेन्द्र भूषण
  |
  सुरेन्द्र भूषण
  |
  चन्द्र भूषण
  |
  चारूचन्द्र भूषण
  |
  हरेन्द्र भूषण

|
जिनेन्द्र भूषण
|
चन्द्र भूषण

भट्टारक हरेन्द्र भूषण के दो शिष्य थे जानकीप्रसाद और चन्द्रदत्त। हरेन्द्र भूषण के पश्चात् जानकी प्रसाद संवत् १९८८ में भट्टारक जिनेन्द्र भूषण नाम से अभिषिक्त हुये। इनका स्वर्गवास को जाने से दूसरे शिष्य चन्द्र दत्त सं. २००१ में भट्टारक चन्द्र भूषण के नाम से अभिषिक्त हुए। इनका देहावसान मिती अषाढ वदी ३० वि.सं. २०३१ में हो गया। तत्पश्चात् कोई भट्टारक गद्दी नशीन नहीं हुआ। बदलती हुई परिस्थितियों में यह शिष्य परम्परा समाप्त होने से यहाँ की भट्टारक गद्दी समाप्त हो गई।

जैसाकि सप्तम अध्याय 'चन्द्रप्रभु भित्ति अभिलेख स्पष्टीकरण' में हमने *'बलात्कार प्राचीन काल पट' का उल्लेख किया है उसे यहाँ हम दे रहे हैं* –

बलात्कारगण प्राचीन काल पट

१. श्री नन्दि

२. श्री चन्द (सं. १०७७-१०८७)

३. मेघनन्दि

४. केशव नन्दि (सं. ११०४)

५. मुनि चन्द्र

६. अनन्त कीर्ति

७. केशव देव

८. पक्षोप वासदि

९. नय नन्दि

१०. श्रीधर

११. चन्द्र कीर्ति

१२. श्रीधर

१३. वासु पूज्य | १४. नेमिचन्द

१५. पद्मप्रभु (सं. ११४४)

१६. कुमुदचन्द्र

१७. देशनन्दि (सं. १२५८)

१८. श्रवणसेन–कनकसेन (सं. १३३५)

१९. वनवासी बसन्तकीर्ति

२०. देवेन्द्र विशालकीर्ति

२१. शुभ कीर्ति

२२. धर्म भूषण

२३. अमरकीर्ति

२४. वसुनन्दि   २५. धर्मभूषण

२६. वर्धमान (सं. १४१९)

२७. धर्मभूषण (सं. १४४२)

श्रवणसेन और कनकसेन इन दो बन्धुओं के द्वारा पौष शुक्ल पूर्णमासी को सं. १३३५ में प्रतिष्ठित भगवान चन्द्रप्रभु के मन्दिर के अभिलेख का उत्तर सही मिलता है।

९

卐 वन्दना पर्वतराज की 卐

उत्सुकता बढ रही है। मन में ललक, बदन में रोमांच, भावों में भक्ति, नेत्रों में लालसा – कब दर्शन होंगे पर्वतराज के श्रवणांचल सोनागिर के, श्रमणगिर के जहाँ भगवान चन्द्रप्रभु विराजमान हैं, नंग अनंग कुमार-महामुनिराज के चरण विराजमान हैं, और जहाँ से साढे पाँच करोड मुनिराज कठिन श्रम साधना, तप व ध्यान करके निर्वाण पद को प्राप्त हुए। यही भावना पलपल छिन छिन बढती जा रही है कि कब दर्शन प्राप्त कर जीवन को सफल बनाऊँ। हम आपकी उत्सुकता को अब अधिक न रोककर वन्दना को प्रस्थान करते हैं। आप भी अर्घ्य लेकर पर्वतराज के जिन मंदिरों में लिखे हुऐ अर्ध पढकर समर्पण करते चलें। तो आइये यह है चन्द्र चौक –

आज से लगभग १५ वर्ष पूर्व तक इसी चन्द्र चौक में सोनागिर का वार्षिक मेला लगा करता था। विभिन्न पंचायती मदिरों की जलेब यहाँ ठहरती थीं, भजन, पूजन, गीत, कलशाभिषेक होते थे। अब कमेटी ने चन्द्रनगर बनाया है जहाँ विशाल धर्मशाला है आधुनिक समस्त सुविधायें हैं। अब चन्द्रनगर में वार्षिक मेला एवं अन्य बडे बडे महोत्सव–पंचकल्याणक जिन बिम्व महोत्सव जैसे आयोजन होते हैं।

चन्द्र चौक से चलने के पश्चात् दिखाई देता है पर्वतराज का प्रवेश द्वार। प्रवेश द्वार के आगे चलकर हथिया पौर मिलती है जिसके दोनों ओर हाथी बने हैं द्वार के बीचों बीच एक घंटा टंगा है। घंटा बजाते हुए दर्शनार्थी चन्द्रप्रभु की जय बोलते हैं। बच्चे घंटा बजाने को उत्सुक रहते हैं सो परिवारी जन उनको कंधे पर उठाकर घंटा बजवाते हैं।

तो देखिये उत्सुक होकर एकदम आगे न बढें। मुख्य प्रवेश द्वार एवं हाथी पौर के बीच दाहिने हाथ को प्रथम मंदिर अर्थात् मन्दिर क्रमांक १ है उसके दर्शन करें और अर्ध चढावें।

१. नेमिनाथ मन्दिर – पर्वत के मुख्य द्वार में प्रविष्ट होने के दस कदम पश्चात् दाहिने ओर एक ऊँचे चबूतरे पर यह मन्दिर है। इसमें भगवान नेमिनाथ की ५ फुट कायोत्सर्ग मुद्रा में प्रतिमा विराजमान है। श्याम वर्ण है। वि.सं. १२१९ में इसकी प्रतिष्ठा हुई। प्रतिष्ठा कारक झिरी वाले चौधरी हरीसिंह जैसवाल थे। पास ही दो

वेदियाँ और हैं जो सेठ गोपीलाल बोहरा ने सं. २०३९ में निर्माण कराई हैं जिनमें श्री आदिनाथ भगवान के जिन बिम्ब विराजमान हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
झिरीवाले चौधरी हरिसिंह जैसवाल	नैमिनाथ	कायोत्सर्ग	कृष्णं	वि. १२१९

इस मन्दिर के बगल में रास्ता है, सीढियां चढकर मंदिर नं. २ मिलता है।

२. नेमिनाथ मन्दिर – भगवान नेमिनाथ की २¼ फुट अवगाहना की मूर्ति विराजमान है जो सं. १९८८ में बलात्कारगण सरस्वती गच्छ के आचार्य विजयकीर्ति जी के द्वारा प्रतिष्ठित की गई।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
झांसी वाले स.सि. बुलाखीदास हेमराज	नेमिनाथ	पद्मासन	श्याम	वि. १९८८

इस मन्दिर के दर्शन करने के बाद दौडिये नहीं। पर्वतराज के मार्ग पर आगे बढने के पूर्व एक पत्थर के पाटिये पर निर्वाणकाण्ड की गाथा लिखी है –

णंगाणंगकुमारों, कोड़ी पंचद्ध मुणिवरे सहिया।
सोनागिर वर सिहरे, णिव्वाण गया तेसिम ॥

गाथा पढकर साढे पाँच करोड मुनिराज सोनागिर से मोक्ष पधारे उनको अष्टांग नमस्कार करें पर्वतराज को और वन्दना की सफलता के लिये मनौती मनायें।

अरे हाँ ! रुको केवल मिनट भर और एक दृष्टि सूचना पटल पर डालें – ध्यान से पढें और सख्ती से पालन करें।

आगे समस्त मार्ग सरल, सुगम और पक्का है। मन्दिरों पर क्रमांक हैं, मार्ग संकेत है। तो आइये प्रारम्भ करें वन्दना, धैर्य और संयम धारण करें। 'भक्ति भाव वश कछु नहिं डरूं ' के साथ भगवान चन्द्रप्रभु की जय बोलें।

३. आदिनाथ मन्दिर – भगवान आदिनाथ की १½ फुट अवगाहना की प्रतिमा है मन्दिर में केवल गर्भगृह है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
--------	आदिनाथ	पद्मासन	श्वेत	वि. १९६१

इस मन्दिर के पास एक छतरी है। जिसमें चरण चिन्ह हैं। चरण पादुका के पास लेख है। जिसमें सवत् १९४५ में मूलसंघ बलात्कारगण के

गोपाचल पट्ट के भट्टारक चारूचन्द्रभूषण का नाम अंकित है।

४. आदिनाथ मन्दिर – मन्दिर में केवल गर्भगृह है १६ इंच अवगाहना वाली प्रतिमा है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
---------	आदिनाथ	पद्मासन	श्वेत	वि. १८५५

इस मन्दिर नं. ४ और ५ के बीच में चौबीस तीर्थंकरों के चरण चिन्ह हैं। इस पर शिल्पांकित पट पर लेख है। इसमें भट्टारक राजेन्द्रभूषण के बन्धु सुरेन्द्रकीर्ति की शिष्या वसुमति का नाम अंकित है। भाषा संस्कृत नागरी है। ये चरण चिन्ह वि.सं. १८८८ के प्रतिष्ठित हैं।

५. पार्श्वनाथ मन्दिर – १४ इंच अवगाहना की प्रतिमा है जिसकी प्रतिष्ठा सेठ जीवराज पापडीवाल ने कराई।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
---------	पार्श्वनाथ	पद्मासन	श्वेत	वि. १५४८

६. चन्द्रप्रभु मन्दिर – श्वेत वर्ण १ फुट अवगाहना की प्रतिमा है। केवल गर्भगृह है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
---------	चन्द्रप्रभु	पद्मासन	श्वेत	वि. १९३०

मूलसंघ सेनगण के भट्टारक लक्ष्मीसेन के उपदेश से सं. १९३० में खण्डेलवाल सेठ --------चन्द व पत्नि केसरबाई द्वारा जिन मूर्ति की स्थापना की गई।

७. नेमिनाथ मन्दिर – पौने तीन फुट अवगाहना की प्रतिमा है मन्दिर में केवल गर्भगृह है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
---------	नेमिनाथ	कायोत्सर्ग	कृष्ण	वि. १८८९

८. पद्मप्रभु मन्दिर – १२ इंच अवगाहना की प्रतिमा। मन्दिर में अर्धमण्डप और गर्भ गृह है।

निर्मापयिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
अलवर वाले छीतरमल पन्नालाल अग्रवाल	पद्मप्रभु	पद्मासन	श्वेत	-------

इस मन्दिर नं. ८ में स्थित एक मूर्ति के पाद पीठ पर लेख है। इसमें मूलसंघ बलात्कारगण के भ. जिनेन्द्रभूषण व महेन्द्रभूषण के नाम अंकित हैं। यह लेख संस्कृत नागरी भाषा में हैं। सं. १८२५ का।

९. पार्श्वनाथ मन्दिर – दो फुट अवगाहना वाली प्रतिमा है। मन्दिर में अर्धमण्डप और गर्भ गृह है।

निर्मापयिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
गोरमी वाले चतुर्भज	पार्श्वनाथ	पद्मासन	श्वेत	वि. १९४२

१. इस मन्दिर की मूर्नि के पाद पीठ पर अंकित लेख जिसमें भट्टारक जिनेन्द्रभूषण के पट्टधर भ. महेन्द्रभूषण तथा ब्र. हर्ष सागर के नाम अंकित हैं। लेख सं १८५५ का है। भाषा संस्कृत नागरी है।

२. सन् १८७३ व सन् १८७८ में सोनागिर पहाडी पर मन्दिर निर्माण के अधिकार के बारे में भ शीलेन्द्रभूषण व भ. चारुचन्द्रभूषण में कुछ विवाद चला था उसका राजा भवानीसिंह के द्वारा निपटारा किया गया। ऐसा इसमें वर्णन है।
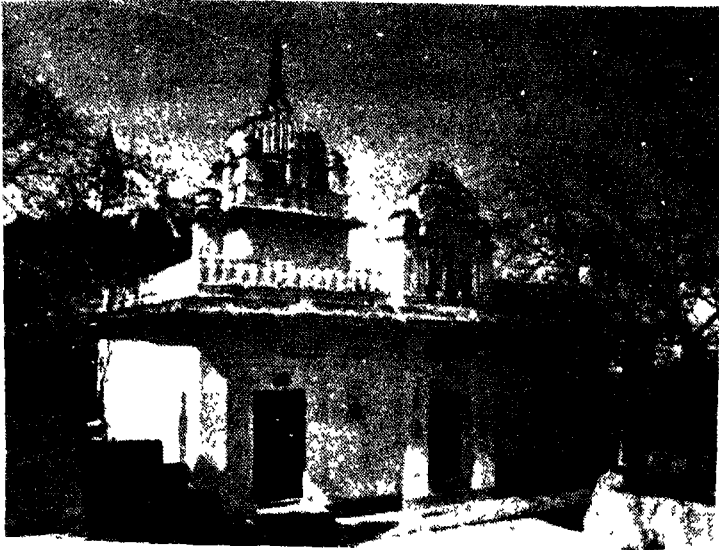
मन्दिर न १०

१०. पार्श्वनाथ मन्दिर – इस मन्दिर में तीन वेदियाँ है। मध्य की वेदी पर भगवान पार्श्वनाथ की श्यामवर्ण पद्मासन पानेतीन फुट अवगाहना की मूर्ति है। इसकी प्रतिष्ठा सं. १९२१ में भट्टारक चारुचन्द्रभूषण जी द्वारा सकल जैसवाल वरैया समाज, शमसाबाद (आगरा) की ओर से की गई।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
सकल जैसवाल वरैया पंचान शमसाबाद, आगरा	पार्श्वनाथ	पद्मासन	श्याम	वि. १९२१

इस मन्दिर में चन्द्रप्रभु एवं आभिनन्दननाथ जी की प्रतिमाएँ और हैं।

११. आदिनाथ मन्दिर – साढे तीन फुट अवगाहना। मन्दिर में अर्धमण्डप और गर्भ गृह है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
सकल अग्रवाल पंचान कोलारस (शिवपुरी)	आदिनाथ	खडगासन	कृष्ण	वि. १८२७
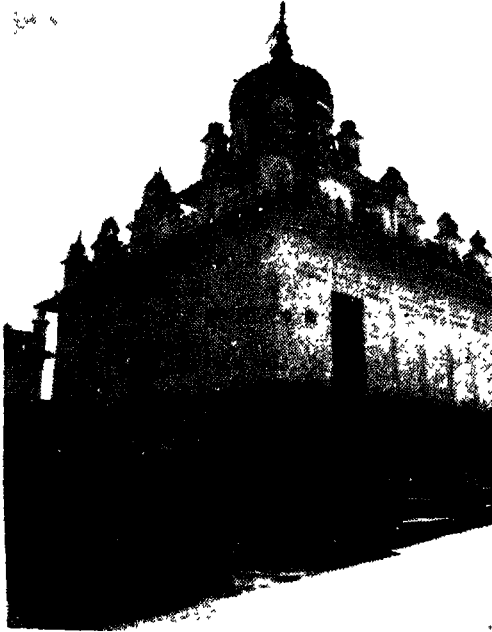
मन्दिर न १२

१२. नेमिनाथ मन्दिर – पौने पाँच फुट अवगाहना। मन्दिर में गर्भ गृह और चारों ओर परिक्रमा।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
सकल जैन पंचान सुमावली	नेमिनाथ	कायोत्सर्ग	कृष्ण	वि. १८२८

१३. आदिनाथ मन्दिर – इसमें भगवान आदिनाथ की दो श्वेतवर्ण प्रतिमाएँ १ फुट अवगाहना वाली हैं। बायी ओर की मूर्ति की प्रतिष्ठा वीर सं. २४७० में और दायीं ओर की मूर्ति प्रतिष्ठा वि. सं. १८१० में हुई। मन्दिर में गर्भगृह और अर्धमण्डप है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
---------	आदिनाथ	पद्मासन	श्वेत	१. वि. २४७० २. वि. १८१०

१. इस मन्दिर में लेख है कि दतिया के बुन्देला राजा विजयबहादुर के राज्य में सं. १८९९ में बलवन्तनगर के नन्दकिशोर, मणीराम, भोलानाथ और परिवार द्वारा इस मन्दिर का निर्माण किया गया।

२. इस मन्दिर की पाद पीठ पर लेख में – 'कुन्दकुन्दान्वय तथा झुमनलाल' नाम अंकित है।

१४. आदिनाथ मन्दिर – २१ इंच अवगाहना की प्रतिमा है। अर्धमण्डप और गर्भ गृह है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
------	आदिनाथ	कायोत्सर्ग	कत्थई	वीर सं. २४६९

१४ (अ). महावीर मन्दिर – मूर्ति के पीठासन पर वृषभ का लांछन दिखाई पडता है। कुछ लोग शेर का चिन्ह मानकर महावीर की प्रतिमा मानते है। २१ इंच अवगाहना की प्रतिमा है। मन्दिर में केवल गर्भ गृह है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
---------	महावीर	पद्मासन	श्वेत	वीर सं. २४९०

मुनिराज चरण – इस मन्दिर के बगल में मुनिराज के चरण बनें है।

१५. मुनि सुव्रतनाथ मन्दिर – साढे तीन फुट अवगाहना वाली प्रतिमा है। गर्भ गृह है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
---------	मुनिसुव्रतनाथ	कायोत्सर्ग	कृष्ण	वि. १५४४

इस मन्दिर में इस आशय का लेख है कि – 'दतिया के बुन्देला राजा शत्रुजीत के राज्य में इस मन्दिर का निर्माण हुआ था। इसमें तीन तिथियाँ दी हैं – १. सं. १८१९ में नींव खोदी गई, २. सं. १८२५ में प्रतिष्ठा हुई तथा ३. पूरा काम संवत् १८८३ में पूरा हुआ था। लेख में भ. महेन्द्रभूषण, जिनेन्द्रभूषण व आ. देवकीर्ति के नाम भी उल्लिखित हैं। निर्माण कार्य धौम्हा नगर (संभाव्य धोंहा नगर) के शिल्पकार मटरू ने सम्पन्न किया।

मन्दिर नं १७, १८

१६. महावीर मन्दिर – भगवान महावीर की प्रतिमा, ऊपर देवियाँ पुष्पमाल लिये उडती हुई, उनके नीचे दो-दो पद्मासन तीर्थंकर मूर्तियां विराजमान हैं। इनमें एक प्रतिमा नहीं है संभवतया यह शिलाफलक पंच बालपतियों का है। यद्यपि लाच्छन् बडा अस्पष्ट है पर उसका आकार शूकर जैसा लगता है। लेकिन ध्यान से देखने पर यह आकार शूकर अथवा वृषम की अपेक्षा सिंह से अधिक मिलता जुलता है। अत: इस मूर्ति को महावीर की मूर्ति मानना अधिक संगत लगा। पंचबालयति की दृष्टि से भी इसे महावीर की मूर्ति मानना ही उचित लगता है। मूर्ति के अधो भाग में चमरेन्द्र चमर लिये हुए भगवान की सेवा करते दीख पडते हैं। मन्दिर में केवल गर्भ गृह और अर्धमण्डप है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं
--------	पंचबालयति	शिलाफलक	बिस्कुटी	----

१७. पार्श्वनाथ मन्दिर – पन्द्रह इंच अवगाहना।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
--------	पार्श्वनाथ	पद्मासन	श्वेत	वि. १७४५

१८. आदिनाथ मन्दिर – पन्द्रह इंच अवगाहना वाली मूर्ति। गर्भ गृह और अर्धमण्डप।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
सकल पंचान धोंहा	आदिनाथ	पद्मासन	श्वेत	वि. १९२३

इस मन्दिर के लेख में भ. चारूचन्द्रभूषण तथा कोलारस निवासी अग्रवाल मित्तल गोत्रीय चौधरी रामकिशन बन्धु लालीराम तथा ईश्वरलाल के नाम अंकित हैं।

१९. नेमिनाथ मन्दिर – सवा दो फुट अवगाहना। बायीं ओर गजारूढ यक्ष तथा दायीं ओर नृत्यमुद्रा में यक्षी खडी हैं। मन्दिर में अर्धमण्डप और गर्भ गृह बने हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
--------	नेमिनाथ	कायोत्सर्ग	कृष्ण	--------

२०. चन्द्रप्रभु मन्दिर – सोलह इंच अवगाहना। मन्दिर के तीन ओर बरामदे, भीतर आंगन और गर्भ गृह।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
--------	चन्द्रप्रभु	पद्मासन	श्वेत	वी.नि.२४७०
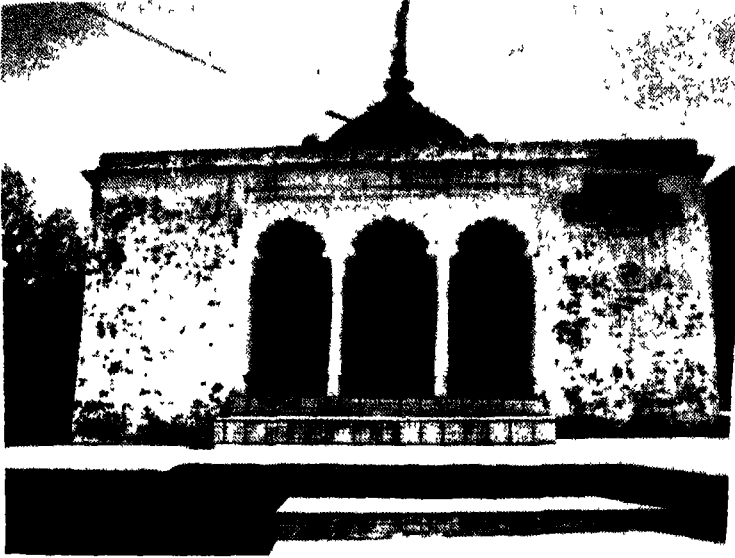
मन्दिर न २१
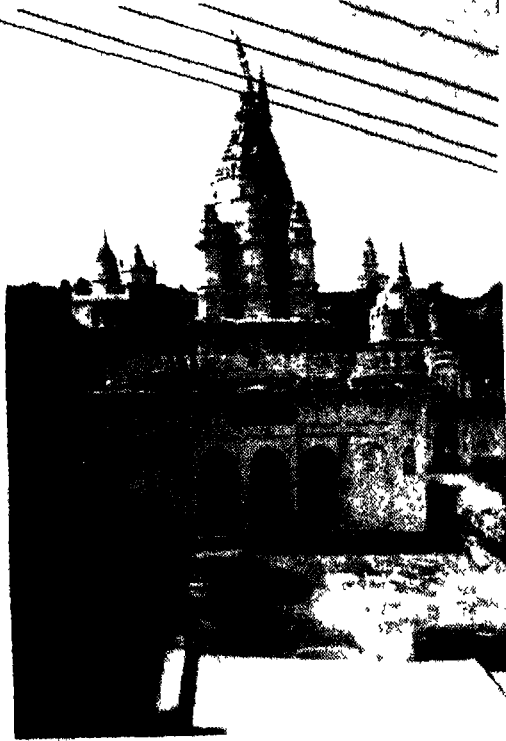
मन्दिर न २२

२१. पार्श्वनाथ मन्दिर – पन्द्रह इंच अवगाहना। मन्दिर प्रतिष्ठा संवत् १९२१ मन्दिर में गर्भ गृह और अर्घमण्डप।

निर्मापयिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
सकल पंचान धोंहा	पार्श्वनाथ	पद्मासन	श्वेत	वि. १९२१

२२. अरहनाथ मन्दिर – पौने पाँच फुट अवगाहना। इनके केशवलय अद्भुत शैली के बने हैं ऐसा प्रतीत होता है जैसे सिर पर सात वलय की पगड़ी लगी हो। प्रतिमा के सिर के दोनों ओर गजलक्ष्मी है, सिर के ऊपर छत्र त्रय सुशोभित हैं। ऊपर कोनों पर पुष्पमाल लिये हुए आकाशचारी देव हैं। प्रतिमा के चरणों के दोनों ओर चमर वाहक खडे हैं। मन्दिर में गर्भ गृह और अर्घमण्डप हैं।

निर्मापयिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
आमौल के चौधरीयान वरैया	अरहनाथ	खडगासन	बादामी	----

२३. सुपार्श्वनाथ मन्दिर – सोलह इंच अवगाहना। सिर पर नौ सर्प फणावली पीठासन पर स्वस्तिक लांछन। लांछन के आधार पर इसे सुपार्श्वनाथ की प्रतिमा माना जाता है। स्वस्तिक का आकार बड़ा अद्भुत बना है। इस प्रकार का स्वस्तिक देखने में नहीं आता। इसकी प्रतिष्ठा सं. १८८४ में भट्टारक सुरेन्द्रभूषण ने कराई थी।

निर्मापयिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
आछेलाल बल्देवप्रसाद सर्राफ गोलालारे भिण्ड वाले	सुपार्श्वनाथ	पद्मासन	श्वेत	वि. १८८४
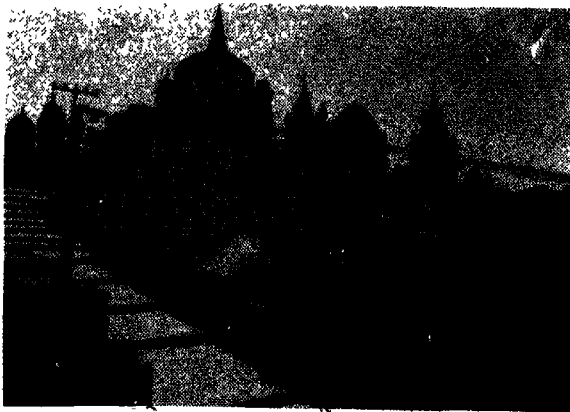
मन्दिर नं. २३
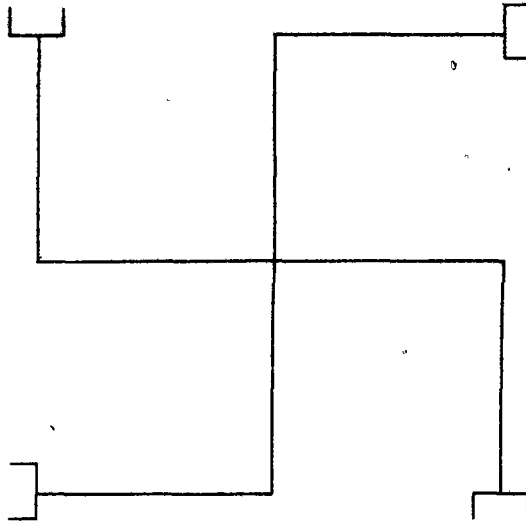
मन्दिर निर्माणकर्ता का वंश वृक्ष –
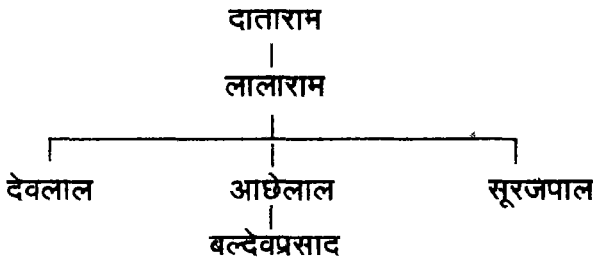
१. इस मन्दिर की मूलनायक प्रतिमा के लेख में सं. १८८४ में मूलसंघ के भट्टारक सुरेन्द्रभूषण तथा चन्देरी निवासी खण्डेलवाल समासिंध के नाम अंकित हैं।

२. इस मन्दिर के एक लेख में मूलसंघ–सेनगण के भट्टारक लक्ष्मीसेन के उपदेश से सं. १९३० में खण्डेलवाल सेठ सुपुण्यचन्द्र व पत्नि केसरबाई द्वारा जिन मूर्ति स्थापना का वर्णन है।

३. इस मंन्दिर में २ वेदिया और हैं और दोनों वेदियों में भगवान पार्श्वनाथ प्रतिमा विराजमान हैं।

२४. नेमिनाथ मन्दिर – ४ फुट २ इंच अवगाहना। सिर के पीछे भामण्डल तथा ऊपर की ओर छत्रत्रय। चमरेन्द्र के स्थान पर दोनों ओर दो करवद्ध भक्त खडे ह। उनके मुकुट टोपीनुमा हैं। बडे अद्भुत प्रतीत होते हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं
झिरिवाले सोभाग्यसिंह	नेमिनाथ	कायोत्सर्ग	कृष्ण	वीर सं. १९८६

२५. मल्लिनाथ मन्दिर – डेढ फुट अवगाहना। मन्दिर में गर्भ गृह चार खम्भों पर आधारित है तथा प्रदक्षिणा पथ डबल बने हुये हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं
करहलवाले फुलजारीलाल	मल्लिनाथ	पद्मासन	कृष्ण	वि १९२५

इस मन्दिर में मूलसंघ कुन्दकुन्दान्वय के भट्टारक राजेन्द्रभूषण तथा लम्बकंचुक अन्वय के उदयराज बन्धु खडगसेन के नाम तथा १९२५ का स्थापन वर्ष अंकित है।

२६. नमिनाथ मन्दिर – एक फुट अवगाहना। पाद पीठ पर नीलमकमल का चिन्ह है। मन्दिर में गर्भालय और अर्घमण्डप है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
खिरकी वाले दीनदयाल घमण्डीलाल	नमिनाथ	पद्मासन	श्वेत	--------

२७. नेमिनाथ मन्दिर – अवगाहना २१ इंच। गर्भ गृह और अर्घमण्डप।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
मोहनावाले मन्नूलाल वरैया	नेमिनाथ	पद्मासन	कृष्ण	-------

२८. चन्द्रप्रभु मन्दिर – चितकवरे वर्ण में हरे और पीले रंग की बूदें मूर्ति पर। साढे पाँच फुट अवगाहना। सिर पर छत्रत्रय। सिर के दोनों ओर आकाशबिहारी गन्धर्व पुष्प वर्षा कर रहे हैं। सौधर्म और ईशान इन्द्र हाथों में चमर लिये भक्ति मुद्रा में खडे हैं। गर्भ गृह और प्रदक्षिणा पथ बने हैं। गर्भ गृह चार स्तम्भों पर आधारित मण्डपनुमा है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
सकल जैन पंचान गोरमी	चन्द्रप्रभु	कायोत्सर्ग	चितकवरा	----

२९. पार्श्वनाथ मन्दिर – छह फुट तीन इंच अवगाहना, चितकवरा वर्ण। सिर के दोनों ओर गजलक्ष्मी तथा पुष्पमाल लिये नभचारी गंधर्व बने हैं। मन्दिर में अर्घमण्डप, गर्भ गृह और आँगन है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
झिरीवाले पातीराम पटवारी	पार्श्वनाथ	कायोत्सर्ग	चितकवरा	----

ज्ञानगुदड़ी – मन्दिर के बगल में एक पक्का कुण्ड है तथा एक चबूतरा बना है। जो मंदिर नं. २५ से मंदिर नं. ३३ के बीच तक है। यह मुनियों के ध्यान तप के लिये उपयोग में आता था। इस कारण इस चबूतरे को 'ज्ञानगुदड़ी' कहा जाता है। भक्तजन यहाँ थोडी देर बैठकर ध्यान मग्न होते हैं।
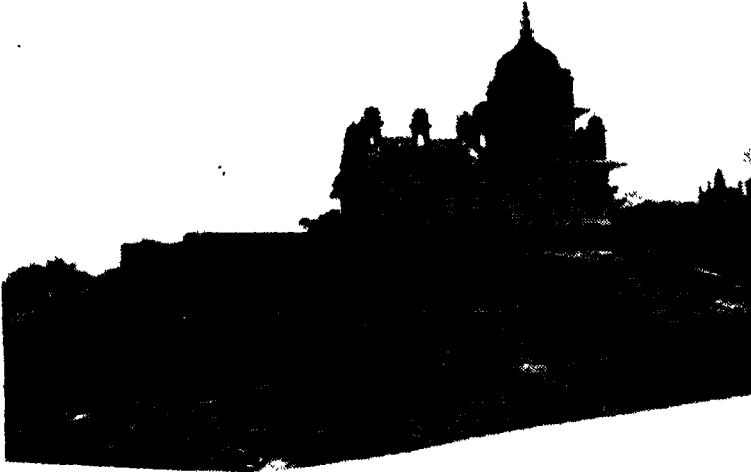
ज्ञानगुदडी

३०. चन्द्रप्रभु मन्दिर – अवगाहना ६ फुट, सिर के ऊपर दोनों ओर गजलक्ष्मी उत्कीर्ण हैं। सिर पर छत्रत्रय सुशोभित हैं। छत्रों के दोनों ओर आधार दण्ड लगा है गजलक्ष्मी के निकट हाथ जोड़े भक्त खड़े हैं। अधोभाग में दोनों ओर चमर वाहक खड़े हैं। मन्दिर में गर्भ गृह और प्रदक्षिणा पथ है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
झिरीवाले पातीराम पटवारी	चन्द्रप्रभु	कायोत्सर्ग	चितकवरा	----

३१. नेमिनाथ मन्दिर – चार फुट अवगाहना। सिर पर छत्रत्रय। दोनों ओर गजलक्ष्मी। मूर्ति के एक ओर कमलासीन चतुर्भुज यक्ष है तथा दूसरी ओर सिंहारूढ़ यक्षी बनी है। मन्दिर में गर्भ गृह और अर्धमण्डप है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
झांसीवाले बुलाकीदास	नेमिनाथ	कायोत्सर्ग	श्याम	वीर.सं. २४६२

३२. अजितनाथ मन्दिर – अवगाहना सवा दो फुट। एक शिलाफलक पर प्रतिमा बनी है। सिर पर छत्रत्रय। दोनों ओर अष्टमंगल द्रव्य बने हैं। नीचे भगवान के दोनों ओर चमरेन्द्र खड़े है। मन्दिर में अर्धमण्डप और गर्भ गृह बने हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
जयपुरवाले नानूराम कन्हैयालाल	अजितनाथ	पद्मासन	श्वेत	वीर.सं. २४६२ सं. १९९२

३३. सुमतिनाथ मन्दिर – यह मन्दिर नम्बर ३२ के समान है। केवल तीर्थंकर का अंतर है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
जयपुरवाले नानूराम कन्हैयालाल	सुमितनाथ	पद्मासन	श्वेत	वीर.सं. २४६२

३४. आदिनाथ मन्दिर – छह फुट अवगाहना वाली प्रतिमा। सिर पर छत्र सुशोभित। बगल में चमर लिये गन्धर्व खड़े हैं। नीचे की ओर चतुर्भुज यक्ष (गोमुख) और दूसरी ओर यक्षी (चक्रेश्वरी) बनी हुई है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
झांसीवाले बुलाकीदास	आदिनाथ	कायोत्सर्ग	कृष्ण	-------

जैन शिलालेख संग्रह भाग ५ में बताया गया है। कि इस मन्दिर की जिन मूर्ति के पाद पीठ पर संवत् १२३६ लिखा है। इसके अलावा अन्य भाग अस्पष्ट है। नन्दीश्वर द्वीप की रचना की प्रतिष्ठा संभवत: इसी संवत् में हुई।

नन्दीश्वर द्वीप – मन्दिर नं. ३४ में एक बरामदे की वेदी में नंदीश्वर द्वीप की रचना है। आकार एक फुट आठ इंच। इसमें चारों ओर खड्गासन ५२ प्रतिमाएँ हैं। यह रचना १२३६ की है।

क्षेत्रपाल – इस मन्दिर के पीछे एक छतरी में क्षेत्रपाल की खड़ी हुई मूर्ति विराजमान है। पेड़ों के झुन्ड में एक चबूतरा बना है।

चरण पादुकाएँ – पहाड़ी पर ही इस मन्दिर क्रमांक ३४ के सामने एक छोटी सी छतरी में तीन चरण पादुका स्थापित हैं जिन पर नीचे लिखे संक्षिप्त लेख खुदे हैं –

१. ब्र. मंगलदास की चरण पादुका
२. मंडलाचार्य श्री केशवसेन गुरुम्यो नम: पादुका।
३. भ. श्री विश्वकीर्ति जी पादुका
४. सं. १७०१ वर्षे ज्येष्ठ मासे -------काष्ठा संघे

नन्दीतट गच्छे विद्यागणे भ. रामसेनन्वाये तदुनुक्रमे भ. श्रीरत्नभूषण तत्सिष्य ------ भ. विश्वकीर्ति नित्य प्रणमति।

इस मन्दिर नं. ३४ के लेख में "दतिया के बुन्देल राजा पारीछत के राज्य में सं. १८७३ में भ. देवेन्द्रभूषण के शिष्य विजयकीर्ति तथा पं. परमसुख व भागीरथ ने ऋषभदेव मूर्ति की स्थापना की तथा इस मूर्ति के शिल्पी का नाम नीरैना था" ऐसा वर्णन है।

३५. आदिनाथ मन्दिर – साढे पाँच फुट अवगाहना की प्रतिमा।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
-------	आदिनाथ	खड्गासन	चितकबरा	सं. १६४०

३६. अजितनाथ मन्दिर – अवगाहना १५ इंच वाली प्रतिमा। मन्दिर में गर्भ गृह।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
संकल पंचान रानीपुर	अजितनाथ	पद्मासन	मटमैला	

३७. नेमिनाथ मन्दिर – ११ इंच अवगाहना वाली प्रतिमा। ब्र. दौलतसागर की ओर से भट्टारक सुरेन्द्रभूषण जी द्वारा प्रतिष्ठित।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
ब्र. दौलतसागरजी	नेमिनाथ	पद्मासन	कृष्ण	सं. १८८४

इस मन्दिर के लेख में – 'सं. १८८४ में मूलसंघ के भ. सुरेन्द्रभूषण तथा चन्देरी निवासी खण्डेलवाल सभासिंघ के नाम अंकित हैं।

३८. आदिनाथ मन्दिर – भगवान आदिनाथ की प्रतिमा के दोनों ओर महावीर स्वामी की २८ इंच अवगाहना वाली प्रतिमाएँ हैं। इसकी प्रतिष्ठा भट्टारक सत्येन्द्र भूषण ने सं. १९५० में की।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
राकल जैन पंचान आगरा	आदिनाथ	पद्मासन	कृष्ण	सं. १९५०

३९. नेमिनाथ मन्दिर – सवा छै फुट अवगाहना वाली प्रतिमा। मूर्ति के सिर पर छत्रत्रय सुशेभित है। मध्य में चमरेन्द्र खडे है। अधो भाग में भगवान नेमिनाथ के यक्ष यक्षी बने हुये हैं। दायीं ओर पुरुषारूढ गोमेध यक्ष हाथ जोडे खडे हैं तथा बायीं ओर सिंहारूढ अम्बिका है। मन्दिर में स्तम्भों पर आधारित मण्डपनुमा गर्भ गृह बना है। उसके चारों ओर प्रदक्षिणा पथ है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
श्रीपंछीलाल नाथूराम मैनपुरी वाले	नेमिनाथ	खड्गासन	कृष्ण	सं. १९४४

सम्मेद शिखर की रचना – मंदिर नं. ३९ के निकट ही श्री सम्मेद शिखर जी की रचना है जिसमें २० टोंक हैं और उनमें चरण चिन्ह हैं। ये चरण चिन्ह उन तीर्थंकरों के हैं जो यहाँ से मोक्ष पधारे है। इसकी रचना सं. २०३५ में हुई।

४०. नेमिनाथ मन्दिर – दो फुट अवगाहना की प्रतिमा है। मन्दिर में गर्भ गृह और अर्धमण्डप है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
श्रीपंछीलाल नाथूराम मैनपुरी वाले	नेमिनाथ	पद्मासन	कृष्ण	सं. १९५०

४१. चन्द्रप्रभु मन्दिर – २२ इंच अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। मन्दिर

में अर्धमण्डप और प्रदक्षिणा पथ है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
डबरा वाले मोहनलाल मोदी	चन्द्रप्रभु	पद्मासन	श्वेत	सं. १९५५

४२. आदिनाथ मन्दिर – आठ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा। सिर पर छत्र/छत्र के दोनों ओर दण्डधर गज और हाथ जोडे हुए भक्त तथा चरणों के दोनों ओर चमर वाहक बने हैं। गर्भ गृह चार स्तम्भों पर आधारित है और इसके चारों ओर प्रदक्षिणा पथ है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
सकल जैन पंचान बामौरा	आदिनाथ	कायोत्सर्ग	चितकबरा	--------

४३. नेमिनाथ मन्दिर – ६ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा मूर्ति के दोनों ओर चमरेन्द्र खडे हैं। नीचे यक्ष यक्षिंनी बने हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
झांसीवाले बुलाकीदास	नेमिनाथ	कायोत्सर्ग	नील	--------

मन्दिर में लेख के अनुसार 'राजा पारीछत के राज्य में पं. परमसुख व भागीरथ के उपदेश से बलवन्तनगर के चौधरी कल्याण सिंह द्वारा सं. १८९० में मन्दिर निर्माण का वर्णन है।'

४४. चन्द्रप्रभु मन्दिर – ५ फुट ३ इंच अवगाहना वाली प्रतिमा। सिर पर छत्र/ दोनों ओर चमर वाहक/नीचे एक ओर यक्ष हाथ जोडे खडा है। दूसरी ओर वृषम पर चतुर्भुजी यक्षी आरूढ हैं गर्भ गृह चार स्तम्भों पर आधारित है। चारों ओर प्रदक्षिणा पथ है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
सकल पंचान कलेसरा	चन्द्रप्रभु	कायोत्सर्ग	नील	वि. १८७०

क्षेत्रपाल – मंदिर नं. ४४ के आगे एक मन्दिर में क्षेत्रपाल स्थापित हैं।

क्षेत्रपाल – दायीं ओर की मढिया में एक क्षेत्रपाल हैं।

४५. पार्श्वनाथ मन्दिर – इस मन्दिर में पाँच वेदियाँ हैं। बायी ओर से

१. शान्तिनाथ – खड्गासन – कृष्णवर्ण – अवगाहना ढाई फुट दोनों ओर चमर वाहक हैं। मूर्ति सं. ११८२ में प्रतिष्ठित हुई तथा इसके दायें हाथ का

ऊपरी भाग खण्डित है।

२. पार्श्वनाथ - पद्मासन - हलका कत्थई वर्ण - संवत् ११६३ की प्रतिष्ठित

३. पार्श्वनाथ - खड्गासन - कृष्ण वर्ण - अवगाहना ४ फुट बाई ओर चमरेन्द्र खड़ा है तथा दायीं ओर कमलासन चतुर्भुजी पद्मावती देवी उसके हाथों में अस्त्र है। मूलनायक।

४. नेमिनाथ - पद्मासन - कृष्ण वर्ण - सवा दो फुट अवगाहना सं. १३४० में प्रतिष्ठित।

५. महावीर - खड़गासन - हल्का कत्थई वर्ण - ३ फुट अवगाहना। हाथों के नीचे यक्ष यक्षी खडे हैं।

इस मन्दिर की प्रतिष्ठा झांसीवाले सिंघई अछरमल ने कराई।
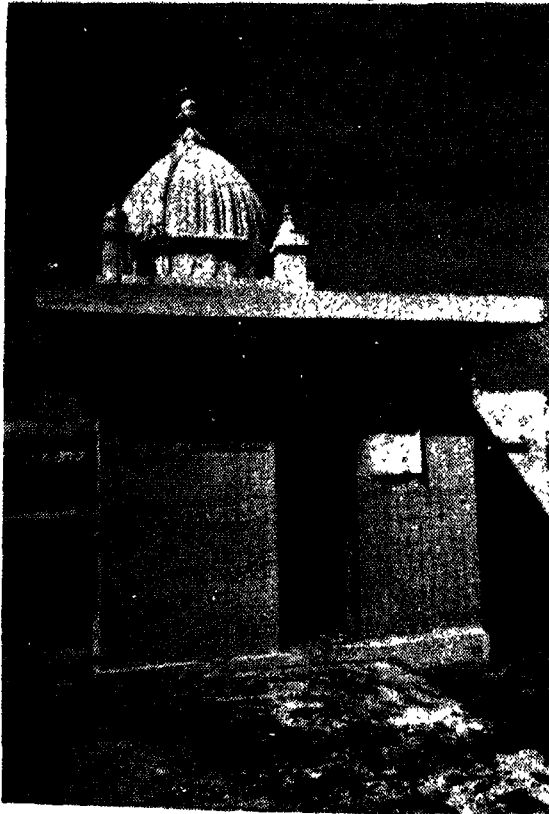
मंदिर नं. ४५ (अ)

४५. (अ)– महावीर मन्दिर – अवगाहना १५ इंच।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
लश्कर निवासी वरैया गोत्रे स्व.छोटेलाल पुत्रे कैलाशचंद देशभूषण महेन्द्रकुमार राजकुमार एवं रोशनलाल	महावीर	पद्मासन	श्वेत	वीर सं. २५२१ फाल्गुन शुक्ला ७ बुधवासरे

इस मन्दिर में टायल्स स्व. श्री किसनपाल वरैया गोत्र सेंथरिया सिमरिया वालों के सुपुत्र स्व. श्री उत्तमचंद जी की धर्मपत्नि श्रीमती शान्तिदेवी की प्रेरणा से स्व. हेमराज बद्रीप्रसाद मक्खनलाल की स्मृति में बाबूलाल धर्मचन्द कमलचंद विजयकुमार दीपक संजय अमित जैन सेंथरिया द्वारा लगवाई गई। मंदिर जी में वेदी प्रतिष्ठा ८/३/९५ को प्रतिष्ठा कार्य पं. महावीरप्रसाद जी, मगरौनी वालों ने कराई तथा प्रतिमा जी विराजमान की।

४६. नेमिनाथ मन्दिर – तीन फुट अवगाहना वाली प्रतिमा है। ये वाटी वाले महाराज कहलाते हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
झांसीवाले सिंघई अछरमल	नेमिनाथ	पद्मासन	चितकबरा	---------

इस मन्दिर के लेख के अनुसार इस मन्दिर का निर्माण मूलसंघ बलात्कारगण के भ. वसुदेवकीर्ति के उपदेश से पं. बालकृष्ण द्वारा सं. १८१२ में किया गया।

४७. आदिनाथ मन्दिर – सवा छह फुट अवगाहना वाली प्रतिमा। स्तम्भों पर गर्भ गृह बना है। चारों ओर प्रदक्षिणा पथ।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
सकल जैन पंचान झांसी	आदिनाथ	कायोत्सर्ग	चितकबरा	--------

४८. चन्द्रप्रभु मन्दिर – साढ़े पाँच फुट अवगाहना वाली प्रतिमा। गर्भ गृह मण्डपनुमा है। चारों ओर प्रदक्षिणा पथ है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
सकल जैन पंचान झांसी	चन्द्रप्रभु	कायोत्सर्ग	चितकबरा	--------

४९. आदिनाथ मन्दिर – छह फुट अवगाहना वाली प्रतिमा। गर्भ गृह स्तम्भों पर है। चारों ओर प्रदक्षिणा पथ है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
सकल जैन पंचान कटक	आदिनाथ	कायोत्सर्ग	चितकबरा	सं. १९३६

मदिर नं ४७,४८ ४९

५०. विमलनाथ मन्दिर – छह फुट अवगाहना वाली प्रतिमा। इसमें गर्भ गृह और अर्धमण्डप बना है। मन्दिर संवत् १८३६ में प्रतिष्ठित।

निर्मापयिता *	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
-------	विमलनाथ	कायोत्सर्ग	मूंगिया	---------

१. इस मन्दिर की बगल में पत्थर की पटियों का बना हुआ एक लम्बा मण्डप है। यह महावीर मन्दिर था। इसमें मूर्तियाँ विराजमान थी। इसकी जीर्णदशा देखकर मूतियाँ मन्दिर नं. ५० में पहुँचा दी गई।

२. इस मन्दिर के एक लेख के अनुसार –'बुन्देलखण्ड में दिलीपनगर (दतिया) के राजा इन्द्रजीत के पुत्र छत्रजीत के राज्य में नोंरोदा निवासी बोटेराम ने भ. देवेन्द्रभूषण के उपदेश से सं. १८३६ में एक जिन मूर्ति स्थापित की ऐसा कहा गया है' लेख में मूर्ति के शिल्पकार का नाम घासी था।

३. मन्दिर से थोडी दूर चलने पर एक रम्य स्थान मिलता है। मध्य में एक सिंहासन है। ऐसा लगता है कि आचार्य का पीठासन है जिसके चारों ओर मुनियों के बैठने के लिये स्थान बने हुए हैं। पास ही विशाल चबूतरा है जहाँ पर उपस्थित जनता उनके उपदेश श्रवण का लाभ प्राप्त कर सकती है।

४. इसके आगे अलग अलग पाँच गुफायें है जो मुनियों के ध्यानाध्यन हेतु बनाई गई प्रतीत होती हैं। आगे चलकर एक ऐसी गुफा है जिस पर पत्थर की चट्टान धरी है। उसमें साधु के प्रवेश करने के लिये एक मार्ग बना है जो अत्यन्त वैराग्योपादक है।

५१. शान्तिनाथ मन्दिर – ६ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा। मन्दिर में गर्भ गृह और प्रदक्षिणा पथ है।

निर्मापयिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
------	शान्तिनाथ	कायोत्सर्ग	बादामी	---------

इस मन्दिर के एक लेख के अनुसार – इसमें संवत् १७६० में धर्मनाथ मन्दिर की प्रतिष्ठा का वर्णन है। यह मन्दिर मनीराम व रूक्मावती के पुत्र लाला बसुदेव ने बनवाया। प्रतिष्ठा के सम्बंध में भ. कुमारसेन व देवसेन के नाम भी अंकित है।

५२. महावीर मन्दिर – ढाई फुट अवगाहना वाली प्रतिमा एक शिला फलक पर विराजमान है। सिर पर छत्र, सिर के पीछे भामण्डल, ऊपर कोनों पर पुष्पमाल लिये हुये आकाशचारी गन्धर्व दिखाई पडते हैं। दोनों ओर चमर वाहक खडे हैं।

नीचे हाथ जोड़े दो भक्त दीख पड़ते हैं। मन्दिर में गर्भ गृह, महामण्डप और अर्धमण्डप बने हैं। मन्दिर प्राचीन है। बाहर दालान में दो प्रचीन चरण बने हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
-------	महावीर	पद्मासन	मटमैला	---------

इस मन्दिर में एक लेख में - 'सं. १९१७ में ललतपुर में रामचन्द' का नाम अंकित है।

५३. नेमिनाथ मन्दिर - पौने तीन फुट वाली प्रतिमा एक शिला फलक पर विराजमान है। सिर पर छत्रत्रयी है। दोनों ओर गजराज सूंड़ में माला लिये खड़े हैं शिला फलक पर दोनों ओर दो-दो पद्मासन तीर्थंकर प्रतिमा उत्कीर्ण हैं। प्रतिमाओं के दोनों ओर भक्तजन हाथ जोडे खडे हैं। वस्तुत: यह शिला फलक पाँच वाल यति तीर्थंकरों का है। इस मन्दिर में गर्भ गृह, अर्धमण्डप और आंगन है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
ग्वालियर वाले छोटेलाल जौहरी	नेमिनाथ	कायोत्सर्ग	लाल	---------

५४. नमिनाथ मन्दिर - इस मन्दिर में दो वेदियाँ हैं। मन्दिर में गर्भ गृह, अर्धमण्डप और आंगन है।

१. एक वेदी पर भगवान नमिनाथ की सं. १११२ श्री पद्मासन श्यामवर्ण तथा १८ इंच अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है।

२. दूसरी वेदी पर नेमिनाथ की मूर्ति है जो वीर सं. २४८१ में प्रतिष्ठित है यह पद्मासन मुद्रावाली श्वेत वर्ण ११ इंच अवगाहना वाली प्रतिमा है।

५५. सर्वतोभद्रिका - यह मन्दिर नं. ५४ के बाहर एक छतरी के नीचे एक पाषाण स्तम्भ में सर्वतोभद्रिका प्रतिमा बनी है। इसमें क्रमश:-

१. चन्द्रप्रभु अवगाहना ३ फुट
२. धर्मनाथ अवगाहना ३ फुट
३. पद्मप्रभु अवगाहना ३ फुट
४. महावीर अवगाहना ३ फुट

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
करहरा वाले सरू सिंघई	चौमुखी	कायोत्सर्ग	हरितनील	---------

५६. **श्रेयांसनाथ मन्दिर** – साढ़े तीन फुट अवगाहना वाली प्रतिमा। मन्दिर में केवल गर्भ गृह है। मन्दिर के बाहर आले में चरण बने हैं।

निर्मापयिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
सकल जैन पंचान करहरा	श्रेयांसनाथ	कायोत्सर्ग	हल्काहरा सफेद	---

नंगानंग कुमारों की छतरी –

मन्दिर नं. ५६ के बाहर चौक में एक पक्की सुन्दर छतरी में दो चरण चिन्ह मुनिराज नंगकुमार और मुनिराज अनंगकुमार बने हैं। इसे नंगकुमार व अनंगकुमार सहित साढ़े पाँच कोटि मुनिराज के निर्वाण की स्मृति रूप में माना जा सकता है।

चौपाई :- नंगानंगकुमार सुजान, पाँच कोडि और अर्द्ध प्रमान।
मुक्ति गये सोनागिर शीश, ते वन्दों त्रिभुवन पति ईश॥
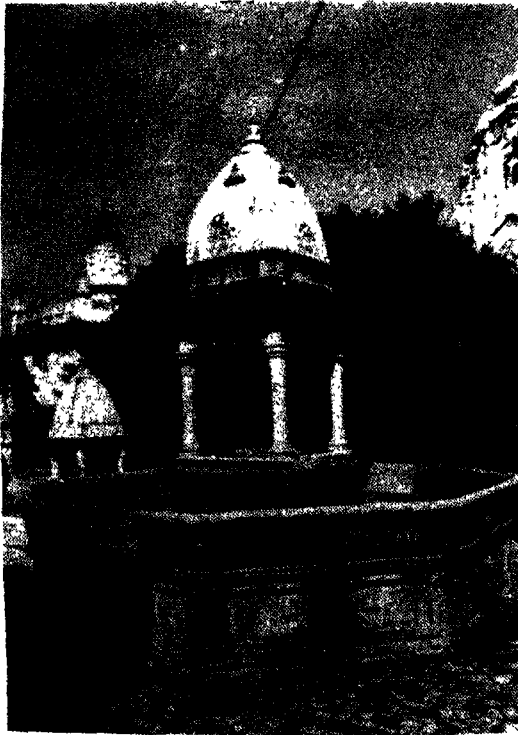
नंगानंग कुमारों की छतरी –

आचार्य विमलसागर चरण – नंगानंग कुमार की छतरी के पास पीछे की ओर एक पाषाण शिला पर आचार्य विमलसागर जी के चरण चिन्ह हैं।

५६. (अ) चतुर्मुखी – नंगानंग कुमार की छतरी के पास एक छोटा मंदिर है इसमें चतुर्मुखी प्रतिमा विराजमान है– चन्द्रप्रभु, महावीर, पद्मप्रभु तथा धर्मनाथ की है।

५६. (ब) पुष्पदन्त मन्दिर – मन्दिर नं. ५६ कें पास यह नवीन मन्दिर बना है मन्दिर का निर्माण सन् १९८२ में हुआ। प्रतिष्ठा वीर निर्वाण संवत् २५०८ में स्व. श्रीमती सरलादेवी एवं मातेश्वरी श्रीनीरज जैन मुजफ्फर नगर निवासी ने कराई।

निर्माप यिता	मूलनायक
श्री फतहराज कृष्णभूषण मुजफ्फर नगर वाले	पुष्पदन्त

काफी समय से धैर्य एवं संयम तथा भक्ति भाव से आप वन्दना करते आ रहे हैं और अब आपकी प्रतीक्षा का मन्दिर भगवान चन्द्रप्रभु का मन्दिर। कुछ क्षण ठहर कर अवलोकन करें यहाँ की दृश्यावली। आपका ह्दय एक अलौकिक आनन्द से भर उठेगा।

५७. भगवान चन्द्रप्रभु का मुख्य मन्दिर – सोनागिर क्षेत्र पर यह प्रमुख चन्द्रप्रभु मन्दिर है। 5½ हाथ अवगाहना वाली भगवान चन्द्रप्रभु की प्रतिमा भव्य, मनहर एवं आकर्षक है। प्रतिमा के चरण तक का भाग दिखाई देता है। पीठासन भूमि के नीचे दबा है। प्रतिमा के सिरपर छत्रत्रयी सुशोभित हैं। सिर के पीछे भामण्डल बना है। उसके दोनों ओर लेख उत्कीर्ण है जो प्राचीन लेख की नकल बताया जाता है। इस सम्बंध में पूर्व में उल्लेख किया गया है।

सोनागिर के शीश पर चन्द्रप्रभु अभिराम।
देव इन्द्र पूजत चरण , निशिदिन आठों याम ॥१॥
चन्द्र वदन मन मोहने, वीतराग सुख कन्द।
महासेन के लाडले, जय जय जयति जिनन्द ॥२॥
भक्ति भाव वश आयके, सोनागिर के शीश।
चन्द्रप्रभु पद पूजके, पाऊ पद अवनीश ॥३॥

जोगीरास – चन्द्रवदन मनहरण जिनेश्वर सोनागिर पर सोहै।
वीतराग शुभ परम दिगम्बर, देखत भविजन मोहै॥
साढे पाँच उत्तुङ्ग हाथ, वपु मूरत सुभग सुखारी।
जजत जिनेश्वर के पद पङ्कज, बार बार बलिहारी॥

भगवान चन्द्रप्रभु की मूर्ति अत्यन्त मनोज्ञ एवं चमत्कारिक है। भक्ति पूर्वक इसकी ओर टकटकी लगाकर देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि मूर्ति की आंखों में एक दिव्य तेज, प्रकाश पुंज प्रस्फुटित हो रहा है तथा मौन दिव्य सन्देश विकीर्ण कर रहा है। सन्देश ! ऐसा सन्देश जो मन को छूता चला जा रहा है। यहाँ के वातावरण में मूक अलौकिक शान्ति, विराग और भक्ति का सौरभ घुला हुआ है।
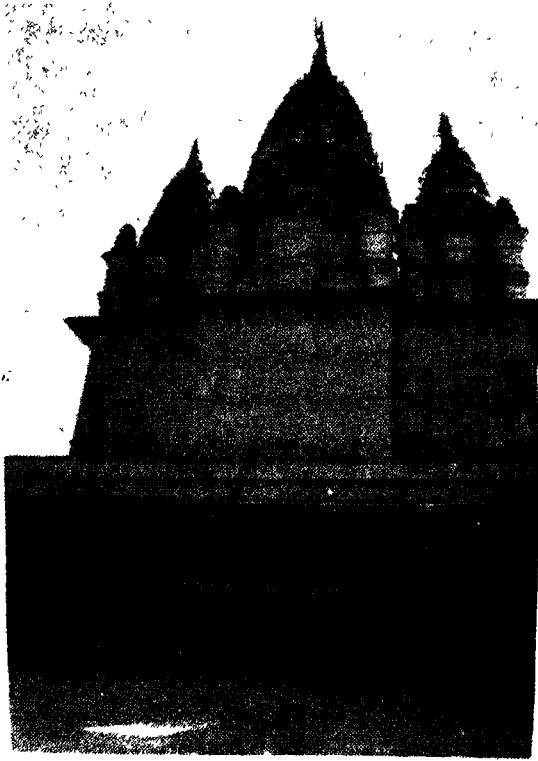
चन्द्रप्रभु मंदिर नं. ५७

५७. (अ) शीतलनाथ प्रतिमा – भगवान चन्द्रप्रभु की प्रतिमा के बायीं ओर भगवान शीतलनाथ की मूँगिया वर्ण की खडगासन सवा छह फुट अवगाहना की प्रतिमा एक पाषाण फलक में बनी हुई है। सिर पर छत्रत्रयी सुशोभित है। इस

फलक पर दो तीर्थंकर प्रतिमाएँ बनी हुई हैं। यह सवत् १३९२ में प्रतिष्ठित हुई।

५७. (ब) पार्श्वनाथ प्रतिमा – भगवान चन्द्रप्रभु के दूसरी ओर दायीं तरफ के गर्भ गृह में भगवान पार्श्वनाथ की खड्गासन साढे छह फुट अवगाहना की प्रतिमा विराजमान है। सिर पर छत्रत्रय है। छत्र के दोनों ओर एक एक अर्हन्त प्रतिमा बनी हैं। नीचे गजारूढ चमरेन्द्र हैं। मूर्ति के अधोभाग में दो भक्त हाथ जोडे खडे हैं। इनके अतिरिक्त इस मन्दिर में पाँच वेदियाँ और हैं।

१. प्रथम वेदी कलकत्ता वाली भगवान महावीर की – मुख्य दरवाजे से प्रविष्ट होने पर बायीं दिशा में बरामदे में वेदी है। इसमें भगवान महावीर की श्वेत पाषाण की पद्मासन १४ इंच अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। इसकी प्रतिष्ठा वीर संवत् २४८१ में हुई।

२. दूसरी वेदी आगरा वाली भगवान पार्श्वनाथ – उपरोक्त प्रथम वेदी के ठीक सामने दूसरे सिरे पर इसी बरामदे में भगवान पार्श्वनाथ की कृष्ण वर्ण पद्मासन १८ इंच अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। इसकी प्रतिष्ठा संवत् १९३० में हुई।

३. तीसरी वेदी दीवानजी वाली भगवान नेमिनाथ – मूलनायक भगवान चन्द्रप्रभु व उनके निकट भगवान शीतलनाथ व भगवान पार्श्वनाथ इन तीनों वेदियों की प्रदक्षिणा के पश्चात् एक वेदी मिलती है जिसमें मूलनायक भगवान नेमिनाथ के अतिरिक्त पार्श्वनाथ, चन्द्रप्रभु और शान्तिनाथ की श्वेत वर्ण पद्मासन प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

४. चतुर्थ वेदी कालपी वाली – भगवान पार्श्वनाथ उपरोक्त वेदी क्रमांक ३ के आगे कृष्ण वर्ण भगवान पार्श्वनाथ की और श्वेत वर्ण चन्द्रप्रभु विराजमान है

५. पांचवी वेदी भगवान सुपार्श्वनाथ – चतुर्थ वेदी के सामने उसी दालान में दूसरे सिरे पर भगवान सुपार्श्वनाथ की श्वेत वर्ण भव्य प्रतिमा विराजमान है। इसके सिर पर नौ फणावली है नीचे स्वास्तिक चिन्ह है। मूर्ति लेख के अनुसार मूलसंघ सरस्वती गच्छ के भट्टारक धर्मचन्द जी ने संवत् १२७२ में करायी।

१. संवत् १२७२ वरष (षे) माघ सुदी ११ श्री मूलसंघ (के) सुर (सर)
२. सति गछ (गच्छे) ---------------------------
३. --

इस वेदी में आगे श्रेयांसनाथ, विमलनाथ और कुन्थनाथ भगवान की पद्मासन श्वेतवर्ण प्रतिमा विराजमान हैं।

यहाँ मन्दिर नं. ५७ में ही पार्श्वनाथ की मूर्ति के पाद पीठ पर अंकित लेख है – ''पुष्करगच्छ ऋषभसेन गणधरान्वय के भ.विजयसेन के शिष्य भ. लक्ष्मीसेन तथा रावतचन्द व उसकी पत्नि केशरबाई के नाम अंकित हैं।''
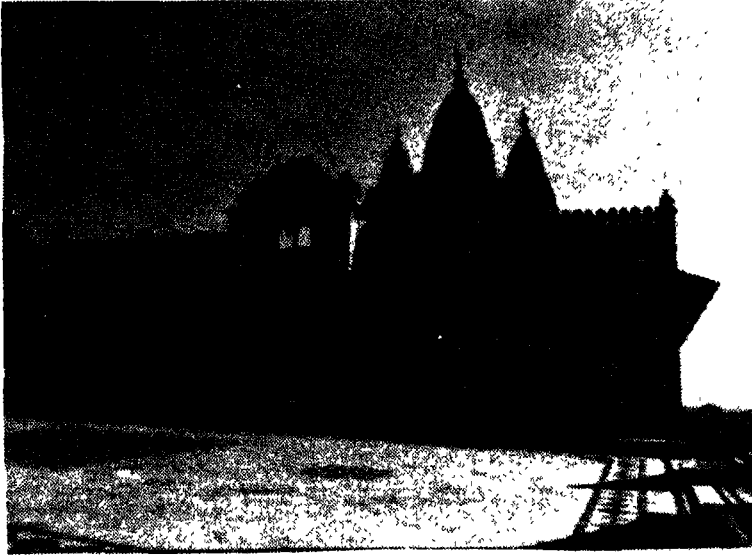
चन्द्रप्रभु का बाहरी दरवाजा

मन्दिर बहुत विशाल है। मूल गर्भ गृह भगवान चन्द्रप्रभु के आगे संगमरमर का चौक है तथा चारों और बरामदों में संगमरमर का फर्श है। भक्तजनों के लिये यह स्थान भक्ति का केन्द्र है। पर्यटकों के लिये सुन्दर दर्शनीय स्थल है।

भगवान बाहुबली – मन्दिर के बाहर ही एक विशाल प्रांगण संगमरमर के फर्श का है। इसके एक ओर छतरी में भगवान बाहुबलि की श्वेत वर्ण खड़गासन ध्यान मुद्रा में साढ़े सात फुट अवगाहना वाली प्रतिमा है। इसकी स्थापना वीर निर्वाण संवत् २४७७ वि.सं. २००८ में साहू डमरूलाल के सुपुत्र साहू श्रीपाल गयेलिया गोत्रीय ज्ञातिय खरौआ निवासी अमायन ने कराई।

प्रशस्ति – ''श्रवृषभायनमन्रा श्री १००८ श्री वीर निर्वाण सम्वत् २४७७ श्री विक्रम सम्वत् २००८ शक १८०१ सन् १९५१ श्री बैसाख मासे शुभे शुक्ल पक्षे तिंथौ ५ (अपठित) शुक्रवासरे पुनर्वसु नक्षत्रे शुभ गण्ड योगे श्री सरस्वती गच्छे बलात्कारगणे श्री कुन्दकुन्दाचार्य दिगम्बराम्नाय प्रतिष्ठाकारक लाडनू निवासी खण्डेलवाल ज्ञातिय पाटनी गोत्रोद्वव श्री मूलचन्द जी भंवरलाल जी श्रेष्ठिवर्य श्री यदुवंशे लम्ब कञ्चुकान्वये चन्दोरिया गोत्रीय भिण्ड वास्तव्य श्री झम्मनलाल जी जैन तर्क तीर्थ एवं परवार ज्ञातिय टीकमगढ निवासी पं. नन्हेलाल जी शास्त्री द्वारा प्रतिष्ठा पया शाह दमरूलाल के सुपुत्र साहु श्रीपाल गयेलिया खरौआ अमायन (भिण्ड) (अपठित) श्री सिद्ध क्षेत्र सोनागिर जी में स्थापित कराई।

छतरी बाहुबलि स्वामी लेख – ''श्री १००८ बाहुबलि स्वामी जी की प्रतिमा प्रतिष्ठा श्री वीर निर्वाण संवत् २४७७ में शाह दमरूलाल जी के आत्मज श्री श्रीपाल इनके पुत्र रामस्वरूप मक्खनलाल पूरनलाल पौत्र राजकुमार, भानुकुमार, वीरकुमार आदिकुमार, प्रकाशचन्द, सुरेशचन्द नरेशचन्द, सुमितचन्द, विनोदकुमार, महेशचन्द, अशोककुमार प्रपौत्र मनोजकुमार, सुनीलकुमार, राकेशकुमार, प्रमोदकुमार गयेलिया खरौआ अमायन (भिण्ड)''

नंग-अनंगकुमार की छतरी – बाहुबलि मूर्ति के आजू बाजू नंगकुमार एवं अनंगकुमार की छतरियाँ हैं। बायीं ओर की छतरी में नंगकुमार की श्वेतवर्ण खडगासन मुद्रा में साढे सात फुट वाली प्रतिमा है। नंगकुमार की यह छतरी

झँवरलाल के सुपुत्र युवारत्न चैनरूप जी बाकलीवाल, डीमापुर (नागालैंड) ने वीर नि. संवत् २५०६ सं. २०३६ में स्थापित कराई।

बाहुबलि मूर्ति के दायीं तरफ अनंगकुमार की छतरी है इसमें अनंगकुमार की श्वेत वर्ण खड़गासन मुद्रा में साढ़े फुट अवगाहना वाली प्रतिमा है। इसकी स्थापना स्व. श्रीमान् सेठ कन्हैयालाल जी के सुपुत्र गुरुभक्त श्री पन्नालाल जी सेठी, डीमापुर (नागालैंड) ने वीर नि. संवत् २५०६ सं. २०३६ में कराई।

ये दोनों नंगकुमार अनंगकुमार एवं बाहुबलि स्वामी की मूर्तियाँ एक ही पंक्ति में अत्यंत मोहनीय एवं आकर्षक लगती हैं। इनके दर्शन मात्र से दु:खित एवं चिंतातुर व्यक्ति भी शान्ति का अनुभव करने लगता है।

मानस्तम्भ – बाहरी संगमरमर के प्रांगण में भगवान चन्द्रप्रभु के मन्दिर के समाने संगमरमर का ही विशाल उत्तुंग ४३ फुट ऊँचा मानस्तम्भ है। उसकी शीर्षस्थ वेदिका में चारों दिशाओं में चार भगवान चन्द्रप्रभु की प्रतिमाएँ विराजमान हैं। यह प्रतिमाएँ श्वेत वर्ण की पद्मासन मुद्रा में हैं। इसका निर्माण श्री हुब्बलाल जैन जरसेना वालों ने वीर वि. संवत् २४६८ में कराया।

वर्तमान चौबीसी – इस मानस्तम्भ के तीनों ओर वर्तमान चौबीस तीर्थंकरों की प्रतिमाऐं खड़गासन मुद्रा में छतरियों में विराजमान हैं। इनका निर्माण एवं प्रतिष्ठा आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज की प्रेरणा से हुआ। इनकी प्रतिष्ठा सन् १९९२ में हुई।

समवशरण मन्दिर – मानस्तम्भ एवं चौबीस तीर्थंकर के पीछे समोशरण मन्दिर बना है। यह दो भागों में है। ऊपरी भाग में बीचों बीच समवशरण की रचना है। गन्धकुटी में भगवान चन्द्रप्रभु की चतुर्मुखी श्वेत पाषाण की प्रतिमा पद्मासन मुद्रा में विराजमान है। इसका निर्माण स्व. लाला झंडूमल के सुपुत्र स्व. श्री मुखीमल जैन जैसवाल नाई की मंडी, आगरा वालों ने वीर सं. २४९३ में मिती चैत कृष्णा पंचमी वि. सं. २०२३ दि. ३० मार्च १९६७ में कराया।

इस समोशरण मन्दिर के अधोभाग में संग्रहालय है जिसमें वर्तमान में खण्डित मूर्तियों का संग्रह है।

५८ पार्श्वनाथ मन्दिर – ६ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा है। इस मन्दिर में दो कक्षों में दो प्रतिमाएँ ६ फुट अवगाहना वाली भगवान आदिनाथ और भगवान महावीर की विराजमान हैं।

निर्मापयिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
झांसी वाले सि. देवकीनन्दन	पार्श्वनाथ	कायोत्सर्ग	मूंगिया	वि. १८५५

इस मन्दिर के लेख के अनुसार - 'संवत् १८५५ में दतिया के राजा छत्रजीत के राज्यकाल में बलवन्तनगर निवासी परमान्द व प्रतापकुंवरि के पुत्र लाला देवकीनन्दन भगवानदास मुकुन्दलाल व रामप्रसाद द्वारा आदिनाथ, पार्श्वनाथ व महावीर के मन्दिरों का निर्माण कराया। प्रतिष्ठा भ. महेन्द्रकीर्ति द्वारा सम्पन्न हुई।
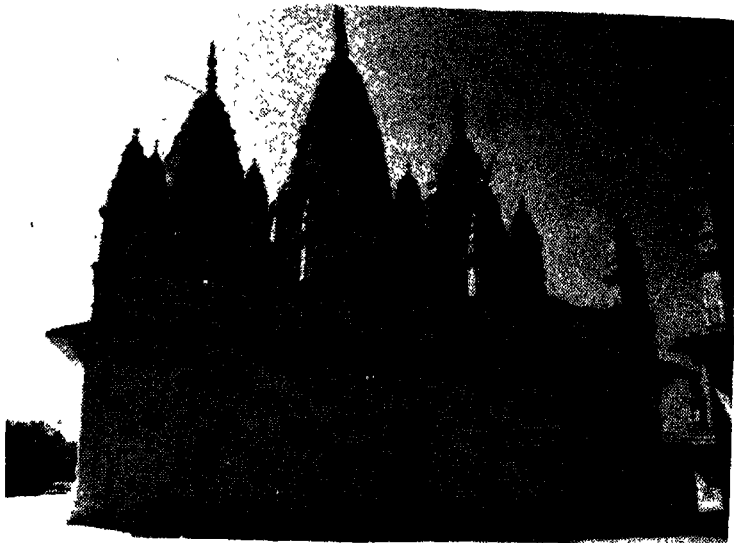
मंदिर नं. ५८

कीर्ति स्तम्भ - उपरोक्त मन्दिर के सामने चबूतरे पर एक कीर्ति स्तम्भ धर्मचक्र ३० फुट ऊँचा श्वेत पाषाण का है जिसका निर्माण सेठ गुलाबचन्द चाँदवाड, दानाओली, लश्कर (ग्वालियर) ने सं. २०३५ में कराया।

समवशरण मंदिर– एक चबूतरे पर कीर्ति स्तम्भ के सामने समवशरण मंदिर स्थापित किया गया है।

५९. आदिनाथ मन्दिर – ६ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा। मन्दिर में गर्भ गृह और प्रदक्षिणा पथ बने हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
जैन पंचान, छतरपुर	आदिनाथ	कायोत्सर्ग	मूंगिया	--------

मदिर न ५९

६०. सुपार्श्वनाथ मन्दिर – यह मन्दिर तीन कटनी से सुसज्जित पाण्डुक शिला जैसी आकृति का बना है। पिसनहारी का मन्दिर नाम से प्रसिद्ध है। २ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
------	सुपार्श्वनाथ	पद्मासन	श्वेत हल्का	सं. १५४९

६१. नेमिनाथ मन्दिर – ३ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। मन्दिर में गर्भ गृह और प्रदक्षिणा पथ बने है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
जैन पंचान मऊरानीपुर	नेमिनाथ	कायोत्सर्ग	कृष्ण	------
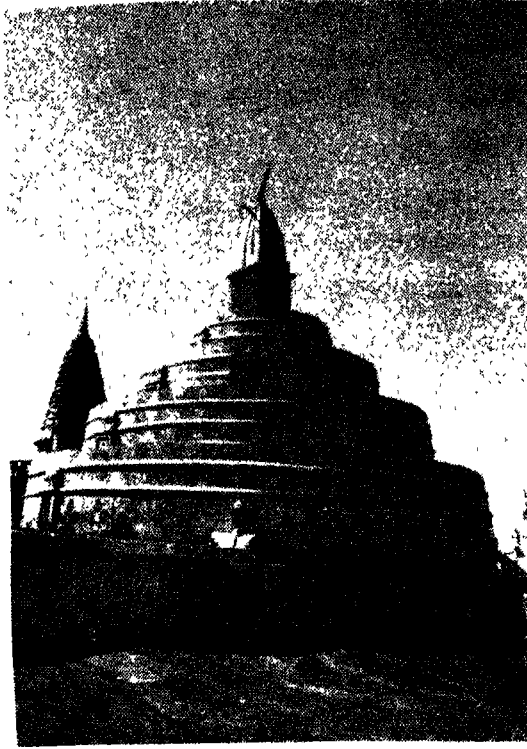
पिसनहारी का मंदिर नं. ६०

६२. महावीर मन्दिर – ६ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। मन्दिर में गर्भ गृह और प्रदक्षिणा पथ बने हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
जैन पंचान मऊरानीपुर	महावीर	कायोत्सर्ग	मूंगिया	-----

६३. पार्श्वनाथ मन्दिर – ६ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। मन्दिर में गर्भ गृह और प्रदक्षिणा पथ बने हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
वरया, ललितपुर	पार्श्वनाथ	कायोत्सर्ग	सफेद हल्का	----

६४. पार्श्वनाथ मन्दिर – १८ इंच अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
पंछीलाल मैनपुरी वाले	पार्श्वनाथ	पद्मासन	कृष्ण	सं. १९३०

६५. चन्द्रप्रभु मन्दिर – एक फुट अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। मन्दिर में प्रदक्षिणा पथ और गर्भ गृह बने हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
श्रीमती देवाबाई खुरजा	चन्द्रप्रभु	पद्मासन	श्वेतवर्ण	सं. १९८०

६६. संभवनाथ मन्दिर – १० इंच अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। मन्दिर में लघु गर्भ गृह एवं प्रदक्षिणा पथ है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
श्रीमती अशरफीबाई अलीगढ	संभवनाथ	पद्मासन	श्वेतवर्ण	सं. १९८४

६७. महावीर मन्दिर – ३ फुट ९ इंच अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। मन्दिर में गर्भ गृह और प्रदक्षिणा पथ बने हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
जैन पंचान, कालपी	महावीर	कायोत्सर्ग	हल्का सफेद	----

देवी – इस मन्दिर के आगे एक गुफा में देवी की मूर्ति है।उसकी गोद में ७ बच्चे हैं।

छतरी – इसके आगे दो छतरियाँ बनी हैं जिनमें दो चरण चिन्ह बने हैं।

६८. महावीर मन्दिर – २१ इंच अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। मन्दिर में गर्भ गृह और प्रदक्षिणा पथ बने हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
-------	महावीर	पद्मासन	कत्थई	--------

१. चन्द्रप्रभु – इस उपरोक्त मन्दिर के प्रदक्षिणा पथ में भगवान चन्द्रप्रभु की प्रतिमा पद्मासन मुद्रा, कत्थई २ फुट अवगाहना वाली प्रतिष्ठा सं. १८५१.

२. भगवान महावीर – प्रदक्षिणा पथ में ही चन्द्रप्रभु की प्रतिमा के आगे चलकर एक कोने में एक और वेदी बनी हुई है जिसमें एक शिला फलक पर भगवान महावीर स्वामी की प्रतिमा विराजमान है। सिर के ऊपर छत्रत्रयी बनी हुई है।शीर्ष पर दोनों ओर गजलक्ष्मी और सर्प लिये हुए गन्धर्व दीख पड़ते है। मूर्ति के सिर के दोनों ओर खडगासन तीर्थंकर मूर्तियां बनी हैं। चरणों के दोनों ओर चमरेन्द्र खडे हैं। अधोभाग में दो सिंह बने हैं।

६९. आदिनाथ मन्दिर – **३ फुट** अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। मन्दिर में गर्भ गृह और प्रदक्षिणा पथ बने हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
लश्कर वाले दयाराम	आदिनाथ	कायोत्सर्ग	मूंगिया	--------

अब आगे बहुप्रतीक्षित अतिशय युक्त स्थान हैं, दर्शन से श्रद्धा भक्ति बढ़ाइये

बाजनी शिला – यहाँ से एक मार्ग **बाजनी शिला** की ओर गया है। रास्ते में एक छतरी में क्षेत्रपाल विराजमान हैं।

नारियल कुण्ड – छतरी से आगे बढने पर एक छोटा सा नारियल के आकार का कुण्ड बना है।

बाजनी शिला और नारियल कुण्ड के बारे में पूर्व में लिखा गया है।

चरण मुनिराज – नारियल कुण्ड के बगल में मुनिराज के चरण बने हैं।
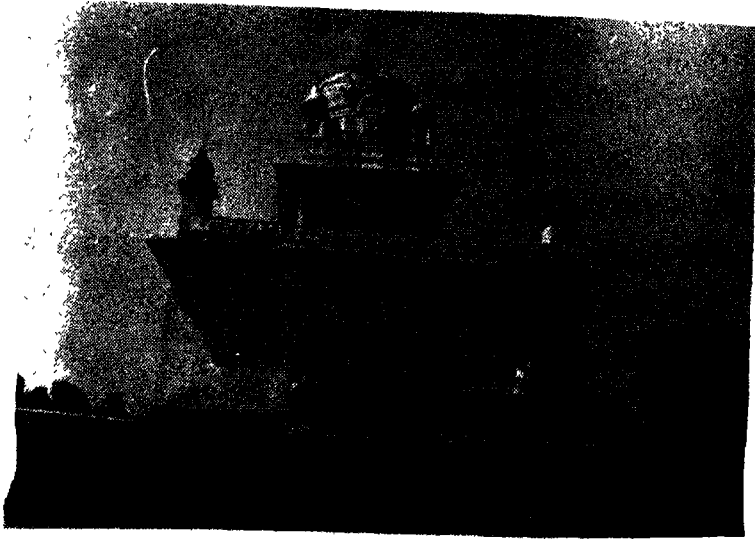
मंदिर नं ७०

७०. पार्श्वनाथ मन्दिर – ६ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा है। मन्दिर में गर्भ गृह और प्रदक्षिणा पथ बने हैं। इसकी प्रतिष्ठा चौधरी खड्गसेन वरैया ने कराई। यह खडगसेन कविवर परिमल के वंशज में से हैं। कविवर परिमल ने सं. १६५१ में श्रीपाल चरित्र की रचना की थी। इनके पूर्वज चन्दन चौधरी तोमर राजाओं के मंत्री एवं श्रेष्ठीजन में थे।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
करहिया वाले चौधरी खडगसेन वरैया	पार्श्वनाथ	कायोत्सर्ग	बादामी	--------

७१. सर्वतोभद्र – इस मन्दिर में एक छतरी के नीचे ३ फुट ऊंची सर्वतोभद्रिका प्रतिमा विराजमान है जिसमें चारों दिशाओं में आदिनाथ, वासपूज्य, अनन्तनाथ और कुन्थनाथ की प्रतिमाएँ हैं।

७२. पार्श्वनाथ मन्दिर – ४० इंच अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। मन्दिर में गर्भ गृह और प्रदक्षिणा पथ बने हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
वरैया जैन पंचान मगरौनी	पार्श्वनाथ	कायोत्सर्ग	कृष्ण	सं. १८८४
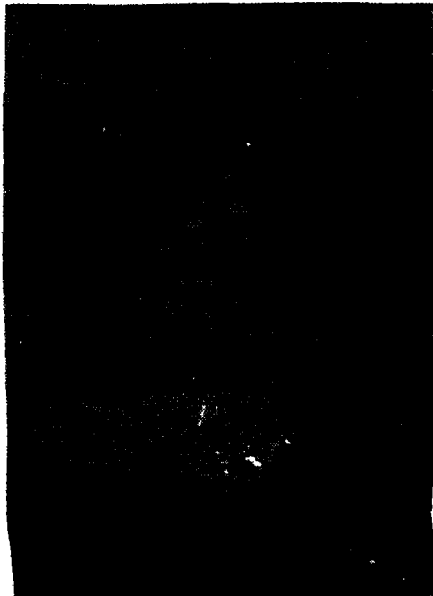
मंदिर नं. ७२

१. चन्द्रप्रभु – इसी मन्दिर में एक दूसरी वेदी है जिसमें भगवान चन्द्रप्रभु की प्रतिमा विराजमान है। ५ फुट अवगाहना खडगासन मुद्रा, प्रतिष्ठा सं. १८८४.

७३. नेमिनाथ मन्दिर – साढे चार फुट अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। सिर के ऊपर छत्रत्रयी, सिर के पीछे भामण्डल है। अधोभाग में एक ओर यक्ष हैं तथा दूसरी ओर वृषम की पीठ पर चतुर्भुजी यक्षी आरूढ हैं। मन्दिर में गर्भ गृह और प्रदक्षिणा पथ है।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
पंच लोहियान	नेमिनाथ	कायोत्सर्ग	मूंगिया	--------

७४. महावीर मन्दिर – इस मन्दिर में सात वेदियाँ हैं।लेकिन इस मंदिर के दो भाग ७४ अ, ७४ ब हो गये हैं। एक मन्दिर में पाँच और दूसरी में दो वेदियाँ हैं।

१. भगवान महावीर – मुख्य वेदी पर भगवान महावीर की प्रतिमा पद्मासन श्वेतवर्ण -- ३ फुट अवगाहना – प्रतिष्ठा सं. १८३८। मूर्ति के पाद पीठ पर निम्न प्रकार लेख है –

''संवत् १८३८ वर्षे मार्ग वदी ५ सोमवासरे सिद्ध योगे बुन्देलखण्ड क्षेत्रे दिलीपनगरे सोनागिर वरे श्री राज्य महाराज श्री महाराजाधिराज श्री बहादुर इन्द्रजीत जू देव तत श्री महाराजाधिराज राव राजा बहादुर श्री शत्रजीत जू देव वर्तमान राज्ये श्री मूलसंघे सरस्वती गच्छे बलात्कार गणे कुन्दकुन्दाचार्य आम्नाय भट्टारक श्री १०८ श्री मुनेन्द्रभूषण जी देव तत्पट्टे भट्टारक श्री देवेन्द्रभूषण जी देव तदाम्नाय श्रावक श्री खण्डेलवाल जैसवाल तथा वरहिया तत प्रतिष्ठा करापितं ते नित्यं प्रणमितम् ॥''

२. भगवान महावीर – बायीं ओर भगवान महावीर की श्वेतवर्ण खडगासन मुद्रा में ६ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा है।

३. भगवान मुनिसुव्रतनाथ – दायीं ओर मुनिसुव्रतनाथ की श्वेतवर्ण की खडगासन मुद्रा में ६ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा है। इसकी प्रतिष्ठा सं. १८२६ में हुई।

४. भगवान पार्श्वनाथ – बरामदे में आने पर पार्श्वनाथ भगवान की कृष्ण वर्ण की पद्मासन मुद्रा वाली १५ इंच अवगाहना वाली प्रतिमा है। इसकी प्रतिष्ठा सं. १९३० में हुई।

दूसरे बरामदे में गर्भ गृह में तीन वेदियाँ बनी हैं :-

५. (अ) चन्द्रप्रभु भगवान – मध्य वेदी में भगवान चन्द्रप्रभु की श्वेत वर्ण की पद्मासन मुद्रा में 1½ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। इसकी प्रतिष्ठा वीर सं. २४७० में हुई।

५. (ब) भगवान पार्श्वनाथ – उपरोक्त भगवान चन्द्रप्रभु की प्रतिमा के एक ओर पार्श्वनाथ की प्रतिमा विराजमान है। कृष्ण वर्ण – पद्मासन – १ फुट अवगाहना।

५. (स) भगवान पार्श्वनाथ – भगवान चन्द्रप्रभु की प्रतिमा के दूसरी ओर भी भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा विराजमान है। कृष्ण वर्ण – पद्मासन – १ फुट अवगाहना।

इसी बरामदे में बायीं ओर की वेदियों पर –

७४. (अ) ६. भगवान पार्श्वनाथ – मन्दिर के नीचे भोंयरे में श्वेतवर्ण पद्मासन मुद्रा में ४ फुट अवगाहना की प्रतिमा विराजमान है।इसकी प्रतिष्ठा संवत् १८३८में हुई। इसका अलग नम्बर दे दिया गया है। भोंयरा अति संकीर्ण है। इस पर लेख :–

"सवत् १८३८ वर्षे मार्ग वदी ५ सोमवारे सिद्धयोगे बुन्देल खण्ड क्षेत्रे दिलीपनगरे सोनागिर वरे श्री राज्य महाराज श्री महाराजाधिराज श्री बहादुर इन्द्रजीत जुदेव तत् श्री महाराजाधिराज राव राजा बहादुर श्री शत्रजीत जूदेव वर्तमान राज्ये श्री मूलसंघे सरस्वती गचछे बलात्कारगणे कुन्दकुन्दाचार्य आम्नाय भट्टारक श्री १०८ श्री मुनेन्द्रभूषण जी देव तत्पट्टे भट्टारक श्री देवेन्द्रभूषण जी देव तदाम्नाथ श्रावक श्री खण्डेलवाल व जैसवाल तथा वरहिया तत् प्रतिष्ठा करा पितं ते नित्यं प्रणमियतम्।"

७४. (ब) ७. शान्तिनाथ मन्दिर – इस नवीन मन्दिर में भगवान शान्तिनाथ की श्वेतवर्ण पद्मासन मुद्रा में डेढ फुट अवगाहना की प्रतिमा है। इस वेदी का जीर्णोद्धार वीर. सं. २४९१ में हुआ।

चरण चिन्ह – एक वेदी में मुनिराज के चरण चिन्ह हैं।

क्षेत्रपाल – मन्दिर क्रमांक ७४ के आगे क्षेत्रपाल की बडी मूर्ति मिलती है।

छतरियाँ – इससे आगे नीचे उतरते ही आमने सामने दो छतरियाँ बनी हैं। दोनों में चरण चिन्ह अंकित है। यहाँ बडी छतरी में ऊपर गुम्बज में भी चरण चिन्ह हैं।

७५. चन्द्रप्रभु मन्दिर – 2¼ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। इस मूर्ति के बगल में एक फुट ऊँची एक तीर्थकर प्रतिमा विराजमान है। मन्दिर में अर्धमण्डप और गर्भ गृह बने हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
पल्टन वाले नेमीचंद हीराचंद	चन्द्रप्रभु	पद्मासन	कृष्ण	सं. १६५०

इस मन्दिर के लेख में – "सं. १९२४ में भ. चारुचन्द्रभूषण तथा पल्टन ग्राम के बालचन्द, लालचन्द का नाम अंकित है।

७६ चन्द्रप्रभु मन्दिर – इस मन्दिर में चार प्रतिमाएँ विराजमान हैं –

१. भगवान चन्द्रप्रभु – हल्के पीले वर्ण की खडगासन प्रतिमा विराजमान है। प्रतिष्ठा सं. १३५० की है।

२. भगवान आदिनाथ – स्वेतवर्ण, पद्मासन – प्रतिष्ठा सं. १८८४

३. भगवान महावीर – पद्मासन – श्वेतवर्ण – प्रतिष्ठा सं. १८८४

४. भगवान पार्श्वनाथ – पद्मासन – कृष्णवर्ण – प्रतिष्ठा सं. १९७९

यह मन्दिर चन्देरी के चौधरी परिवार के श्री सभासिंह ने निर्माण कराया जिनकी चन्देरी में विराजमान चौबीसी विख्यात है।

इस मन्दिर में पहले संग्रहालय प्राचीन मूर्तियों का था जिसे हटाया गया और उपरोक्त मन्दिर स्थापित किया गया। अब यह संग्रहालय गैलरी में प्रदेश से खण्डित, अखण्डित प्राचीन मूर्तियों का सुरक्षित है। इनमें एक नीलवर्ण पार्श्वनाथ की पद्मासन प्रतिमा संवत् ११०१ की है। प्रतिमा छोटी है। किन्तु कला एवं पुरातत्व की दृष्टि से बहुमूल्य है।

लेख – १. इस मन्दिर में रखी हुई एक प्रतिमा सातवीं सदी की–संस्कृत नागरी लिपि में लेख है। इसमें स्थापनाकर्ता का नाम सिंघदेव पुत्र बडाक है।

२. संवत् १२४८ की सरंकृत नागरी लिपि में एक मूर्ति लेख – इस संवत् में मूर्ति स्थापक साधु सिवराज व उसकी पत्नि का उल्लेख है।

३. एक पीतल की मूर्ति के पाद पीठ पर लेख सं. १३८८ संस्कृत नागरी का, इसमें मूर्ति स्थापक साधु अभयदेव की पत्नि मल्ही के पुत्र केसो का नाम अंकित है।

४. १४ वीं सदी की संस्कृत नागरी के दो लेख इस मन्दिर में स्थित मूर्तियों पर – एक में काष्ठासंघ, सं.तेजपाल की पत्नि लाडा साह नरपति की कन्या थी, यह बतलाया गया है।

५. एक जिन मूर्ति के पाद पीठ पर सं. १५४५ संस्कृत नागरी का लेख है जिसमें सम्वत् के अलावा सब अस्पष्ट है।

६. एक मूर्ति के पाद पीठ पर सं. १५५८ तथा मुषसिंह, जराचन्द एवं जीतराज के नाम अंकित हैं।

७. एक मूर्ति के जिन पाद पीठ पर सम्वत् १५८१ के अतिरिक्त अन्य विवरण अस्पष्ट है।

८. दो मूर्ति के पाद पीठ पर सं. १५९९ वर्ष तथा काष्ठासंघ का उल्लेख है दूसरे में सं. १५९९ में काष्ठासंघ पुष्करगण के भट्टारक जयसेन तथा (अग्र) बाल ज्ञाति के गर्ग गोत्र के किसी गृहस्थ (नाम अस्पष्ट) का उल्लेख है।

९. एक मूर्ति के पाद पीठ पर सं. १६४७ तथा भट्टारक चन्द्रदेव का नाम अंकित है।

१०. एक मूर्ति के पाद पीठ पर सं. १६७३ तथा भट्टारक यशोविधि का नाम अंकित है।

११. एक मूर्ति के पाद पीठ पर सम्वत् १६८ (०) में ओरछा के बुन्देल राजा वीरसिंह देव के पुत्र जुगराज के राज्य में ललितकीर्ति के शिष्य धर्मकीर्ति के उपदेश से जगजीवन द्वारा इस मर्ति की स्थापना का निर्देशन है। संवत् निर्देश में अंतिम अंक अस्पष्ट है।

१२. एक मूर्ति के पाद पीठ पर सं. १७०७ में भ. विश्वभूषण के उपदेश से वत्स गोत्र के पदमसी के पुत्र श्यामदास द्वारा पार्श्वनाथ की मूर्ति की स्थापना का उल्लेख है।

१३. एक जिन मूर्ति के पाद पीठ पर स्थापना वर्ष सं. १८२८ तथा स्थापक देवेश का नाम अंकित है।

१४. एक लेख में सं. १८८८ तथा गोलानाथ अंकित है।

१५. एक जिन मूर्ति के पाद पीठ पर – 'बलात्कारगण के गोपाचल पट्ट के भ. जिनेन्द्रभूषण, महेन्द्रभूषण, राजेन्द्रभूषण के नाम अंकित हैं तथा सं. १९१३ मूर्ति स्थापना का वर्ष बताया है।

७७. महावीर मन्दिर – 1½ फुट अवगाहना वाली प्रतिमा विराजमान है। इसके परिकर में हाथ में देवियाँ सर्प लियें हुए हैं। विमान में दोनों ओर दो – दो देव–देवियाँ आ रहे है। इस मन्दिर में एक दालान और गर्भ गृह बने हैं।

निर्माप यिता	मूलनायक	आसन	वर्ण	मूर्तिप्रतिष्ठा सं.
नैनसुख जी	महावीर	पद्मासन	मटमैला	--------

छतरी – उपरोक्त मन्दिर के सामने छतरी में चरण बने हैं। उसके लेख में सं. १८९० में मण्डलाचार्य विजयकीर्ति के शिष्य हीरानन्द, मेघराज, परमसुख, भागीरथ आदि के नामों का उल्लेख है।

छतरी – उतरते समय मार्ग में एक और छतरी मिलती है। उसमें भी चरण चिन्ह हैं।

भग्न जिन बिम्ब – पहाड.से उतरते समय अंतिम द्वार के पास एक कोठे में भग्न जिन बिम्ब – ''सम्वत् ११०१ बका गोत्रे परवार जातिय।''

इस प्रकार जिस फाटक से वन्दना यात्रा प्रारम्भ होती है। वहीं आकर सम्पूर्ण पर्वतराज की वन्दना समाप्त होती है।

मनहरदेव शान्तिनाथ भगवान – श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र 'चैत्य मनहरदेव' ग्राम चैत्य जिला ग्वालियर में है। इसका प्रबंध दि. जैन वरहिया समाज करहिया (ग्वालियर) करती है। यहाँ पर पाडा साहब द्वारा प्रतिष्ठित प्रतिमा जी श्री १००८ शान्तिनाथ स्वामी मनहरदेव की वीर निर्माण सम्वत् ११८४ की १४ फुट अवगाहना वाली खडगासन प्रतिमा थी। इस क्षेत्र पर मूर्ति चोरों ने अनेक मूर्तियों के सिर काट लिये। इससे इस निर्जन वन में क्षेत्र पर शान्तिनाथ की इस विशाल मूर्ति की सुरक्षा हेतु इस प्रतिमा जी को सोनागिर सिद्धक्षेत्र पर वि. सं. २०२५ में लाया गया और भट्टारक १०८ श्री चन्दभूषण जी की कोठी में अलग वेदी बनाकर प्रतिष्ठित की गई। इतनी दूर लाने में इसके होंठ और हाथ में साधारण क्षति पहुँची है। इसके दोनों ओर चमरधारिणी हैं। नीचे एक छोटी अर्हन्त प्रतिमा बनी है। इस प्रतिमा की सुन्दरता के कारण ही इसका नाम 'मनहरदेव' पडा।

सोनागिर में इस प्रतिमा के मन्दिर का लेख –

''श्री १००८ दि. जैन गुरू श्री भ. संस्थान सोनागिर गादी सोनागिर उपदेशानुसार स्व. पूज्य पिता श्री हीरालाल जी माता कस्तूरबा देवी की पुण्य स्मृति में सुपुत्र नाथूराम पौत्र श्री बाबूलाल महावीरप्रसाद, राधेलाल तस्य पौत्र पदमचन्द, हरिशचन्द, राजेन्द्रकुमार, देवेन्द्रकुमार, अनिलकुमार, जिनेन्द्रकुमार, अरविन्द्रकुमार, सुमतिकुमार जैन वरहिया गोत्र धनोरिया करहिया हाल डबरा (ग्वा.) निवासी ने इस मन्दिर का निर्माण कराया। कार्तिक सुदी १४ वी. नि. सं. २४९७, वि. सं. २०२७'' वन्दना पर्वतराज की पूर्ण हुई।

भट्टारक कोठी में
श्री १००८ शान्तिनाथ भगवान
चन्द मनहरदेव, सोनागिर

१०
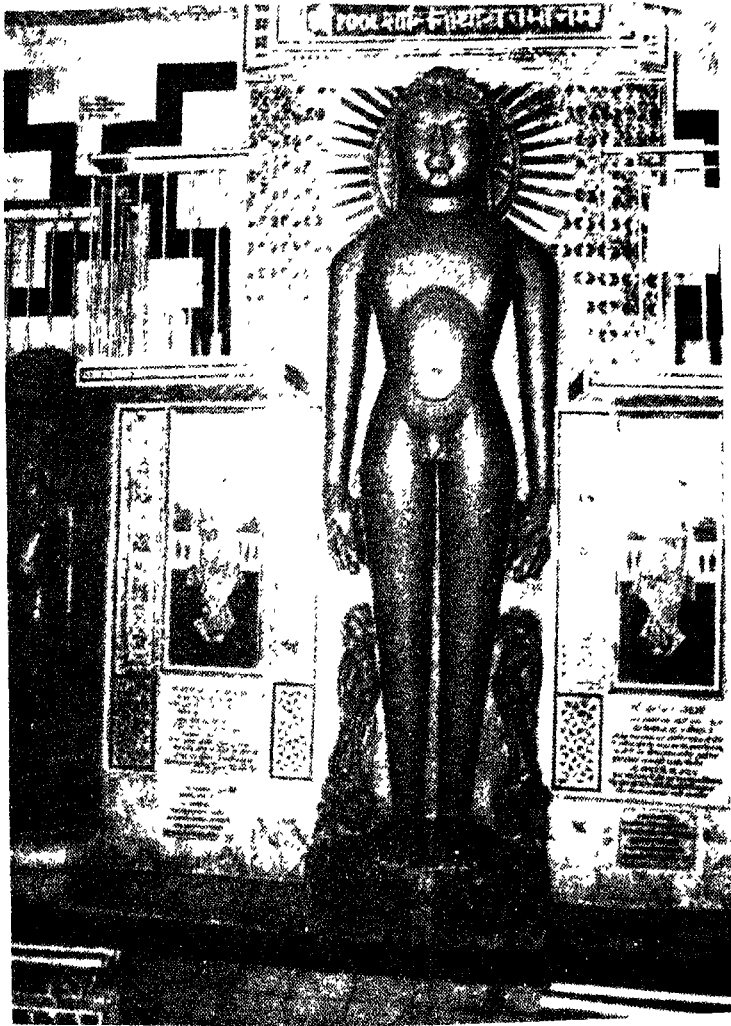
पर्वतराज की तलहटी के
卐 जिनालयों की वन्दना 卐

यह सोनागिर जहाँ ग्राम है, उसका नाम सिनावल,
जो श्रमण का विकृत वन, अपभ्रंश रूपक है।
इसका यही प्रमाण–करोड़ों, श्रमण साधुओं द्वारा,
किया सिद्ध पद प्राप्त, 'सरस' जो सोनागिर सूचक है॥

(सोनागिर सुषमा – शर्मनलाल 'सरस')

सोनागिर पर्वत के जिनालयों की वन्दना आप कर चुके हैं। आइये अब तलहटी के जिनालयों की वन्दना करें जिससे सोनागिर की सम्पूर्ण वन्दना हो जावेगी। तलहटी में ग्राम सिनावल में भी काफी मन्दिर हैं। तो आइये हमारे वर्णन के साथ इन जिनालयों की वन्दना करें।

क्रमांक	मन्दिर का नाम	प्रबन्ध
१.	मन्दिर श्रीरोडमल जी पांडया, लश्कर, ग्वालियर	तेरहपंथी पंचायत पुरानी सहेली खण्डेलवाल समाज, लश्कर, ग्वा.
२	मन्दिर श्री सेठ किशनलाल जी गंगवाल	" " " "
३.	मन्दिर मौ वाले खरौआ श्री धनीराम प्यारेलाल मौ (भिण्ड) वि. सं. १९५० फर्म चूरामन किशनलाल	श्री दि. जैन खरौआ समाज, मौ (भिण्ड)
४.	मन्दिर श्री खिमरौली वाला गोलसिंघार (जैन समाज)	खैरौली पंचायत
५.	मन्दिर सेठ हीरालाल जी एटा वालों का (पदमावती पुरवाल)	दि. जैन पदमावती पुरवाल पंचायत
६.	मन्दिर सेठ गोकुलचन्द जैसवाल, ग्वालियर वालों का जिसका जीर्णोद्धार श्री मोतीलाल कजोडीमल बहादुरसिंह ने कराया जिससे उन्ही के नाम से प्रसिद्ध हुआ।	तेरहपंथ पंचायत पुरानी सहेली खण्डेलवाल समाज, लश्कर, ग्वालियर

क्रमांक	मन्दिर का नाम	प्रबन्ध
७.	मन्दिर श्री गोकुलचन्द जी जैसवाल ग्वालियर वालों का	श्री दि. जैन जैसवाल समाज, मुरार
८.	मन्दिर भट्टारक श्री हरेन्द्रभूषण संस्थान गादी	श्री भट्टारक चन्द्रभूषण गादी संस्थान वरैया प्रबन्ध कारिणी समिति
९.	" " " " "	" " " "
१०.	मन्दिर सेठ गुलाबचन्द गनेशीलाल दोशी मुरार	स्वयं का परिवार
११.	मन्दिर श्रीमती दक्खोबाई धर्मपत्नि श्री नन्दकिशोर जैन गोत्र एछिया जाति वरैया निवासी ग्राम कुलैथ वालों का - इसमें भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिष्ठा वि. सं. १८३० में हुई थी।	श्री भट्टारक चन्द्रभूषण गादी संस्थान वरैया प्रबन्ध कारिणी समिति
१२.	मन्दिर करहिया के धनोरिया जाति वरैया परिवार श्री पन्नूलाल परमसुख भोलाराम पतराम वरैया। भ. पार्श्वनाथ व आदिनाथ की प्रतिष्ठा माघ सुदी ३ रविवार सं. १९५६	" " " "
१३.	मन्दिर सेठ गुन्दीलाल जी बैसाखिया झांसी	श्री दि. जैन पंचायत झांसी
१४.	मन्दिर श्री भट्टारक जी महाराज दिल्ली	श्री दि. जैन सिद्ध क्षेत्र संरक्षिणी कमेटी, सोनागिर
१५.	मन्दिर श्री १०८ भट्टारक जिनेन्द्रभूषण जी महाराज, ग्वालियर	श्री दि. जैन बीस पंथ पंचायत खण्डेलवाल समाज चम्पाबाग, लश्कर, ग्वालियर
१६.	मन्दिर श्री छीतरमल जैन जैसवाल राजाखेड़ा	श्री दि. जैन जैसवाल समाज, राजाखेड़ा

क्रमांक	मन्दिर का नाम	प्रबन्ध
१७.	मन्दिर श्री भट्टारक हरेन्द्रभूषण गादी संस्थान	श्री १०८ भट्टारक चन्द्रभूषण जी गादी संस्थान वरैया प्रबंध कारिणी समिति
१८.	मन्दिर श्री १०८ आचार्य सुमतिसागर जी महाराज त्यागी व्रती आश्रम	त्यागी व्रती आश्रम सोनागिर
१९.	मन्दिर छात्रावास प्रांगण में स्थित श्री दि. जैन चिंतामणी पार्श्वनाथ मन्दिर	अ.भा. स्याद्वाद शिक्षण परिषद, सोनागिर दतिया
२०.	मन्दिर श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर (प्रेस प्रांगण में)	पूर्वानुसार
२१.	मन्दिर श्री १००८ शान्तिनाथ जिनालय (स्याद्वाद नगर)	,, ,, ,, ,,
२२.	मन्दिर श्री पंचमेरू मन्दिर (स्थापित सन् १९९२)	श्री ब्र. चिरोंजीलाल जी चिरगांव वालों द्वारा
२३.	मन्दिर श्री दि. जैन गोमटेशगिरि मंदिर (स्याद्वाद प्रभु उद्यान आश्रम) स्थापित सन् १९९४	श्री राजेन्द्रप्रसाद महेन्द्रकुमार जैन आत्मज श्री बाबूलाल जैन, दिल्ली
२४.	मन्दिर १००८ चन्द्रप्रभ मन्दिर स्थापित दिनांक ८ मार्च सन् १९९५	श्री नंगानंग दि. जैन मंदिर परमागम ट्रष्ट सोनागिर
२५.	मन्दिर श्री दि. जैन मन्दिर एवं धर्मशाला बडौनी रोड, सोनागिर स्थापित सन् १९९५	श्री ज्ञानचन्दजी लावन जिला भिण्ड
२६.	मन्दिर श्री आदिनाथ दि. जैन मन्दिर विशाल धर्मशाला, चन्द्रनगर, सोनागिर	श्री प्रेमचन्द जैन जैसवाल, नरवर

क्षेत्र पर स्थित
卐 धर्मशालाओं का विवरण 卐

क्रमांक	नाम धर्मशाला	प्रबन्ध
१.	श्री भट्टारक जिनेन्द्रभूषण जी महाराज संस्थान व गादी, ग्वालियर बीस पंथी कोठी नाम से प्रसिद्ध है इसमें मन्दिर नं. १५ है। चन्द्र चौक में। भट्टारकजी इसे बीस पंथी पंचायत को दे गये हैं।	श्री दि. जैन बीस पंथी खण्डेलवाल पंचायती चम्पाबाग, लश्कर, ग्वा.
२.	श्री भट्टारक हरेन्द्रभूषण गादी संस्थान इसमें मन्दिर नं. १७ है। चन्द्र चौक में। इसे भट्टारक जी वरैया प्रबन्ध कारिणी समीति को दे गये है।	श्री भट्टारक चन्द्रभूषण गादी संस्थान वरैया प्रबन्ध कारिणी समिति
३.	श्री आचार्य सुमतिसागर त्यागी व्रती आश्रम धर्मशाला मन्दिर नं. १८ चन्द्र चौक	त्यागी व्रती आश्रम
४.	धर्मशाला राजाखेडा मन्दिर की – मन्दिर नं. १६ छीतरमल जी राजाखेडा – चन्द्र चौक।	जैन समाज राजाखेड़ा
५.	अ.भा. जैसवाल जैन मन्दिर नं. ७ के पीछे चन्द्र चौक।	जैसवाल जैन समाज
६.	भट्टारक जी महाराज दिल्ली इसमें मन्दिर नं. १४ है – चन्द्र चौक – इसे भट्टारक जी महाराज सोनागिर कमेटी हेतु दे गये हैं।	श्री दि. जैन सिद्ध क्षेत्र सोनागिर संरक्षिणी कमेटी, सोनागिर
७.	आमौल वाली धर्मशाला (मन्दिर नं. ११-१२) चन्द्र चौक	श्री भट्टारक चन्द्रभूषण गादी संस्थान वरैया प्रबंध कारिणी समिति
८	पदमावती पुरवाल मन्दिर नं. ५ की धर्मशाला मन्दिर नं. ११ आमौल वाली धर्मशाला के पीछे दो धर्मशालायें आमने सामने	पदमावती पोरवाल समाज
९.	श्री भट्टारक हरेन्द्रभूषण गादी संस्थान मन्दिर नं. ८ व ९ एवं शान्तिनाथ मन्दिर	श्री भ. चन्द्रभूषण गादी संस्थान वरैया प्रबंध

क्रमांक	नाम धर्मशाला	प्रबन्ध
	चैत्य मनहरदेव चन्द्र चौक – इसे भट्टारक जी महाराज बरैया प्रबंध कारिणी समीति को दे गये हैं।	कारिणी समिति
१०.	श्री गनेशीलाल दोशी मुरार वालों की धर्मशाला इसमें मन्दिर नं. १० है – चन्द्र चौक।	स्वयं का परिवार
११.	सेठ किशोरीलाल जी बैसाखिया (सेठ गुन्दीलाल बैसाखिया, झांसी) मन्दिर नं. १३ चन्द्र चौक से परिक्रमा प्रारंभ मार्ग पर।	दि. जैन पंचायत झांसी
१२.	धर्मशाला श्री गोकुलचन्द जी जैसवाल – मन्दिर नं. ७।	जैसवाल पंचायत मुरार
१३	स्याद्वाद गुरुकुल छात्रावास – (श्री गोकुलचन्द जैन जैसवाल की धर्मशाला को जैसवाल जैन समाज ने स्याद्वाद ट्रष्ट को छात्रावास हेतु प्रदान की।	स्याद्वाद ट्रष्ट
१४.	श्री दि. जैन पद्मावती पुरवाल, एटा मन्दिर नं. ५।	पदमावती पुरवाल समाज
१५.	फर्म चूरामल सुखलाल जैन, मौ (भिण्ड) सन् १९४० में निर्माण कराई श्री धनीराम प्यारेलाल नें (मन्दिर नं. ३ की)	श्री दि. जैन खरौआ समाज मौ.
१६.	श्री दि. जैन गोलसिंघारे समाज खैरोली (भिण्ड) मन्दिर नं. ४।	खैरोली पंचायत
१७.	धर्मशाला नरवरनी वाली – इसे सोनागिर क्षेत्र कमेटी ने आधुनिक तरीके से निर्माण कराकर सुसज्जित किया है।	सिद्ध क्षेत्र कमेटी सोनागिर
१८.	स्याद्वाद भवन सन् १९८०	स्याद्वाद ट्रष्ट
१९.	श्रीमती शान्तिबाई त्यागी वृत्ति आश्रम भवन सन् १९९५	सिद्ध क्षेत्र कमेटी
२०.	खुर्जावाली धर्मशाला	,, ,,

क्रमांक	नाम धर्मशाला	प्रबन्ध
२१.	श्री दि. जैन तेरह पंथी धर्मशाला (मन्दिर नं. १)	तेरह पंथी खण्डेलवाल पंचायत, लश्कर
२२.	विशाल धर्मशाला (चन्द्रनगर)	सिद्ध क्षेत्र कमेटी
२३.	शिखरचन्द जैन अमायन वालों की धर्मशाला	" " "
२४.	बव्वावाली धर्मशाला	सिद्ध क्षेत्र कमेटी
२५.	दि. जैन लबेंचू धर्मशाला	लवेंचू समाज
२६.	स्याद्वाद उद्यान भवन	स्याद्वाद ट्रष्ट
२७.	लावनवाली धर्मशाला	श्रीमती सुशीला देवी जैन
२८.	दिगम्बर जैन समाज, डीमापुर भवन	अंतर्गत स्याद्वाद ट्रष्ट
२९.	स्टेशन धर्मशाला रानीवालों की	सिद्ध क्षेत्र कमेटी
३०.	शासकीय रेस्ट हाऊस	पी. डब्लू. डी.

卐 तीर्थ वन्दना में सोनागिर 卐

निर्वाण काण्ड (प्राकृत) श्री कुन्दकुन्दाचार्य (विक्रम की प्रथम सदी)

णङ्गाणंगकुमारा विक्खा–पञ्चद्ध–कोडि रिसि सहिया।
सुवण्णगिरि – मत्थयत्थे णिव्वाण गया णमो तेसिम॥

तीर्थ वन्दना – गुणकीर्ति भट्टारक (समय १४७०–१५००) वि.सं.)

शवणागिरि पर्वति आहूठ कोडि सिद्धासि नमस्कारू माझा।

'' मेघराज (समय १६ वीं सदी प्रारम्भ)

नंगानंगकुमार सहित कोड़ि साढ़े पाँच कहीए।
सिवणागिरि वर सार, मुनिवर स्वामी मुक्ति लहीए॥१०॥

'' चिमण पंडित (समय १६५१ से १६७०)

नङ्गानंगकुमार मुनीश्वरासी। साढे तीन कोडि यतिराय त्यासी।
सिवनागिरि झाली मुक्ति महीला। ऐसे तीर्थं तू वंदी त्रिकाल बेला॥२२॥

सर्व त्रैलोक्य जिनालय जय माला – विश्वभूषण (समय १७२२ तथा १७२४)

सोनागिरि बुन्देलाखंडे। आया तो चन्द्रप्रभु चंडे।
पंचकोडिरेवा वहमानं। शावतसू नु मोक्ष शिवजाणं॥२२॥

निर्वाण काण्ड (भाषा) – भैया भगवतीदास (सं. १७४१)

नंग अनंगकुमार सुजान, पंचकोडि अरू अर्द्ध प्रमान।
मुक्ति गये सोनागिरि शीश, ते वन्दों त्रिभुवन पति ईश'॥

अकृत्रिम चैत्यालय जयमाला–पंडित दिलसुख (समय शक सं. १७५९ सन् १८३७)

'मुक्तागिरि सोनागिरि सारा। बड़वानी सन्मुनि मनहारा॥४९॥

१३

卐 तीर्थंकर चन्द्रप्रभु 卐

जैन परम्परा में सर्वोपरि उपासनीय देवाधिदेव अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, *उपाध्याय और साधु* नामक पंच परमेष्ठी माने गये हैं। तीर्थंकर अर्हन्तों में से ही होते हैं। वे धर्म तीर्थ की स्थापना करते हैं, अत: तीर्थंकर कहलाते हैं। तीर्थंकर चौबीस होते हैं। तीर्थंकरों के वंश, वर्ण, विवाह, आसन आदि की जानकारी अत्यंत रोचक होती है। तीर्थंकर चन्द्रप्रभु वर्तमान अवसर्पिणी काल में अष्टम तीर्थंकर हुये उनका समवशरण सोनागिर क्षेत्र पर अनुमानत: पन्द्रह बार आया। उनकी चरण रज से इस क्षेत्र का कण-कण पवित्र हो गया है। तीर्थंकर चन्द्रप्रभु के समवशरण में ही इस सोनागिर क्षेत्र पर नंगकुमार अनंगकुमार ने अनेक राजाओं के साथ जैनेश्वरी दीक्षा ली और कठिन तपस्या करके इसी क्षेत्र से सिद्ध पद को प्राप्त हुये। सोनागिर क्षेत्र से साढे पाँच करोड मुनिराज मोक्ष पधारे। इसलिये यह परम पावन क्षेत्र सिद्ध क्षेत्र है। सिद्धों की नगरी है।

जिन्होनें अपनी कान्ति से सब सभा को एक रंग की बनाकर अत्यन्त शुद्ध करदी ऐसे वे शुद्ध चन्द्रप्रभु भगवान हम लोगों की शुद्धि के लिये हों अर्थात हम लोगों को शुद्ध करें। जिनका नाम लेना ही जीवों के समस्त पापों का नाश कर देता है फिर भला उनका सुना हुआ पुण्य चरित्र क्यों न सब पापों को दूर कर देगा। आनन्दरस से भरपूर ज्ञान गंगा प्रवाहित करने वाले और जगत को शान्ति प्रदान करने वाले अद्वितीय चन्द्र, भगवान चन्द्रप्रभु जिन को नमस्कार हो।

भगवान चन्द्रप्रभु ने पूर्व श्रीवर्मा के भव में सम्यक्त्व प्राप्त किया, तब से लेकर केवलज्ञान प्राप्त करते तीर्थंकर हुए तब तक के सात भवों का मंगल पुराण है।

चन्द्रप्रभु का जीव दूसरे पूर्वभव में 'पद्मनाभ' नामक राजा था, तब श्रीधर मुनिराज के निकट धर्म श्रवण करके अपने भूत एवं भविष्य के भव पूछता है। मुनिराज उसे भूतकाल के चार भव, वर्तमान पद्मनाभ भव और भविष्यकाल के दो भव- इस प्रकार कुल सात भव की बात करते हैं। वे सात भव संक्षेप में इस प्रकार हैं :-

१. श्रीवर्मा राजा : सम्यक्त्व की प्राप्ति (पूर्वभव छठवा)
२. प्रथम स्वर्ग में देव -- (पूर्व भव पंचम)
३. अजित सेन चक्रवर्ती, मुनि दीक्षा (पूर्व भव चौथा)

४. सोलहवें में स्वर्ग में अच्युत इन्द्र -- (पूर्व भव तीसरा)
५. राजा पद्मनाभ दीक्षा तीर्थंकर प्रकृति (पूर्व भव दूसरा)
६. वैजयन्त विमान में अहिमिन्द्र -- (पूर्व भव १)
७. चन्द्रपुरी (काशी) में चन्द्रप्रभु तीर्थंकर

तीर्थंकर चन्द्रप्रभु के पूर्व भव :-

''भगवान तीर्थंकर चन्द्रप्रभु का जीव पूर्वभव के एक भव में श्रीपुर के राज. श्रीषेण और रानी श्रीकान्ता का पुत्र श्रीवर्मा हुआ। एक दिन उल्का पात देखकर उसे भोगों से विरक्ति हो गई और उसने श्रीप्रभु जिनेन्द्र के निकट मुनि दीक्षा ले ली आयु पूरी होने पर प्रथम स्वर्ग में देव हुआ। उस देव का जीव आयु समाप्त होने पर धातकी खण्ड की अयोध्या के राजा अजितजय और रानी अजितसेना का अजितसेन नामक पुत्र हुआ। राज्य प्राप्त होने पर उसकी आयुधशाला में चक्ररत्न उत्पन्न हुआ। उसने दिग्विजय करके चक्रवर्ती पद प्राप्त किया। यद्यपि पुण्योदय से भोग की सम्पूर्ण सामग्री उसके निकट थी किन्तु उसकी भोगों में तनिक भी आसक्ति नहीं थी। वह बडा न्यायपरायण और धर्मनिष्ठ था। लोग उसे राजर्षि कहते थे। पुण्य कर्म के उदय से उसे चौदह रत्न और नौ निधियाँ प्राप्त थीं। भाजन, भोजन, शय्या, सेना, सवारी, आसन निधि, रत्न, नगर और नाट्य इन दशविध भोगों का भोग करता था। एक दिन चक्रवर्ती ने अरिन्दम नामक मुनि को आहारदान किया फलस्वरूप रत्न वर्षा आदि पंचाश्चर्य प्राप्त किये। दूसरे दिन वह प्रभु जिनेन्द्र की वन्दना करने गया और उनका उपदेश सुनकर विरक्त हुआ तथा अपना राज्य जिन शत्रु को देकर बहुत से राजाओं के साथ संयम धारण कर लिया। अन्त में समाधि मरण करके वह सोलहवें स्वर्ग में अच्युतेन्द्र हुआ। वहाँ पर उसकी आयु बाईस सागर थी। उसने बहुत दिनों तक दिव्य भोगों का अनुभव किया और फिर आयु के अंत में शुद्ध सम्यग्दृष्टि वह पूर्व धातकी खंड में सीता नदी के दाहिने किनारे पर मंगलावती देश के रत्न संचयपुर में राजा कनकप्रभ और रानी कनकमाला को शुभ स्वप्नों के द्वारा सूचना देकर पद्मनाभ पुत्र उत्पन्न हुआ। राजा कनकप्रभ सुख से अपना राज्य पालन करता था। एक समय उस राजा ने मनोहर नाम के वन में श्रीधर नाम के जिनेन्द्र से धर्म का स्वरूप सुना और अपना राज अपने पुत्र पद्मनाभ को देकर संयम धारण कर मुक्त हुआ।

राजा पद्मनाभ राज्य प्राप्त कर सुख पूर्वक रहने लगा। उस उत्तम बुद्धिमान राजा ने श्रीधर मुनि के समीप ही धर्म का स्वरूप सुना और उसे वैराग्य हो गया

तथा अनेक राजाओं के साथ दीक्षा धारण कर ली और मोक्ष के कारण जो चारों आराधनायें हैं उनका पालन करने लगा। उसने ग्यारह अंगों का पारगामी बनकर सोलह कारण भावनाओं का चिंतन किया और तीर्थंकर नाम कर्म बंध किया। वह नाना प्रकार के तपों द्वारा कर्मों का क्षय करता रहा। अंत में समाधि मरण धारण किया और शरीर छोडकर वैजयंत विमान में अहमिन्द्र उत्पन्न हुआ। वहाँ पर उसकी तेतीस सागर की आयु थी।

गर्भ कल्याणक – जब उसकी आयु छह महीने की रह गई और पृथ्वी पर आने के दिन समीप आ गये तब इसी जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में चन्द्रपुर नगर के अधिपति इक्ष्वाकुवंशी काश्यप गोत्री राजा महासेन था। उसकी महादेवी का नाम लक्ष्मणा था। देवों ने उसके घर आंगन में छह मास तक रत्न वर्षा की। श्री, ह्री आदि अनेक देवियाँ महारानी की सेवा करने आई। देवोपनीत वस्त्र, माला, लेप आदि सुख की साम्रगी से उनकी सेवा करने लगी। चैत्र कृष्णा पंचमी को पिछली रात्रि में ज्येष्ठ नक्षत्र में सोलह स्वप्न देखे। सूर्य उदय होते ही स्नानकर वस्त्रालंकार पहिनकर राजा के समीप पहुँची और वहाँ पर आसीन अपने पति के निकट जाकर अपने स्वप्नों की चर्चा की। महाराज ने अवधिज्ञान से स्वप्नों का हाल जानकर रानी से उन सबके फल अलग अलग कहे। उन्होंने कहा – देवी ! तुम्हारे गर्भ में तीर्थंकर प्रभु पधारे हैं। फल सुनकर रानी अत्यन्त हर्षित हुई। देवों ने गर्भ के नौ माह तक रत्न वर्षा की। श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि और लक्ष्मी देवियाँ उनकी कान्ति, लज्जा, धैर्य, कीर्ति, बुद्धि और सौभाग्य लक्ष्मी को सदा बढाती रहती थीं तथा माता का मनोरंजन नाना प्रकार से किया करती थीं।

जन्म कल्याणक – गर्भकाल व्यतीत होने पर पौष कृष्णा एकादशी के दिन अनुराधा नक्षत्र और शुक्र योग में देव पूजित, अलौकिक प्रभा के धारक, मति श्रुति अवधि तीनों ज्ञान को धारण करने वाले ऐसे उस अहमिन्द्र के जीव को उस रानी ने उत्पन्न किया। उसी समय इन्द्र और देव आये। सौधर्मेन्द्र ने अपनी शची के द्वारा बाल प्रभु को मंगाकर, सुमेरू पर्वत पर लेजाकर क्षीरसागर के जल से उनका अभिषेक किया। उन्हें दिव्य वस्त्रालंकारों से विभूषित किया, तीन लोक के राज्य की कंठी बांधी और उनकी रूप छटा को हजार नेत्र बनाकर विमुग्ध भाव से उन्हें निहारता रहा। उनके उत्पन्न होते ही कुवलय समूह विकसित हो गया था। अत: इन्द्र ने उनका नाम चन्द्रप्रभ रखा। फिर इन्द्र ने भगवान के समक्ष आनन्द नामक भक्तिपूर्ण नाटक और नृत्य किया। फिर लाकर उन्हें माता-पिता को सौंपकर कुवेर को आज्ञा दी-तुम भोगोपभोग की योग्य वस्तुओं के द्वारा भगवान की सेवा

करो और फिर वह देवों के साथ स्वर्ग को चला गया। भगवान का लांछन चन्द्रमा है।

भगवान ज्यों ज्यों बढ़ने लगे उनका रूप, कान्ति, लावण्य सभी कुछ बढ़ने लगे। वे प्रिय दर्शन थे। लोग उनके दर्शनों के लिये व्याकुल रहते थे और दर्शन मिलने पर अपूर्व शांति एवं तृप्ति अनुभव होती थी।

कुमार अवस्था व्यतीत होने पर उनके पिता ने राज्याभिषेक कर दिया। समस्त राजा उनके वशवर्ती थे।

भगवान को स्वयं स्फूर्त प्ररेणा – साम्रज्य सम्पदा का भोग करते हुए जब उन्हें काफी समय हो गया, तब एक दिन वे अपने श्रृंगार – कोष्ठक में दर्पण में अपना मुख देख रहे थे। उन्हे अन्त: स्फूरणा हुई–''आयु निरन्तर छीजती जा रही है। आयु का चतुर्थ पाद आ गया है। इतना लम्बा काल मैंने सांसारिकता में ही खो दिया। अपना हित नहीं किया। अब मुझे आत्मिक सम्यदा का भोग करना है। आत्मा का रूप अलैकिक है, आत्मा की सम्पदा अनन्त अक्षय है। अब मैं इसी का पुरुषार्थ जगाऊंगा।''

दीक्षा कल्याणक – इस प्रकार जिन्हें आत्मतत्व का ज्ञान हुआ ऐसे उन चन्द्रप्रभ के समीप लौकांतिक देव आऐ और यश योग्य स्तुति करके उनके विचारों की सराहना कर अपने ब्रह्मलोक में चले गये। तदनन्तर महाराज चन्द्रप्रभ ने अपने पुत्र वरचन्द्र का राज्याभिषेक किया। उसी समय इन्द्र आदि देवों ने आकर तपकल्याणक की पूजा की तथा देवों द्वारा लाई हुई विमला नामक पालकी में नगर के बाहर सर्वर्तुक वन में पधारे। वहाँ उन्होंने दो दिन के उपवास का नियम लेकर पौष कृष्णा एकादशी के दिन अनुराधा नक्षत्र में एक हजार राजाओं के साथ जैनेन्द्री दीक्षा धारण की। दीक्षा लेते ही उन्हें मन: पर्यय ज्ञान उत्पन्न हो गया। दो दिन बाद वे नलिन नामक नगर में आहार के निमित्त पधारे। वहाँ सोमदत्त राजा ने उन्हें नवधा भक्ति पूर्वक आहार –दान दिया। इससे प्रभावित होकर देवों ने रत्नवृष्टि आदि पंचाश्चर्य किये।

केवलज्ञान कल्याणक – आहार लेकर उन भगवान ने व्रतों को धारण कर अतीचार रहित पालन किया और पाँचो समितियों का पालन किया। गुणों को धारण करने वाले उन्होंने कषाय रूपी शत्रु का दमन किया, आत्मा के परिणामों को खूब विशुद्ध किया। मन, वचन, काय तीनों गुप्तियों का पालन किया। बाह्य और अंतरंग दोनों तपश्चरणों का पालन किया। दस प्रकार के धर्म धारण किये,

सब परीषहों को सहन किया। इस प्रकार कर्म शत्रुओं से युद्ध करने में संलग्न रहने लगे। इस प्रकार जिन कल्प अवस्था में तीन माह लग गये। तदनन्तर सर्वर्त्तुक नाम के दीक्षा वन में नाग वृक्ष के नीचे बेला का नियम लेकर विराजमान हुए और फाल्गुन कृष्णा सप्तमी की सायंकाल अनुराधा नक्षत्र में वे अध:करण, अपूर्वकरण, अनिवृतिकरण रूप तीन परिणामों के संयोग से क्षपक श्रेणी पर आरोहण करके प्रथम शुक्ल ध्यान के प्रभाव से शेष तीन घातिया कर्मों का भी क्षय कर दिया। जीव के उपयोग गुण का घात करने वाले घातिया कर्मों का नाश होते ही वे सयोग केवली हो गये। उनकी आत्मा अनन्तज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख और अनन्त वीर्य से सम्पन्न हो गई। उन्हे परमावगाढ सम्यग्दर्शन, यथाख्यात चारित्र, क्षायिकज्ञानआदि पांच लब्धियों की उपलब्धि हो गई। अब वे सर्वज्ञ सर्वदर्शी बन गये।

इन्द्रों और देवों ने आकर भगवान के केवलज्ञान की पूजा की। उन्होंने समवशरण की रचना की और उसमें भगवान की प्रथम दिव्य ध्वनि खिरी। भगवान के धर्म चक्र का प्रवर्तन हुआ।

भगवान का परिवार – उनके दत्त आदि तिरानवे गणधर थे। दो हजार ग्यारह अंग और चौदह पूर्व के जानकार थे। आठ हजार अवधिज्ञानी, दो लाख चार सौ शिक्षक, दस हजार केवलज्ञानी, चौदह हजार विक्रिया ऋद्धिधारी, आठ हजार मन: पर्ययज्ञानी और चार हजार छह सौ वादी थे। इस प्रकार सब मुनियों की संख्या ढाई लाख थी, वरूण आदि तीन लाख अस्सी हजार आर्यिकायें थी। तीन लाख श्रावक और पांच लाख श्राविकायें थी।

मोक्ष कल्याणक – तदनंतर चन्द्रप्रभ स्वामी ने सब आर्य देशों में विहार कर धर्मतीर्थ की प्रवृत्ति की और अंत में सम्मेदशिखर पर जाकर विराजमान हुये। वहाँ पर एक हजार मुनियों के साथ प्रतिमा योग धारण कर एक महीने तक योग निरोध किया तथा फाल्गुन शुक्ला सप्तमी के दिन ज्येष्ठ नक्षत्र में शाम के समय तीसरे शुक्ल ध्यान से योग निरोध किया, अयोग केवली नाम के चौदहवे गुण स्थान का पद प्राप्त कर चौथे शुक्ल ध्यान से सब कर्मों का नाश किया और उस समय शरीर रहित परम सिद्ध भगवान हुए। देवों ने उसी समय आकर निर्वाण कल्याण की पूजा की, सर्वविधि की और फिर पुष्प का ढेर ले लेकर सब अपने अपने स्थान को चले गये।
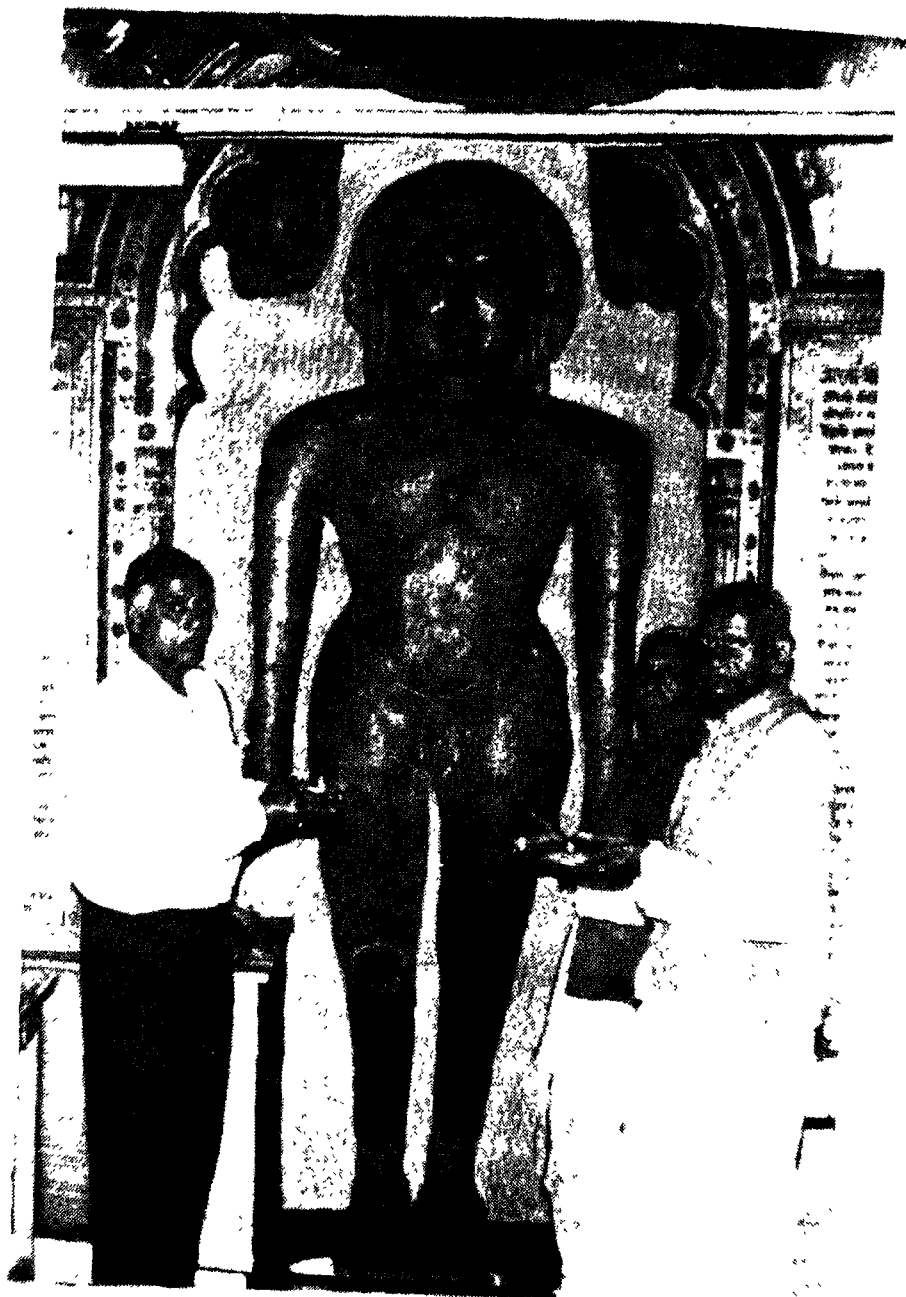
पर्वतराज
श्री १००८ चन्द्रप्रभु भगवानमंदिर नं. ५७ सोनागिर
आरती करते हुए लेखक पास में कैलाशचंद सामने धर्मचंद जैन

विशिष्ट विवरण चन्द्रप्रभु

(१) पूर्व भव के द्वीप	धात की खण्ड
(२) पूर्व भव के क्षेत्र	पूर्व विदेह उ.
(३) पूर्व भव की नगरी की सीमा	सीता नदी के दक्षिणी तट
(४) पूर्व भव के प्रान्त	मंगलावती
(५) पूर्व भव की नगरी	रत्न संचयपुर
(६) पूर्व भव का नाम	पद्मनाभि
(७) पूर्व भव के गुरु का नाम	श्रीधर उ.
(८) कहाँ से चयकर जन्म लिया	जयंत
(९) वहाँ पर कौन थे	अहमिन्द्र
(१०) देवों के शरीर की ऊंचाई	१ हाथ
(११) लेश्या	द्रव्य भाव
(१२) कितने समय बाद स्वाच्छोवास	१६ ॥ मास
(१३) कितने समय बाद आहार	३३ हजार वर्ष
(१४) अवधिज्ञान और लोक नाडी शक्ति की मर्यादा	५ वे नर्क
(१५) सुख की मर्यादा	अप्रविचार जन्म सुख का भोगी
(१६) देवों की आयु	३३ सागर
(१७) गर्भ तिथि	चैतवदी ५
(१८) गर्भ नक्षत्र	ज्येष्ठा
(१९) गर्भ समय	प्रात:
(२०) जन्मभूमि	चन्द्रपुरी
(२१) पिता का नाम	महासेन
(२२) माता का नाम	लक्ष्मणा
(२३) गोत्र	काश्यप
(२४) जन्मतिथि	पौष वदी ११
(२५) जन्म नक्षत्र	अनुराधा
(२६) राशि	वृष
(२७) आयु	दस लाख पूर्व
(२८) शरीर की ऊंचाई	१५० धनुष
(२९) शरीर का वर्ण	चन्द्र समान सफेद
(३०) कुमार काल	२ लाख पूर्व

(३१) छद्मस्थ	३ माह
(३२) दीक्षा मिती	पौष वदी ११
(३३) दीक्षा समय	अपरान्ह
(३४) पालकी	विमला
(३५) दीक्षा वन	सहेतुक चन्द्रपुरी
(३६) दीक्षा वृक्ष	नाग
(३७) दीक्षा के समय उपवास नियम	बेला
(३८) दीक्षित राजा	१००० एक हजार
(३९) कितने समय पीछे आहार	३ दिन बाद
(४०) पारणा की नगरी	नलिनपुर
(४१) पारणा कराने वाला	राजा सोम
(४२) केवलज्ञान की तिथि	फाल्गुन वदी १०
(४३) नक्षत्र	अनुराधा
(४४) समय	अपरांन्ह
(४५) वन	सर्वतक
(४६) वृक्ष	नाग
(४७) गणधरों की संख्या	९३
(४८) मुख्य गणधर	दत्त
(४९) पूर्व धारियों की संख्या	२०००
(५०) शिक्षक	२००४०८
(५१) अवधिज्ञानी	८०००
(५२) केवली	१००००
(५३) वैक्रियक	१४०००
(५४) मन: पर्यय	८०००
(५५) वादी	७६००
(५६) कुल संख्या	२,५०,०००
(५७) आर्यिकायें	३८०००
(५८) मुख्य आर्यिका	वरुणा
(५९) समवशरण	८।। योजन
(६०) निर्वाण तिथि	फाल्गुन सुदी ७
(६१) नक्षत्र, समय	ज्येष्ठ, अपरान्ह

(६२)	निर्वाण स्थान	सम्मेदशिखर ललितकूट
(६३)	आसन	कायोत्सर्ग
(६४)	विहार कब बंद किया	१माह पूर्व
(६५)	श्रावकों की संख्या समवशरण में	३०००००
(६६)	श्राविकायें	५०००००
(६७)	कितने मोक्ष साथ गये	१०००
(६८)	शिष्यों की मुक्ति	२,३४,०००
(६९)	स्वर्ग में सौधर्म स्वर्ग से उर्ध्व ग्रैवेयक तक कितने गये	१२०००
(७०)	अंतरकाल	९ करोड़ सागर
(७१)	यक्ष यक्षणी	श्याम यक्ष, ज्वालामालिनी यक्षणी
(७२)	चिन्ह	चन्द्रमा

नोट : भूल सुधार की अपेक्षा है।

१४
सिद्धक्षेत्र सोनागिर पर संस्थाऐं
१
卐 श्री नंगानंग दिग.जैन परमागम मंदिर ट्रस्ट 卐

पूर्व में बडी संख्या में जिनालयों की विद्यमानता होने के बावजूद भी परमागम मंदिर के निर्माण का एक मात्र उद्देश्य तीर्थक्षेत्र पर वन्दनार्थ आने वाले साधर्मीजनों को वन्दनायोग्य अवस्था की प्राप्ति के उपाय से परिचित कराते हुए आत्मविकास एवं आत्मसाधना पूर्वक आत्मोन्नति एवं जैन तत्व ज्ञान के प्रति आत्मिक रुचि जागृत करना है। इसी प्रकार जो सामर्धीजन निवृति लेकर क्षेत्र पर पधारते हैं वे भी अपना अधिकाधिक समय स्वाध्याय/तत्वचर्चा/ध्यान/सत्संग में व्यतीत कर अपने जीवन को मुक्तिमार्ग की ओर अग्रसर करें इसी पवित्र भावना को ध्यान में रखते हुए ऐसे स्थान की परम आवश्यकता थी जहाँ जिनदेव के दर्शन/पूजन/स्तुति/वंदन/परिक्रमा के साथ-साथ तीर्थ जिनवाणी का सानिध्य आत्म-साधकों को निर्वाध रूप से उपलब्ध होता रहे।

बुन्देलखण्ड की यात्रा करते हुए जब पूज्य गुरुदेव श्री कानजी स्वामी सोनागिर जी पधारे एवं विदिशा नगरी में जब शीतलनाथ तीर्थयात्रा संघ की एक स्पेशल ट्रेन प्रारंभ हुई, जिसमें पूरे देश विदेश से चुने हुए हजारों साधर्मीजन एवं पूज्य श्रीशान्ता वेन आदि जब अंत में सोनागिर पधारे एवं आ. धर्मरत्न पं.बाबूभाई जी, पं.धन्नालाल जी ग्वालियर आदि सभी की भावना थी कि क्षेत्र पर ऐसी कोई स्थान बने जहां से देश विदेश में जैन धर्म का डंका बजता रहे और गुरूदेव श्री, बहिन श्री, बाबूभाई जी सभी ने जब यह बात पं.ज्ञानचंद जी विदिशा के समक्ष रखी तो उनकी तो भावना ही थी कि साढे पांच करोड मुनिवरों की निर्वाण स्थली सोनागिर से अच्छा पवित्र सिद्धक्षेत्र और कौन सा हो सकता है ?

परिणामस्वरूप पं. ज्ञानचंद जी ने प्रेरणा करके सरल शान्त स्वभावी श्री सेठ माणकचंद जी सर्राफ मौ, से उनकी जगह लेकर उनकी अध्यक्षता में आज से १० वर्ष पूर्व श्री नंगानंग दि. जैन परमागम मंदिर ट्रस्ट सोनागिर की स्थापना की जिसमें प्रारंभ में ग्यारह ट्रस्टी बनाए पश्चात् बढाकर पन्द्रह ट्रस्टीगण पूरे देश के चुने हुए साधर्मीजनों को रखा जिससे निरन्तर इसकी उन्नति होती रहे। वर्तमान में ट्रस्टीगणों में सर्वश्री माणकचंद जी मौ, पं. ज्ञानचंद जी विदिशा, श्री पूनमचंद जी सेठी दिल्ली, श्री इन्द्रसेन जी दिल्ली, श्री लाल अभिनन्दन प्रसाद जी सहारनपुर,

श्री जैन बहादुर जी कानपुर, श्री निर्मलकुमार जी एडवोकेट ग्वालियर, श्री माणिकचंदजी लुहाडिया दिल्ली, श्री जवाहरलाल जी विदिशा, श्री माणिकलाल आर.गांधी मुबंई, श्री केशवदेव जी कानपुर, श्री मांगीलाल जी पहाड़िया इन्दौर, श्री जिनेश्वरदयाल जी भिण्ड, श्री सुमतप्रकाश जी भिण्ड, श्री भूपेन्द्र जी गंगवाल दिल्ली हैं। परमागम मंदिर के निर्माण/देखरेख मार्गदर्शन में चि. श्री चन्द्रसेन जी दिल्ली, श्री ज्ञानचंद जी एड. ग्वालियर, श्री प्रेमचंद जी नरवर, श्री मुरारीलाल जी नरवर, श्री चम्पालाल जी ग्वालियर, श्री श्यामलाल जी ग्वालियर आदि सभी का विशेष स्नेह रहता है।

जब से परमागम मंदिर का कार्य प्रारंभ हुआ है तभी से निरंतर गतिविधियां नियमित रूप से वाणी भूषण पं. ज्ञानचंद जी विदिशा के कुशल सफल निर्देशन में चल रही है एवं प्रतिवर्ष सुन्दर-सुन्दर विधान शिविर आयोजन बडे सफलता पूर्वक सम्पन्न होते आ रहे है। सर्वप्रथम श्री पूनमचंद जी जैन सोनागिर द्वारा श्री पंचपरमेष्ठी विधान हुआ पश्चात् श्री वीरसेन सर्राफ भिण्ड द्वारा श्री सिद्ध चक्र मण्डल विधान हुआ। श्री चन्द्रसेन जी दिल्ली द्वारा श्री चौसठ ऋद्धि मण्डल विधान हुआ। श्री प्रेमचंद जी नरवर द्वारा सैंतालीस शक्ति मंडल विधान हुआ। बाबू इन्द्रसेन जी दिल्ली द्वारा श्री इन्द्रध्वज मंडल विधान हुआ। श्री पूनमचंद जी सेठी दिल्ली द्वारा श्री कल्पद्रुम मंडल विधान सम्पन्न हुआ। श्री माणकचंद जी लुहाडिया दिल्ली द्वारा श्री तत्वार्थ सूत्र मंडल विधान हुआ। श्री लाल अभिनन्दन प्रसाद जी सहारनपुर द्वारा श्री समयसार मंडल विधान हुआ। तत्पश्चात् श्री मांगीलाल जी पदमकुमार जी पहाडिया परिवार द्वारा बडे ही हर्षोल्लास पूर्वक हाल ही में ३ जून से ८ जून सन् १९९६ तक श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार मंडल विधान सम्पन्न हुआ।

प्रत्येक विधान एक से बढकर एक बडे ही आनंद और उत्साह के साथ सम्पन्न हुए जिसमें हजारों साधर्मी जनों ने भजन भोजन का लाभ लिया। दिनांक १-१-१९९५ से दि. १ मार्च १९९५ तक सिद्धक्षेत्र सोनागिर से सिद्ध रथ सारे देश के विशेष नगरों में पण्डित ज्ञानचंद जी के निर्देशन में प्रभावना करता हुआ व सभी को क्षेत्र पर आमंत्रित करता हुआ १-३-९५ को सोनागिर में रथ का समापन हुआ तत्पश्चात् इसी के साथ २ मार्च से ८ मार्च १९९५ तक श्री आदिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं त्रय गजरथ महोत्सव का भव्य आयोजन बडे धूमधाम से पं. ज्ञानचंद जी के सफल निर्देशन में एवं श्री पूनमचंद जी सेठी दिल्ली की अध्यक्षता एवं बाबू इन्द्रसेन, जी निर्मलकुमार जी के मंत्रित्व में सम्पन्न हुआ। जिसमें संपूर्ण

देश के करीब २० हजार साधर्मीजनों ने भाग लिया। सभी को आवास एवं भोजन की नि:शुल्क व्यवस्था की गई थी। ८ मार्च को ही आठवें तीर्थंकर चन्द्रप्रभु भगवान के निर्वाण कल्याणक के शुभ दिन उन्हें स्वर्णमयी वेदी पर विराजमान करके सभी ने अपने को धन्य समझा।

सत्तर वाय साठ के इस बिना पिलर के विशाल हाल को देखते ही बनता है। जो भी जाता है कुछ समय के लिये शांत चित्त खड़ा हो जाता है। पूरे परमागम मंदिर में संगमरमर के पाटिये के ऊपर निम्न ग्रंथों की मूल मूल गाथाऐं/श्लोक/सूत्र एवं उनका अर्थ आदि तीन-तीन बार सुन्दर ढंग से उत्कीर्ण करके चित्ताकर्षक रंगों से भरा गया है :-

श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार, तत्वार्थ सूत्र, वृहद् द्रव्य संग्रह, समयसारादि पंच परमागम की मुख्य-मुख्य गाथाऐं विशेष रूप से उत्कीर्ण की गई हैं जिसकी वजह से इस भव्य जिनालय का नाम 'परमागम मंदिर' पड़ा है। इसके अलावा देव शास्त्र की सुन्दर स्तुति एवं आत्म साधना में प्रेरक अनमोल वाक्य बीमों पर लिखे गये हैं तथा संपूर्ण सिद्धक्षेत्रों के रंगीन चित्र ऊपर चारों ओर कांच में मड़े हुए हैं।

आवास हेतु नीचे १० कमरे एवं सुन्दर आफिस के साथ साथ श्री कंवरलाल जी मोतीलाल जी खैरागढ़ के इकलौते लाड़ले सुपुत्र स्व. 'तन्मय' जैन की पुण्य स्मृति में श्री नंगानंग दि. जैन श्रावक भोजनालय का निर्माण किया गया है जिसमें नि:शुल्क साधनार्थ साधर्मी/आत्मार्थी जनों को सुन्दर भोजन की व्यवस्था की गई है तथा भोजनालय के ऊपर ही स्वाध्याय कक्ष वृहत् सत्साहित्य लायब्रेरी एवं कैसेटस् का संग्रहालय बनाया गया है। जहाँ सामर्धीजन बैठ कर स्वाध्याय चिन्तन मनन करते हैं तथा इसी लायब्रेरी रूम में भगवान कुन्दकुन्दाचार्य देव, पं. टोडरमल जी, श्रीमद् राजचन्द जी एवं युग पुरुष कानजी स्वामी के विशाल चित्र लगे हुए हैं।

इस प्रकार यह अनुपम सिद्क्षेत्र पर अद्भुत भव्य परमागम मंदिर सोने में सुहाग की तरह हो गया। जिसने एक बार सिद्धक्षेत्र सोनागिर की वंदना एवं परमागम मंदिर देख लिया तथा ऐसे पवित्र स्थान पर रहकर आत्म साधना में लग गया उसका जीवन मानों सफल हो गया।

इसी के साथ-साथ परमागम मंदिर ट्रस्ट की एक विशाल भूमि एक लाख वर्ग फीट की विशाल धर्मशाला से लगी हुई है जहाँ निकट भविष्य में शीघ्र ही
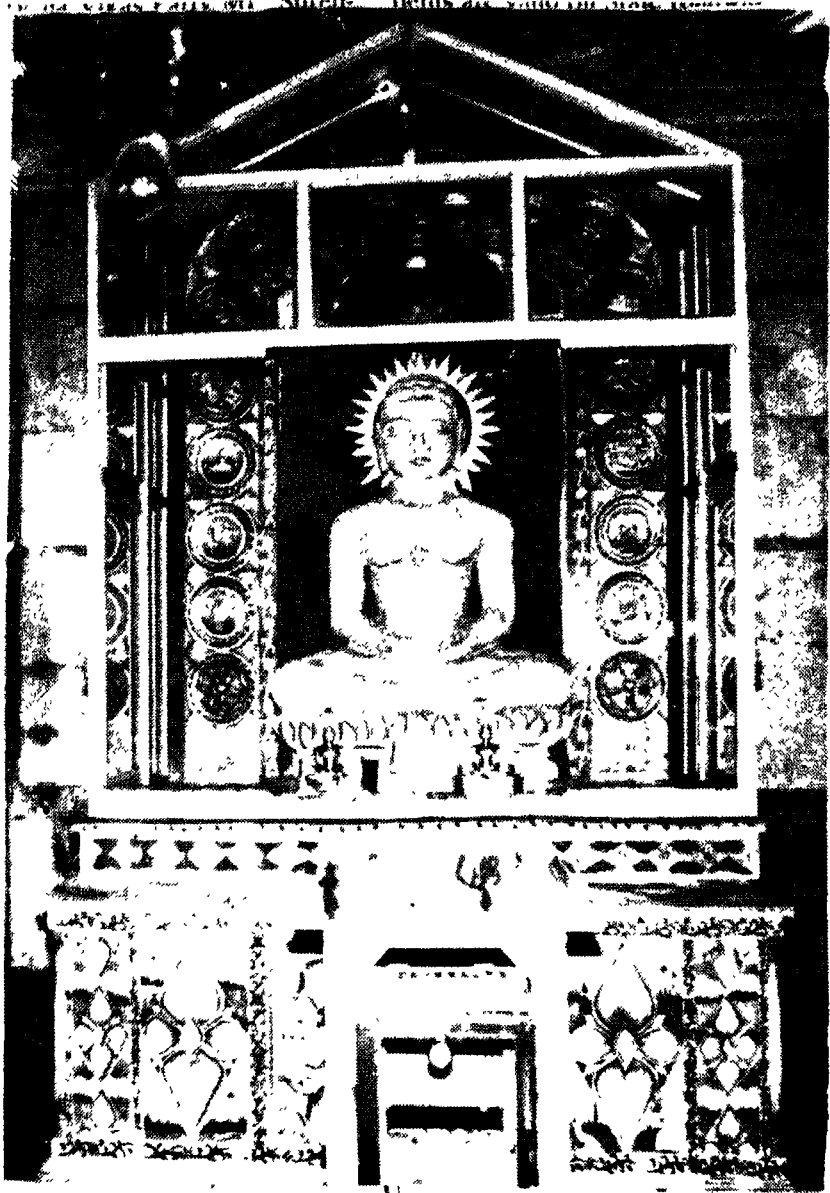
तलहटी में मन्दिर नं. २१
श्री १००८ चन्द्रप्रभु भगवान
वेदी परमागम मंदिर सोनागिर

आधुनिक तरीके से आवास हेतु श्री कुन्दकुन्द नगर बसाने की योजना है। जिसमें फ्लैट बुकिंग का कार्य भी शीघ्र ही प्रारंभ हो रहा है। आज हमें बड़ी प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है कि पूज्य गुरुदेव श्री कानजी स्वामी, पूज्य बहिन श्री शान्ताबेन, धर्मरत्न पं. बाबूभाई जी फतेपुर, धर्मवीर पं. धन्नालाल जी ग्वालियर आदि अनेकों विद्वानों की पवित्र भावनानुसार वाणी भूषण पं. ज्ञानचंद जी विदिशा की प्रबल प्रेरक प्रेरणा और निर्देशन से यह विशाल परमागम मंदिर स्वाध्याय भवन/आधुनिक कमरे/श्रावक भोजनालय/कैसेटस् एवं सत्साहित्य लायब्रेरी आदि का सुंदर निर्माण हो चुका है। हम सभी ट्रस्टीगणों की भावना है कि यहां अधिक से अधिक लोग निवृति लेकर पं. ज्ञानचंद जी विदिशा आदि चार पांच विद्वान दस पन्द्रह साधर्मी जन जो रहते हैं उनके साथ रहें और आत्मसाधनापूर्वक कल्याण का मार्ग प्रशस्त करें। यदि एक-एक भी भव्य जीव इस तीर्थराज पर रहकर परमागम के निमित्त से अपने पंचम भाव को पहिचानकर आत्मानुभूति करेगा तथा पंचमगति को प्राप्त हो और इसी भावना के साथ,

परमागम मंदिर यहाँ पर, है सुन्दर तैयारी।
नित प्रति गूँजेगी गाथायें, कुन्दकुन्द की प्यारी॥

कोषाध्यक्ष :-

श्री जैन बहादुर जैन, ३६/१, कैलाश मंदिर, कानपुर (उ.प्र.)
☎ (०५१२) ३५२८१६ (नि.), ३५४५२७-३१५१८३ (कार्या.)

श्री पूनमचंद जैन सेठी, एम-२३१, ग्रेटर कैलाश पार्ट-२, नई दिल्ली-११० ०४८
☎ (०११) ६४१४३७३-६४६८८१८ (नि.), ६८४६००३-६३५११४ (कार्या.)

श्री भूपेन्द्रकुमार जैन गंगवाल, ए-१२, वेस्ट एण्ड, नई दिल्ली - ११० ०२१
☎ (०११) ६०७९९४-६७६६४८ (नि.)

श्री माणिकलाल रामचन्द्र गाँधी, सरदार वी.पी. रोड, ३८५, हाऊसिंग रसधारा सोसायटी, मुम्बई
☎ (०२२) ३८५३७१

श्री मांगीलाल जैन पहाडिया, २३१, महेशनगर, इन्दौर (म.प्र.)
☎ (०७३१) ४११०४१-४१२२५६ (नि.), ४७९२०८-४७९२०९ (कार्या.), फैक्स ४७९२०७

श्री पण्डित ज्ञानचंद जैन, 'ज्ञानचंद निवास', किला अन्दर-विदिशा (म.प्र)
☎ (०७५९२) ३२२३४

श्री जवाहर लाल जैन बडकुल, क्लॉथ मर्चेन्ट, बाल बिहार, विदिशा (म.प्र.)
☎ (०७५९२) ३२४०६

श्री केशवदेव जैन, ५, आनंदपुरी, ट्रांसपोर्ट नगर, कानपुर (उ.प्र.)
☎ (०५१२) २७४४०९-२७७६७४ (नि.), २११२०५-२१११९३ (कार्या.)

श्री जिनेश्वरदयाल जैन, जिनेन्द्र सेनेट्री स्टोर्स, बंगला बाजार, पो. भिण्ड (म.प्र.)
☎ (०७५३४) ३३२३५

श्री सुमतिप्रसाद जैन, ४०, सदर बाजार, पो. भिण्ड (म.प्र.)
☎ (०७५३४) २५७४-३३४७३

ओम् शब्द में गर्भित पाँचों परमेष्ठी निजगुणधारी
जो भी ध्याते बन जाते परमात्मा पूर्ण ज्ञान धारी

२

卐 श्री दिग.जैन वरैया प्रबन्ध कार्यकारिणी कमेटी 卐

स्व. श्री १०८ भट्टारक चन्द्रभूषण महाराज संस्थान गादी

सोनागिर, दतिया (रजि.) पिन. ४७५६८६ ☎ (०७५२२) ६२२३०

यह संस्था म.प्र सोसायटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम १९७३ (सन् १९७३ क्रं. ४४) के अधीन ३०-१०-१९८४ को पंजीयत की गई।

सिद्धक्षेत्र सोनागिर जी पर भट्टारकों की गादी पूर्व काल से चली आ रही थी। जब दतिया महाराज ने क्षेत्र का प्रबंध श्री सोनागिर सिद्ध क्षेत्र कमेटी को सौंपा उस समय इस कोठी के मंदिर के सम्बन्ध में कमेटी की रिपोर्ट में लिखा है कि यह मंदिर भट्टारक जी महाराज सोनागिर पट्टाधीश का बनवाया हुआ है। पर्वत के चढने के दरवाजे के सामने ही बना हुआ है। इसके साथ एक धर्मशाला भी है आजकल भट्टारक हरेन्द्रभूषण जी सोनागिर इस गादी के पट्टाधीश इसका प्रबंध करते हैं और यहीं रहते हैं। आपकी धर्मशाला में एक कुआ भी है परंतु उसका जल खारी है। पर्वत पर का प्रबंध आप ही के द्वारा होता आ रहा था। पहले पर्वत का भंडार आप ही के यहाँ जमा होता था। आप निम्न मंदिरों के प्रबंध कर्ता भी है :- १. उक्त भट्टारक महाराज का. २. खैरा वालों का. ३. आचार्य वालों का ४. भगवानदास जी का. ५. करहिया वालों का। जब सिद्धक्षेत्र सोनागिर कमेटी का निर्माण हुआ इसके प्रेसीडेन्ट भी भट्टारक हरेन्द्र भूषण ही थे। श्री १०८ भट्टारक चन्द्रभूषण जी महाराज इसके अन्तिम भट्टारक थे। योग्य शिष्य न मिलने पर उन्होंने अपने जीवन काल में ही अपनी भावना स्पष्ट रूप से वरैया समाज के सामने रखी कि दिग. जैन वरैया समाज की कोठी जो भट्टारक गादी संस्थान के नाम से प्रसिद्ध है जिसमें मंदिर नं. ८ व ९, एक शांतिनाथ मंदिर तथा उससे सम्बंधित अन्य सम्पत्ति कोठी के सामने चबूतरा, कुआ, आमौल वाली धर्मशाला, दक्खोबाई का मंदिर नं. ११, करहिया वाले मुन्नालाल जी का मंदिर नं. १२, मंदिर नं. १७ एवं उसकी धर्मशाला और उसका चबूतरा आदि की व्यवस्था अब तक कर रहा हूँ। अब आगे इसकी व्यवस्था सुरक्षा सुचारु रूप से होती रहे इसकेलिये समाज के व्यक्तियों की कमेटी निर्मित कराना है। फलस्वरूप समाज ने एक कमेटी का गठन किया और उसका शीर्षकान्तर्गत नाम रखा गया। श्री १०८ भट्टारक चन्द्रभूषण जी महाराज अपने जीवन काल तक उसके अध्यक्ष रहे। उपाध्यक्ष श्री

नाथूराम जी (करहिया वाले) डबरा एवं श्री लालमणिप्रसाद जी जैन 'मणि' (करहिया वाले) मंत्री रहे।

श्री १०८ भट्टारक चन्द्रभूषण जी महाराज का देहावसान मिती आषाढ़ वदी ३० सं. २०३१ में हो गया। तत्पश्चात् इस कमेटी के अध्यक्ष श्री नाथूराम जी धनोरिया तथा श्री लालमणिप्रसाद जी जैन 'मणि' मंत्री निर्वाचित हुए। श्री रामजीत जैन, एडवोकेट (लेखक) एवं श्री गौरीशंकर जैन, एडवोकेट, जौरा को आजीवन संरक्षक नियत किया गया। श्री गौरीशंकर जी का स्वर्गवास हो जाने के पश्चात् उनके स्थान पर हाल ही में श्री बालकिशन जी जैन, नरवर को संरक्षक नियत किया गया है।

श्री नाथूराम जी अध्यक्ष रहे और उनके साथ श्री लालमणिप्रसाद जी मंत्री रहे। इसके पश्चात् श्री अमरचन्द जी, चीनौर अध्यक्ष एवं श्री राजाराम जी जैन, आगरा मंत्री निर्वाचित हुए। श्री अमरचन्द जी के स्वर्गवास के पश्चात् श्री फूलचंद जी जैन, मगरौनी अध्यक्ष एवं श्री राजाराम जी जैन, आगरा मंत्री निर्वाचित हुए। श्री फूलचंद जी के निधन के पश्चात् श्री बालकिशन जी, नरवर अध्यक्ष एवं श्री राजाराम जी जैन, आगरा मंत्री निर्वाचित हुए। दिनांक १८/३/८७ को चुनाव होने पर श्री लालमणिप्रसाद जी जैन अध्यक्ष एवं श्री रामस्वरूप जी जैन, इमली नाका, सिकन्दर कम्पू, लश्कर मंत्री निर्वाचित हुए।

फूलचंद जी जैन, मगरौनी के कार्यकाल में दो वर्ष तक लगातार फाल्गुन की अष्टान्हिका में सिद्ध चक्र मंडल विधान कराया एवं श्री शान्तिनाथ भगवान का महामस्तकाभिषेक बडे समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ। इसमें स्व. पं. सुमरेचंद जी दिवाकर कसवनी, स्व. पं. श्री छोटेलाल जी वरैया (आमौल वाले) उज्जैन एवं श्री पं. बलभद्र जी जैन पधारे थे। इसी विधान के अवसर पर एक चर्चा समाज द्वारा पंच कल्याणक महोत्सव कराने की चली। इसको मूर्त पूर्व फरवरी सन् १९९१ में हुआ जब समाज द्वारा श्री सोनागिर सिद्धक्षेत्र पर श्री मज्जिनेंद्र पंचकल्याणक एवं गजरथ महोत्सव का आयोजन किया गया। प्रतिष्ठाचार्य स्व. पं. शिखरचंद जी, भिण्ड वाले थे। उस समय आचार्य श्री १०८ विमलसागर जी महाराज उपाध्याय भरतसागर जी ससंघ, आचार्य श्री १०८ सुमतिसागर जी महाराज ससंघ एवं आचार्य श्री १०८ पार्श्वसागर जी महाराज विराजमान थे। शान्तिनाथ भगवान के मंदिर के दायें-बायें में भगवान कुन्थनाथ अरहनाथ की प्रतिष्ठा हुई थी। उस समय समाज की ओर से उपस्थित जनसमूह को भोजन व्यवस्था श्री गेंदालालजी, डबरा वालों की ओर से की गई थी।

वर्तमान में सन् १९९६ के चुनाव में श्री लालमणिप्रसाद जी जैन अध्यक्ष श्री रामस्वरूप जी जैन, इमली नाका संयुक्त अध्यक्ष एवं श्री चौधरी वीरेन्द्रकुमार जैन, डबरा मंत्री चुने गये हैं।

कमेटी के सतत् प्रयास से अनेक कार्य, जीर्णोद्धार एवं नवनिर्माण कराये गये हैं। श्री सोनागिर सिद्धक्षेत्र पर्वतराज के निकट होने से अधिकांश यात्री यहाँ ठहरते हैं। आधुनिक सुख सुविधाओं से युक्त धर्मशाला है।

उपरोक्त भट्टारक कोठी में मन्दिर नं. ८ के निर्माण के सम्बंध में निम्नलिखित शिलापट्ट है :-

'श्री श्रमणांचल स्थित श्री चन्द्रप्रभाय देव नम: सं. १७४७ श्रावण शुक्ला ८ श्री महाराजकुमार श्री दीवान छत्रसाल जू देव श्री महाराजकुमार श्री नंद महाराज जू देव श्री महाराजकुमार श्री राजा उदीप सिंह जू देव राज्योदयों सेवाधिस श्री गोपालमणि जू देव तत् समयस्य श्री मूलसंधे बलात्कारगणे सरस्वती गच्छे श्री कुन्दकुन्दाचार्यान्वय: श्री भट्टारक जी श्री जगतभूषण जू देव मन्दिर निर्माण करुंत श्री रस्तु श्री कल्याणमस्तु जो कोई वाचे तिनको धर्म वृद्धि होय। श्री श्री श्री श्री।

इसी मन्दिर के जीर्णोद्वार के सम्बन्ध में बीजक सं. १८६८।

श्री चन्द्रप्रभु देवाय नम: श्री सं. १८६८ माघ सुदी ५ श्री महाराजधिराज श्री रावराजा पारीक्षत बहादुरे जू देव तस्य राज्योदय श्री मूलसंघ बलात्कारगणे सरस्वती गच्छे कुन्दकुन्दाचार्यान्वय श्री गोपाल पट्टे भ.जी श्री विश्वभूषण जी तत्पट्टे श्री सुरेन्द्रभूषण जी तद् भ. श्री लक्ष्मीभूषण जी तत्पट्टे भ. श्री नरेन्द्रभूषण जी तत्पट्टे श्री सुरेन्द्र भूषण जी विद्यमाने श्री भट्टारक देवेन्द्रभूषण जी तस्य गुरुभ्राता मण्डलाचार्य श्री विजयकीर्ति जी तेन मन्दिर जीर्णोद्वारेण पुन: निर्माण कृत तस्य शिष्यां पं. परमसुख जी पं. भागीरथ जी चिरजीव हीरानन्द जी मेघराज आदि मंदिरस्य नित्यं सेवा कुर्वन्तु श्री रस्तु कल्याणमस्तु अपरंच १८६३ की साल में मन्दिर की नींव लगी अरु सं. १८६६ की साल में रथ यात्रा प्राण प्रतिष्ठा भई अरु सं. १८६८ की साल में मन्दिर पूर्ण बन गया जो वांचे तिनको धर्मवृद्धि आशीर्वाद यथा योग्यं।

मन्दिर नं. ९ – इसी भट्टारक संस्थान गादी सोनागिर की विशाल कोठी में तीसरी मंजिल पर मन्दिर नं. ९ है। इसमें एक वेदी है। यह चैत्यालय है। इस मंदिर में दश लक्षण धर्म यंत्र वि. सं. १८३६ वैसाख सुदी ५ बुधवार को श्री नैन सुख व चैन सुख वरैया नें प्रतिष्ठित कराया है।

वर्तमान कार्यकारिणी

संरक्षक :-

(१) श्री रामजीत जैन, एडवोकेट, टकसाल गली, दाना ओली, ग्वालियर -४७४ ००१

(२) श्री बालकृष्ण जैन, सदर बाजार, नरवर, जिला-शिवपुरी (म.प्र.) ☎ ७२४३१

अध्यक्ष :-

(१) श्री लालमणिप्रसाद जैन, गणेश कॉलोनी, नया बाजार, ग्वालियर - ४७४ ००९
☎ ३३०९३९, ४२६५४७

सयुक्त अध्यक्ष :-

(१) श्री रामस्वरूप जैन, सिकन्दर कम्पू, इमली नाका, ग्वालियर. ☎ ३३०९७६

उपाध्यक्ष :-

(१) श्री शान्तिस्वरूप जैन, महल कॉलोनी, शिवपुरी (म.प्र.) ☎ ३३६६०

(२) श्री इन्द्रचंद जैन, रोशनीघर रोड, ग्वालियर ☎ ३२००१३

मंत्री :-

श्री चौधरी वीरेन्द्र जैन, जवाहर गंज, डबरा, जिला-ग्वालियर ☎ २२६५६, २४२५६

सह मंत्री :-

(१) श्री विनोदकुमार जैन, सदर बाजार, नरवर, जिला-शिवपुरी (म.प्र.) ☎ ७२४३१

(२) श्री रोशनलाल जैन, पो. करहिया, जिला-ग्वालियर (म.प्र.) ☎ ८५६४८

(३) श्री राकेश जैन (आमौल), कोर्ट रोड, शिवपुरी (म प्र.) ☎ ३४०४०

प्रचार मंत्री :-

श्री रविन्द्र जैन, ऑफीसर्स कॉलोनी, नरवर, जिला-शिवपुरी (म.प्र.)

कोषाध्यक्ष :-

श्री गेंदालाल जैन, जवाहर गंज, डबरा, जिला -ग्वालियर (म प्र.) ☎ २४१७९

कोठारी :-

श्री मा. नेमीचंद जैन, गुरुद्वारा रोड, डबरा, जिला--ग्वालियर

अंकेक्षक :-

श्री रामबाबू जैन, सदर बाजार, नरवर, जिला-शिवपुरी (म.प्र.)

सदस्यगण

ग्वालियर मण्डल :-

(१) श्री शीतलप्रसाद जैन, जैनियों का बाडा, दौलतगंज, ग्वालियर (म.प्र.) ☎ ३२५४८८

(२) श्री मक्खनलाल जैन, मैसर्स महाचद मक्खनलाल सर्राफ, राधाकृष्ण मार्केट, सराफा बाजार, ग्वालियर (म.प्र.) ☎ ३६६९८५

(३) श्री धर्मचंद जैन, खुर्जेवाला मोहल्ला, दौलतगंज, ग्वालियर ☎ ३२५९८८, ३२५९८६

(४) श्री नेरन्द्रकुमार जैन "सौनू" द्वारा सोनू एजेन्सीज, दही मण्डी दौलतगंज, ग्वालियर ☎ ३३०६०४, ३३१६०४

(५) श्री राजकुमार जैन (बनवार वाले), श्री दि. जैन बडा मंदिर, पुरानी सहेली गस्त का ताजिया, सराफा बाजार, ग्वालियर

आगरा मण्डल :-

(१) श्री महावीर प्रसाद जैन-(बदेकवास वाले), नाला हींग की मण्डी, आगरा (उ प्र.)

(२) श्री फूलचंद जैन, गोपालपुरा, हाट, शमसाबाद, जिला-आगरा (उ.प्र.) ☎ २४७

(३) श्री माताप्रसाद जैन, गोपालपुरा,हाट,शमसाबाद,जिला-आगरा(उ.प्र.) ☎ २२६

शिवपुरी मण्डल :-

(१) श्री महेन्द्रकुमार जैन, एडवोकेट, कोर्ट रोड, शिवपुरी (म.प्र) ☎ ३२६०७

(२) श्री पन्नालाल जैन, पो. मगरौनी, जिला-शिवपुरी (म.प्र.) ☎ ७२२३०

(३) श्री धर्मचंद जैन (मामोनी वाले), तहसील के सामने, करैरा जिला-शिवपुरी ☎ ५३२६०

गिर्द मण्डल :-

(१) श्री रामजीलाल जैन, जवाहर गंज, डबरा, जिला-ग्वालियर (म.प्र.) ☎ २२५४९

(२) श्री बालचंद जैन, पो. कुलैथ, जिला-ग्वालियर (म.प्र.) ☎ ६२२२७

(३) श्री विमलचंद जैन (केरुआ वाले),बस स्टेण्ड के पास,भितरवार,जिला-ग्वा. ☎ २२८५०

(४) श्री श्रेयांसकुमार जैन, भरत ट्रेडर्स, भितरवार रोड, डबरा, जिला-ग्वालियर ☎ २२२९७

(५) श्री बैजनाथ जैन, पो. चीनौर, जिला-ग्वालियर ☎ ४१५२

मुरैना मण्डल :-

(१) श्री राजेश जैन, गांधी नगर कॉलोनी, मुरैना

(२) श्री सुमेरचंद जैन, जैन पुस्तक भण्डार, जौरा, जिला-मुरैना ☎ ६२००२

(३) श्री विमलचंद जैन, पो. सुमावली, जिला-मुरैना (म.प्र.) ☎ ५३०

मालवा मण्डल :-

श्री राजमल जैन, सोमवारिया बाजार, जावरा, जिला-रतलाम (म.प्र) ☎ २०६६५

३

卐 श्री १०८ आचार्य सुमतिसागर जी त्यागी व्रती आश्रम 卐

सिद्धक्षेत्र सोनागिर, दतिया (म.प्र.)

बीसवीं शती में दिगम्बर जैन मुनि परम्परा कुछ अवरुद्ध-सी हो गई थी, विशेषत: उत्तर भारत में मुनियों का दर्शन असम्भव-सा हो गया था। इस असम्भव को दो महान आचार्यों ने सम्भव बनाया। दोनों सूर्यों का उदय लगभग समकालिक हुआ जिनकी परम्परा से आज हमें मुनिराजों के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है और हम आज अपने को धन्य समझते है।

ये दो आचार्य है चारित्र चक्रवर्ती आचार्य १०८ श्री शान्तिसागर महाराज(दक्षिण) और प्रशांत मूर्ति आचार्य १०८ श्री शान्तिसागर जी महाराज(छाणी)। दोनों ही आचार्यों ने भारत भर में श्रावक धर्म और मुनि धर्म व मुनि परम्परा को वृद्धिगत किया। आचार्य १०८ श्री शान्तिसागर जी महाराज(छाणी) का जन्म छाणी, जिला-उदयपुर, राजस्थान में हुआ था। आपने सम्पूर्ण भारत में परिभ्रमण कर भव्य जीवों को उपदेश देते हुए सम्पूर्ण भारतवर्ष विशेषत: उत्तर भारत को उन्होंने अपना भ्रमण क्षेत्र बनाया। आपके अनेक शिष्य हुए। आचार्य परम्परा निम्न प्रकार है :-

आचार्य १०८ श्री शान्तिसागर जी (छाणी)
आचार्य १०८ श्री सूर्यसागर जी (पेमसर ग्राम, जिला-शिवपुरी, म.प्र.)
आचार्य १०८ श्री विजयसागर जी (सिरोली)
आचार्य १०८ श्री विमलसागर जी (मेहिना-ग्वालियर)
भिण्ड नगर को आपकी विशेष देन होने के कारण आप भिण्ड वाले महाराज के नाम से जाने जाते है।
आचार्य १०८ श्री सुमतिसागर जी मासोपवासी (श्यामपुर, मुरैना)
आचार्य १०८ श्री सन्मतिसागर जी, ग्राम बरबाई, मुरैना(म.प्र.)

आचार्य १०८ श्री सुमतिसागर जी ने अनेक मुनिराजों की समाधि कराई थी। जिनमें विजयसागर जी, भैयासागर जी, सन्मतिभूषण जी, मुनिसुव्रतसागर

तलहटी मे मन्दिर नं. ३८
श्री १००८ चन्द्रप्रभु भगवान
वेदी त्यागी आश्रम सोनागिर
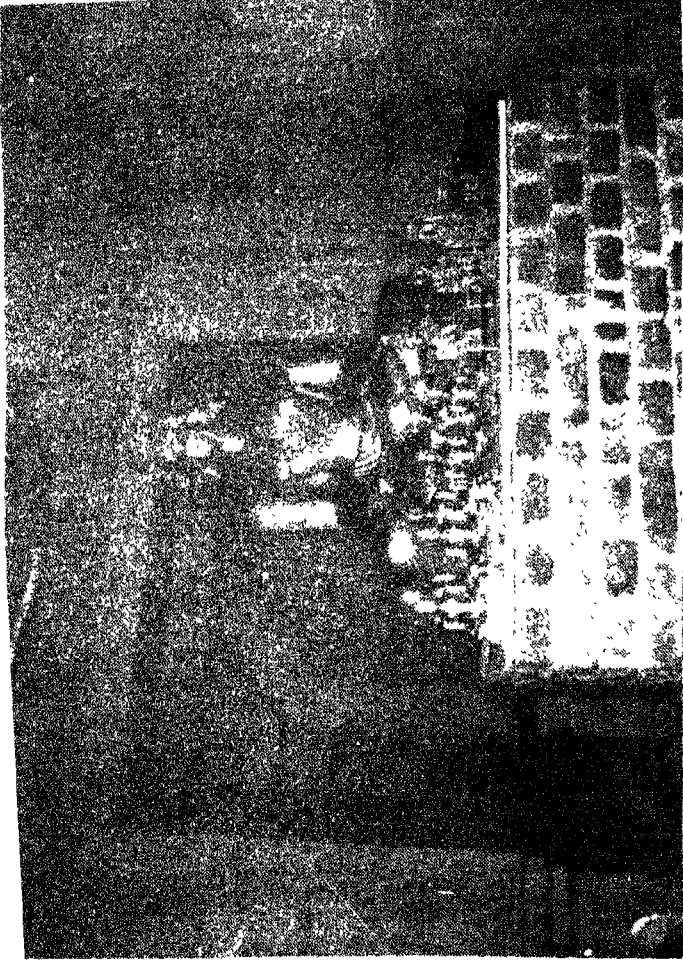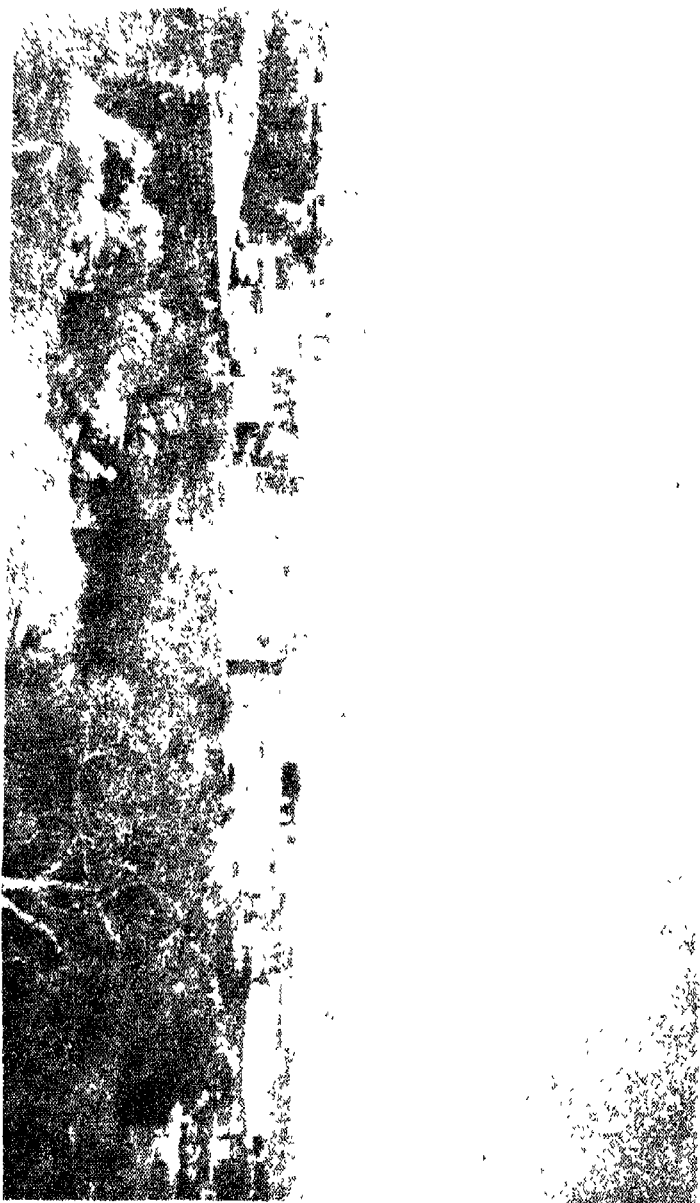
सोनागिर पर्वतराज के मन्दिरों का
विहंगम दृश्य

जी, समाधिसागर जी, सम्भवसागर जी की समाधियाँ महत्वपूर्ण रही। इन्हीं आचार्य श्री सुमतिसागर जी एवं श्री विजयसागर जी व परमपूज्य, परमतपस्वी, समाधिस्थ श्री १०८ आचार्य विमलसागर जी महाराज के सदुपदेश से पहिले जैसवाल जैन धर्मशाला, राजाखेड़ा में एक त्यागी व्रती आश्रम प्रारम्भ हुआ था। परंतु एक दो वर्ष बाद ही व्यवस्थापकों के अभाव में तथा समय की चपेट में छिन्न-भिन्न हो गया।

तत्पश्चात् सन् १९७४ में श्री १०८ आचार्य सुमतिसागर जी महाराज की प्रेरणा से राजाखेड़ा समाज एवं भट्टारक जी महाराज की भूमि पर सोनागिर जी में त्यागीव्रती आश्रम की स्थापना की गई। अब यहाँ पर अनेकों त्यागीव्रती निर्विघ्न रूप से धर्म साधना रत है तथा मुनि विजयसागर जी आदि अनेकों साधु संत यहाँ समाधि को प्राप्त हो चुके हैं। त्यागीव्रती आश्रम के अन्तर्गत विशाल नन्दीश्वर द्वीप का निर्माण स्याद्वाद नगर के प्रांगण के समीप ही हो रहा है। उसी में आचार्य श्री सुमतिसागर जी महाराज का समाधि स्थल, चरण छत्री तथा गुरु मंदिर का निर्माण कार्य प्रारम्भ है।

अखिल भारतीय श्री स्याद्वाद शिक्षण परिषद् एवं श्री १०८ सुमतिसागर जी त्यागीव्रती आश्रम इन दोनों को दीक्षा लेने से पूर्व 'ज्ञानानन्द' जी महाराज एक रूप दे चुके है। परिषद् एवं आश्रम इन दोनों की मूल समिति एक एवं व्यवस्था समिति भिन्न है तथा दोनों ही संस्था शुद्ध आम्नाय अनुसार पू.आचार्य श्री सुमतिसागर जी महाराज के आशीर्वाद से समाज सेवा त्यागीव्रती वैयावृत्ती एवं ज्ञान प्रसार में अग्रणीय है।

आचार्य श्री सन्मतिसागर जी ने ३१ मार्च १९८८ को आचार्य श्री सुमतिसागर जी महाराज से दीक्षा ग्रहण की थी। उस समय उन्होंने आपका पट्टाचार्य पद भी सन्मतिसागर जी को प्रदत्त किया। समाधि के समय आचार्य श्री सुमतिसागर जी ने घोषणा की थी कि उनके पश्चात् त्यागीव्रती आश्रम का समस्त कार्य आचार्य श्री सन्मतिसागर जी व आचार्य श्री भरतसागर जी के निर्देशन में होगा।।

त्यागी आश्रम में दो विशाल जिनालय एवं ११ कुन्टल धातु की विशाल चन्द्रप्रभु भगवान की प्रतिमा विराजमान है।

वर्तमान में आश्रम की संचालिका श्री सुशीलाबाई जी, आरा है जिनके निर्देशन में समस्त कार्य संचालित होता है।

सिद्धक्षेत्र सोनागिर पर संस्थाएं

४

卐 श्री स्याद्वाद शिक्षण परिषद् (रजि.) 卐

सोनागिर, दतिया (म.प्र.) ☎ (०७५२२) ६२२२७

परमपूज्य १०८ मुनि आर्यनन्दि महाराज के सानिध्य में अ भा श्री स्याद्वाद शिक्षण परिषद् की स्थापना समस्त दिगम्बर जैन समाज के समक्ष १ दिसम्बर १९७७ अगहन वदी पंचमी को हुई। वहीं सागर में इसका प्रधान संचालन था। स्थापना के पश्चात् प्रगति तो हो रही थी किन्तु सन्तुष्टि नहीं थी। कुछ समय पश्चात् क्षुल्लक सन्मतिसागर जी (वर्तमान में पंचमपट्टाचार्य स्याद्वाद विद्याभूषण सन्मतिसागर ज्ञानानन्द जी महाराज) की प्रेरणा से आचार्य श्री विमलसागर जी व आचार्य सुमतिसागर जी के सानिध्य में जनवरी १९७९ में परिषद का कार्यालय सोनागिर लाया गया। सोनागिर गतिविधियों का केन्द्र बन गया और चहुमुखी द्रुत प्रगति हुई। सिद्धक्षेत्र सोनागिर सहित परिषद की सभी शाखाओं के प्रबन्धन के लिए सोनागिर में परिषद का केन्द्रीय प्रधान कार्यालय है। यहाँ से परिषद की सभी गतिविधियों का संचालन होता है।

परिषद के संस्थापक महोदय द्वारा मार्च १९८३ में एक ट्रस्ट समिति गठित की गई जो 'अखिल भारतीय श्री स्याद्वाद शिक्षण परिषद ट्रस्ट सोनागिर (दतिया) म.प्र.' नाम से भारत सरकार से रजिस्टर्ड है।

परिषद की वर्तमान में अनेक शाखायें है जो भारत और विदेशों में कार्यरत है। श्री स्याद्वाद शिक्षण एवं प्रशिक्षण शिविर नाम से सम्यज्ञान प्रसारार्थ लगभग २०० शिविर लगाये जा चुके है। परिषद द्वारा श्री स्याद्वाद ब्रह्मचारिणी आश्रम, श्री स्याद्वाद शिक्षण नंगानंग दिगम्बर जैन संस्कृत प्राथमिक / माध्यमिक/हाईस्कूल विद्यालय, सोनागिर छात्रावास, श्री स्याद्वाद परीक्षा बोर्ड, श्री स्याद्वाद योग संस्थान, श्री स्याद्वाद शोध संस्थान, इस परिषद द्वारा संचालित हैं। एक मासिक पत्रिका 'स्याद्वाद ज्ञान गंगा' नाम से प्रकाशित हो रही है।

इसके अलावा 'स्याद्वाद नगर' की योजना के लिए भूमि क्रय की जा चुकी है। परिषद का निजी प्रिंटिंग प्रेस है। स्याद्वाद नगर, केन्द्रीय कार्यालय तथा छात्रावास में अलग अलग तीन चैत्यालय स्थापित किये हैं।

सोनागिर के अलावा - सागर शाखा ने वीर प्रभु की १० क्विंटल धातु

की. ११ फुट ऊंची खड्गासन प्रतिमा जी के लिए ५६ एकड भूमि क्रय की है। इस क्षेत्र का नाम स्याद्वाद मंगलगिरि तथा नगर का स्याद्वाद नगर तथा कॉलोनी का नाम मुक्तिपुरी रहेगा। यह भूमि लाल पहाडी के पास सागर में है।

परिषद की चन्देरी शाखा एक बाल संस्कार स्कूल अंग्रेजी मीडियम से चला रही है।

एत्मादपुर (उ.प्र.) में श्री दिगम्बर जैन समाज द्वारा प्रदत्त विशाल भूमि पर श्री १०८ मुनि संभवसागर जी महाराज की स्मृति में 'स्याद्वाद विमलभारती नाम से शिलान्यास किया जा चुका है। ललितपुर में स्याद्वाद कान्वेन्ट स्कूल एवं संस्कृत महाविद्यालय परिषद् के नेतृत्व में संचालित है।

परिषद की भोपाल शाखा भोपाल के निकट सूखी सिवनियां में ४० एकड भूमि पर 'स्याद्वाद अहिंसा स्थली' निर्माण करने जा रही है।

परिषद द्वारा जहाँ जहाँ जो जो भी क्रिया कलाप व गतिविधियां हो रही है उन सबके पीछे श्री १०५ क्षुल्लक सन्मतिसागर जी महाराज का हाथ रहा है। दिनांक १७/२/७२ को तीर्थराज श्री सम्मेद शिखर पर श्री १०८ आचार्य सुमति सागर जी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ली तथा श्री सन्मतिसागर नाम ज्ञानार्जन प्रसार एवं साम्यता से सार्थक कर दिया। महावीर जयन्ती की पावन बेला में दिनांक ३१/३/१९८८ को जबकि पूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज भी ससंघ सोनागिर जी में उपस्थित थे, श्री सिद्धक्षेत्र सोनागिर जी में पर्वतराज पर अपने गुरु चारित्र चक्रवर्ती मासोपवासी श्री १०८ आचार्य सुमतिसागर जी महाराज से मुनिदीक्षा ग्रहण की। इसी अवसर पर आचार्य श्री ने अपना आचार्य पद मुनि श्री १०८ स्याद्वाद विद्याभूषण सन्मतिसागर जी को समर्पित किया तथा यह भी घोषणा की कि परम्परागत पट्टाचार्य भी रहेंगे। साथ ही श्री १०८ मुनि ज्ञानसागर जी उपाध्याय रहेंगे। उन मुनिश्री ने गुरु के रहते आचार्य पद को पूर्णत: स्वीकार नहीं किया। अब आचार्य श्री सुमतिसागर जी महाराज के समाधिस्थ हो जाने पर आप उनके पद पर प्रतिष्ठित है।

अखिल भारतीय स्याद्वाद शिक्षण परिषद द्वारा प्रमुख साहित्य भी प्रकाशित किया गया है तथा किया जा रहा है। परिषद के प्रणेता आचार्य कल्प श्री १०८ स्याद्वाद विद्याभूषण सन्मतिसागर की धारा प्रवाही लेखनी से नि:सृत साहित्य प्रकाशित होता है साथ ही अन्य मूर्धन्य लेखकों, कवियों, साहित्यकारों ने भी अपनी लेखनी द्वारा जैनागम की गंगा बहाने का लोकोपकारी कार्य किया है।

विशिष्ट उपलब्धि – दिनांक २८ मार्च १९९४ का वह दिवस जैन इतिहास में एक अपूर्व स्वर्णिम अवसर था जब लाखों निगाहों ने विश्व का अजूबा, अद्वितीय 'सिंहरथ महोत्सव' देखा और देखा कि किस प्रकार सिंह शावकों ने जिनेन्द्र भगवान के रथ को खीच कर महान पुण्यार्जन किया। यह महोत्सव सिद्धक्षेत्र सोनागिर जी में परिषद के तत्वावधान में प.पू. समाधि सम्राट आचार्य श्री सुमतिसागर जी महाराज ससंघ, आचार्य श्री पुष्पदंतसागर जी महाराज, आचार्य श्री पार्श्वसागर जी महाराज, आर्यिका श्री ज्ञानमती माता जी आदि अनेक पूज्य संतों की उपस्थिति में हुआ था। इस महोत्सव के प्रेरक थे बहुमुखी प्रतिभा के धनी, विद्या प्रेमी परम पूज्य आचार्य श्री १०८ स्याद्वाद विद्याभूषण सन्मतिसागर जी महाराज; जिन्होंने 'स्याद्वाद जैन विश्वविद्यालय' के स्थापनार्थ इस महोत्सव को प्रेरणा दी थी। इस अवसर पर श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं गजरथोत्सव भी दिनांक २३ मार्च से २८ मार्च १९९४ तक आयोजित हुआ था। इसी अवसर पर दिनांक २८/३/९४ को उपरोक्त जैन विश्वविद्यालय की स्थापना भी की गई।

संक्षिप्त परिचय आचार्य श्री सन्मतिसागर जी महाराज का

जन्म स्थान एवं तिथि	– ग्राम बरबाई, जिला–मुरैना (म.प्र.) मिती अगहन वदी पंचमी गुरुवार दि. १०/११/४९
गृहस्थ नाम	– सुरेशचन्द जैन
माता एवं पिता का नाम	– श्रीमती सरोजदेवी एवं श्रीमंत सेठ बाबूलाल जैन
शिक्षा	– आपने जैन दर्शन, काव्यतीर्थ , न्यायतीर्थ, आयुर्वेद रत्न, ज्योतिषरत्न, सिद्धान्त शास्त्री, धर्मालंकार, आदि में स्नातकोत्तरीय शिक्षा के साथ साथ व्याकरण हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, प्राकृत, आदि भाषाओं में निष्णांतता प्राप्त की है।
ब्रह्मचर्य व्रत	– १० सितम्बर, १९७१ आचार्य श्री पार्श्वसागर जी एवं आर्यिका श्री सुपार्श्वमती माता जी से
क्षुल्लक दीक्षा	– १७ फरवरी, १९७२ स्थान श्री सम्मेद शिखर जी
मुनिदीक्षा एवं आचार्य पद की घोषणा	– महावीर जयंती दि. ३१/३/८८ श्री सिद्धक्षेत्र सोनागिर जी पर – दीक्षा गुरु मासोपवासी आचार्य श्री सुमतिसागर जी
पट्टाचार्य पद प्रतिष्ठापक	– दि. १० अप्रैल १९८१ नरवर पंच कल्याणक

उपाधियां

आचार्य श्री सन्मतिसागर जी को उनके अनुपम सैद्धान्तिक ज्ञान, निर्भीक वक्तृत्व कला, स्याद्वाद सिद्धान्त के प्रति दृढ़ निश्चय एवं सम्यकज्ञान के प्रचार - प्रसार से प्रभावित होकर समाज एवं जैनाचार्यों ने ज्ञानानन्द, सिद्धान्तचक्रवर्ती, स्याद्वाद केसरी, व्याख्यान वाचस्पति, ज्ञानदिवाकर, धर्मदिवाकर, वात्सल्य वारिधि, राष्ट्र ऋषि, सिंहरथ प्रवर्तक आदि अनेक उपाधियों से विभूषित किया है।

स्याद्वाद परिषद द्वारा संचालित परीक्षा बोर्ड का कार्य डा. रेखा शास्त्री देखती हैं, श्री डा. भागचन्दजी 'भागेन्दु', दमोह के निर्देशन में शोधार्थी शोध कार्य कर पी.एच.डी. की डिग्री प्राप्त कर रहे है। श्री डा. सुरेन्द्र भारती स्याद्वाद ज्ञानगंगा के सम्पादक है तथा श्री के. सी. जैन के निर्देशन में स्याद्वाद परिषद् का प्रबंध संचालन होता है। आप इसके संयुक्त मंत्री हैं।

और अंत में एक मूक साधक, परिश्रम शील, निष्ठावान व्यक्ति है जो अनवरत १८ वर्षो से स्याद्वाद के समस्त कार्यों की कड़ी को जोडता हुआ कार्य कर रहा है और वह व्यक्ति है दामोदरप्रसाद जैन जो सरल स्वभावी एवं मृदु भाषी हैं

५

卐 श्री दि. जैन वीसपंथी बड़ी कोठी (रजि.) 卐
सोनागिर, दतिया (म.प्र.)

बलात्कारगण – अटेर शाखा भट्टारकों की गद्दी (दिल्ली–जयपुर शाखा) श्री सोनागिर सिद्धक्षेत्र पर थी। पूर्व में यहाँ इस शाखा के भट्टारकों का आगमन होता रहता था। श्री सिद्धक्षेत्र सोनागिर जी के पर्वत पर जाने के मार्ग पर मुख्य गेट के बायीं ओर की भूमि पर श्री भट्टारक जिनेन्द्र भूषण जी ने मन्दिर बनवाने की आज्ञा दी। उस समय यहाँ मन्दिर बनवाने का कार्य प्रारम्भ किया। यह मन्दिर पर्वतराज की तलहटी में मन्दिरों की संख्या नं. १५ की श्रेणी में है। इसमें ७ मंजिल है और आज भी मन्दिर चौथी मंजिल के ऊपर प्रत्यक्ष में है तथा बाकी तीन मंजिल नीचे जमीन में और हैं। वि. सं. १८१९ में इस मन्दिर की नींव रखी गई। बनते बनते जब मन्दिर की तीन मंजिल पूर्ण हुई तो इस तीसरी मंजिल पर भट्टारक जी की गद्दी बनाई गई और यहीं पर एक प्रतिमा प्रतिष्ठित वि. सं. १८२५ में की गई। ऐसा यहाँ कैं शिलालेख से प्रकट होता है परन्तु वर्तमान में यह प्रतिमा जी यहाँ नहीं हैं। वि.सं. १८८७ में स्थाई रूप से भट्टारक गद्दी स्थापित हुई।

वि.सं. १८२८ में मन्दिर बनकर पूर्ण हुआ तब इसकी प्रतिष्ठा हुई उस समय हाथियों का रथ चला था। इस मंदिर का जीर्णोद्धार आचार्य श्री विमल सागर जी ने जब यहाँ चार चातुर्मास किये तब १९८१ में शुरू हुआ और अभी तक चल रहा है। इसमें कांच का काम बहुत ही कलापूर्ण रीति से किया जा रहा है। इस कारण यह ''कांच मंदिर'' नाम से प्रसिद्धि पा रहा है। इसकी भव्यता की छवि देखकर चित्त अत्यंत प्रसन्न हो जाता है। इसमें मंदिर में पाँच वेदियां है और तीन चौबीसी का समोशरण है। इस मंदिर के बायीं ओर तरफ तालाब के निकट श्री भट्टारक जी की चरण पादुका स्थापित है जो एक गुफानुमा मंदिर के आकार में है। ऊपर छतरी की गुम्बज में चारों ओर भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा बनी हुई हैं। यह स्थान ''चमत्कारी बाबा'' के नाम से प्रसिद्ध है। गाँव में इसकी मान्यता है। आसपास के जैनेतर इन चरणों की पूजा कर अपनी मनोकामना पूर्ण करते है।

इस मंदिर की पुरानी धर्मशाला को नया रूप दिया जा रहा है। आधुनिक सुविधा से युक्त दस कमरे निर्माण हो चुके है। इसमें एक बावडी है जिसका जल अति निर्मल, मीठा, शीतल एवं स्वास्थ्य वर्धक है। इसमें निरंतर जल भरा रहता है

तलहटी का मन्दिर नं. १५
वीसपंथी कोठी मे कांच के मन्दिर की वेदी
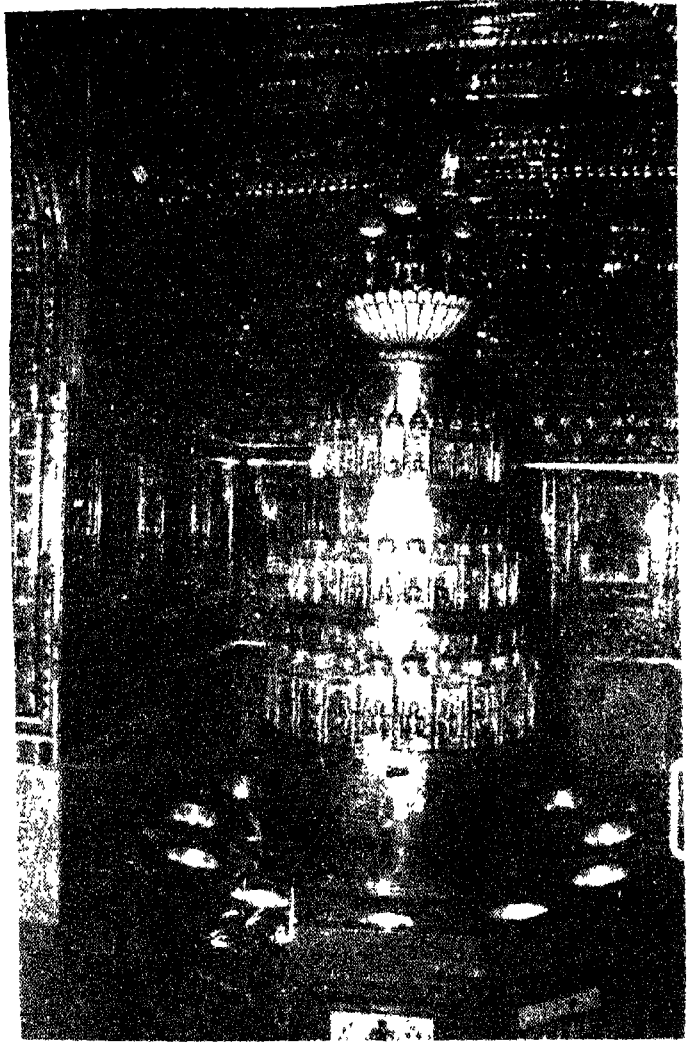
श्री भट्टारक जी महाराज ने इसकी व्यवस्था श्री दिगम्बर जैन बीस् पंथी बड़ी कोठी के सिपुर्द कर दी है। यह संस्था रजिस्टर्ड है।

卐 मंदिर जी के मुख्य प्रवेश द्वार के ऊपर का शिलालेख 卐

ॐ नम: सिद्धभ्य: श्रीमान् सर्वसुख सुरोरदनराधीश चिरेताभ्यां बुद्धो देहीन्नारवील तर्थ वैरिविपिनोजाग्रधशो मंडल: ॥ राघद्वेषतिर्निंतोपिनमतांसं सारदुखा पट्ट: प्राप्तानंत चतुष्टयो विजय ते चन्द्रप्रभ स्वामीहत् ॥१॥ अद्य सम्वत् १८१९ मध्ये श्री महाराजाधिराज सुव राजाश सुरजीत जू ने श्रमणाचल में श्री भट्टारक जिनेन्द्रभूष जी की आज्ञाकारी इहां मन्दिर बनवाओ तब वाही समय में मंदिर की नींव लगबाई संवत् १८२८ मध्ये हाथी चल्यो प्रतिष्ठा भई ॥ पट्ट ग्वालियर का श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वती गच्छे कुंदकुंदाचार्यान्वये श्री भट्टारक जगतभूषणदेवा: तत्पट्टे श्री भट्टारक विश्वभूषणदेवा: तत्पट्टे श्री भट्टारक देवेन्द्रभूषणदेवा: तत्पट्टे श्री भट्टारक सुरेन्द्रभूषणदेवा: तत्पट्टे भट्टारक श्री लक्ष्मीभूषणदेवा: श्री ब्रह्मविजयसागर जी श्री ब्रह्महर्षसागर जी पंडित हरिकृष्ण जी पंडित जीवनराम जी पंडित हेमराजजी पंडित भवानीदास जी एतेषां मध्ये श्री भट्टारक जिनेन्द्रभूषणदेवा: तत्पट्टे श्री भट्टारक महेन्द्रभूषण देवेनत गुरभ्रात श्री आचार्य देवेन्द्रकीर्ति नाच सं. १८८७ मध्ये पुन स्वयंप्रासाद औग्य प्राय परिणहि प्रभु रवै: संस्कार विशेषै: संपन्नतां प्रापित: ॥ शीलोहा स्पर्शमादि सर्वदुख निवार्ण की त्रि: चित्तोयोभूदत्र जिनेन्द्रभूषण यति भट्टारक को धर्म धी: ॥ तत्पट्टे श्री महेन्द्रभूषण इतिशालोभिधनि नमस्ते नेहं जिनराज सौधर्मनधं निर्मापि नियमहात ॥१॥ अद्री मे हस रवे सं. १८८७ विक्रमादित्यराजत: ॥ संवत्सरे धती तेषुखावुन्नरदिग्गर्ते ॥२॥ शैशिरे फागुन मासे पंचमांधवल धुतौ ॥ पट्टकं स्थापितं जीयाहा चन्द्रा की दयावधि ॥३॥ भट्टारक महेन्द्रभूषण गुरुभात नामानिय था ॥ श्री आचार्य सुमतिकीर्ति जी ॥ श्री आचार्य गुणकीर्ति जी ॥ ब्रह्मक्षेमसागर जी ॥ ब्रह्मरत्नसागर जी। ब्रहादयासागर जी ॥ ब्रह्मज्ञानसागर जी ॥ ब्रह्मधर्मसागर जी ॥ ब्रह्ममौनसागर जी इत्यादि ॥ श्री भट्टारक शिष्या: व्यथा ॥ श्री मंडलाचार्य सुरेन्द्रकीर्ति जी ॥ श्री भट्टारक राजेन्द्रभूषण जी ॥ श्री आचार्य नेमिकीर्ति जी ॥ पंडित बालमुकुन्द जी ॥ पं. धन्यामल जी ॥ पं. महाचन्द्र जी ॥ पं. रूपचन्द्र जी ॥ पं. हीरालाल जी इत्यादि ॥ चौधरी नाथूराम जी ॥ चौ. भुनारेजी सयातुपस्य स्फटिकोपल प्रमे प्रभादि ताने विनिमान मूर्तिभि: ॥ विदिद्युतै दुग्ध पयोधिमध्ये जैरिवामरै र्व: श शिलाछनो जिन: ॥१॥ श्री अर्हनुरवो द्रता भारती विजयंता ॥

॥ मटरू कारीगर वासी धौंहा नगर के ॥

卐. दूसरा शिलालेख 卐

ॐ श्री अ सि आ उ सा नमः श्री चन्द्रप्रभ ॐ सिद्धाय ॥ संवति १८२५ वर्ष कार्तिक वदी छठ वासरे रोहिता नक्षत्रे शिव योगें श्री मूलसंघे सरस्वती गच्छे बलात्कारगण श्री कुन्दकुन्दाचार्यान्वये भट्टारक श्री विश्वभूषण जी त. देवेन्द्रभूषण जी त. सुरेन्द्रभूषण जी त. लक्ष्मीभूषणजी त. जिनेन्द्रभूषणजी एते मध्ये ब्रह्म श्री विनयसागरजी तत् शिष्य श्री हर्षसागरजी तत् शिष्या नाद्हज श्री हरिन्द जीजी त. श्री अद्धितिरामजी त. श्री हेमराज जी त. ब्रह्मअनन्तसागरजी त. भवानीदास त. हिरानन्द त. इन्द्रतराम एतेषाम मध्ये श्री पं. जीवनराम पं. दास श्री सोनागिर जी मध्ये चत्यो एकदिशम प्रतिमा जी प्रतिष्ठितं श्री ब्रत्रपुर उपदेश.............
श्री प्रतिस्याह श्री मता---राऊ बीतकुवर दिवान श्री चौधरी बंशीधर चौ. रामसिंह नित्य प्रणमति ।

श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र सोनागिर संरक्षिणी कमैटी

पो. सोनागिर (जिला-दतिया) म.प्र.

☎ (०७५२२) ६२२२२, ६२२२३

सिद्धक्षेत्र सोनागिर की व्यवस्था श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र सोनागिर संरक्षिणी कमैटी, सोनागिर द्वारा होती है। प्रथम वार्षिक रिपोर्ट सोनागिर सिद्धक्षेत्र प्रबन्धकारिणी कमेटी सम्वत् १९७३ के अनुसार इस क्षेत्र का पहले सम्पूर्ण प्रबन्ध व जीर्णोद्वार का कार्य श्रीमान् १०८ भट्टारक हरेन्द्रभूषण जी व उनके गुरूओं द्वारा होता था। ईर्षा के कारण कुव्यवस्था हुई। अन्य लोगों के साथ ग्वालियर के राजा फूलचन्द जी और सूरजमल जी तत्कालीन दतिया महाराज से मिले और क्षेत्र का प्रबन्ध कमैटी को मिला। नकल हुकम दरबार ७ मार्च सन् १९१७ ई. के आदेश में यह लिखा है कि सेठजी फूलचन्द जी राजा व सूरजमल जी ने दीगर लोगों से राय मिलाकर यह तजवीज पेश की कि सोनागिर जी पर एक कमैटी मुकर्रर की जावे और यह कमैटी प्रबन्ध कायम करेगी। सबकी राय से जनरल कमैटी में नीचे लिखे मैम्बर तजवीज किये :-

१. भट्टारक हरेन्द्रभूषण जी प्रेसीडेन्ट २. भट्टारक ग्वालियर वाले ३. भट्टारक देहली वाले, ४. सेठ सूरजमल जी, लश्कर ५. सेठ फूलचन्द जी राजा, लश्कर ६. सेठ राजाराम जी, मगरौनी, ७. सेठ सूरजमल जी कागदी, लश्कर, ८. सेठ श्रीचन्द जी, नरवर वाले ९. प्यारेलाल जी, मऊवाले १०. सेठ वक्तावरमल जी, लश्कर ११. खेमचन्द जी, खेरोली वाले १२. हीरालाल जी सर्राफ, एटा, १३. लोकमनदास जी, मुरार १४. लक्ष्मीचन्द जी, करैया १५. गुंदीलाल जी, झांसी १६. सेठ गंगाप्रसाद जी, गंदी १७. सेठ उत्तमचन्द जी, आगरा १८. सेठ भागचंद जी, रंघियाला १९. सेठ फुन्दीलाल जी, कैलारस २०. पंड्या चौधरी कुंजलाल, सोनागिर तत्पश्चात् दीवान साहब रामबहादुर टी.पं. छाँजूराम जी सी.आई.ई. (दतिया) ने संवत् १९७१ के मेले में पधार कर श्री सोनागिर सिद्धक्षेत्र प्रबंधकारिणी सभा स्थापित की। इस सभा ने इस क्षेत्र का कार्य सम्वत्१९७२ के मेले से प्रारम्भ किया। चैत्र कृष्णा ५ संवत् १९७२ को मेले में ही सभा की मीटिंग हुई उसमें उपसभापति सेठ फूलचन्दजी राजा वाले एवं मंत्री श्री गोपीलाल जी गोधा चुने गये। सन् १९२२ में भारतवर्षीय दि. जैन तीर्थक्षेत्र कमैटी बम्बई के अध्यक्ष सर सेठ हुकमचन्द जी, इन्दौर तत्कालीन दतिया स्टेट के महाराजा से मिले और उस समय दतिया महाराज ने यह प्रबन्ध भारतवर्षीय दि. जैन तीर्थक्षेत्र कमैटी, बम्बई के प्रबंध में किया। और इस कमैटी के अन्तर्गत श्री दि. जैन सिद्धक्षेत्र संरक्षिणी कमैटी ने इस क्षेत्र का प्रबंध संभाला।

इसके संरक्षक न्यायमूर्ति, तीर्थभक्त, शिरोमणि, दानवीर, राय बहादुर, राजरत्न, जैन जगत भूषण, रईसुदौला, सरसेठ हुकमचन्द जी साहब नाईट, इन्दौर रहे तथा सम्भवत: सन् १९४१ से राय साहब श्रीमान् लाला रूपचन्द जी, कानपुर द्वितीय संरक्षक बन गये। इन दोनों महानु भावों के स्वर्गवास के पश्चात् २३-३-६२ के प्रस्ताव के अनुसार सर्व सम्मति से दानवीर साह श्री शान्तिप्रसाद जी संरक्षक चुने गये। जिसे उन्होंने स्वीकार किया। इनके स्वर्गवास के पश्चात् कोई संरक्षक नहीं चुना गया। अब इस कमैटी का ट्रष्ट बन गया है जिसका रजिस्ट्रेशन दिनांक १६-१०-७३ को पब्लिक ट्रस्ट धर्मार्थ कलेक्टर द्वारा हो चुका है।

सन् १९७२ से कमैटी निरंतर कार्य कर रही है। चुनावों के अनुसार अध्यक्ष और मंत्रियों का कालक्रम निम्न प्रकार है।

	अध्यक्ष	कार्यकाल (सन् ईस्वी)
१.	श्री भट्टारक हरेन्द्रभूषण जी	१९१६ से १९२१ तक
	श्री सेठ फूलचन्द जी राजा	कार्याध्यक्ष
२.	श्री सेठ मूलचन्द जी सर्राफ, बरुआसागर	१९२२ से १९३४ तक
३.	श्री सेठ राय सा. रूपचन्द जी जैन, कानपुर	१९३५ से १९३९ तक
४.	श्री सेठ बैजनाथ जी सरावगी,	१९४० से १९५२ तक
५.	श्री सेठ राजाराम जी, मगरौनी	१९५३ से १९५७ तक
६.	श्री सेठ कपूरचंद जी गोधा जौहरी, दिल्ली	१९५८ से १९६१ तक
७.	श्री सेठ राजकुमार सिंह, इन्दौर	१९६२ से १९६४ तक
८.	श्री सेठ छदामीलाल जी, फिरोजाबाद	१९६५ से १९६७ तक
९.	श्री सेठ चांदमल जी पहाड़िया गोहाटी	१९६८ से १९७३ तक
१०.	श्री सेठ भगवानदास जी बीड़ी वाले, सागर	१९७४ से १९७७ तक
११.	श्री सेठ रघ्घूमल जी बीड़ी वाले, झांसी	१९७९ से

	मंत्रियों के नाम	कार्य काल
१.	श्री बाबू गोपीलाल जी गोधा, लश्कर	१९१६ से १९२१ तक
२.	श्री शंकरलाल जी पांडवीय, मुरार	१९२२ से १९२४ तक
३.	श्री श्यामलाल जी पांडवीय, मुरार	१९२४ से १९२६ तक
४.	श्री विशम्भरदयाल जी गार्गीय, झांसी	१९२६ से १९३४ तक
५.	श्री सेठ गप्पूलाल जी बाकलीवाल, लश्कर	१९३४ से १९४३ तक
६.	श्री मानिकचंद जी गंगवाल एडवोकेट, लश्कर	१९४३ से १९७८ तक
७.	श्री मिश्रीलाल जी पाटनी, लश्कर (कार्यकारी मंत्री)	१९७८ से १९७९ तक
८.	श्री हुकमचन्द जी अजमेरा, एडवोकेट, लश्कर	१९७९ से १९८० तक
९.	श्री मिश्रीलाल जी पाटनी, लश्कर	१९८० से १९९० तक

कमेटी ने जब कार्यभार सम्हाला उस समय क्षेत्र की व्यवस्था ठीक नहीं थी। आमदनी के विशेष साधन नहीं थे। स्टेशन से क्षेत्र तक पहुंचने की ५ कि.लो. मीटर की सड़क भी कमेटी के अधिकार में थी। इसकी मरम्मत प्रीतिवर्ष एवं बीच-बीच में यदा कदा करनी पड़ती थी। आय के स्त्रोत बढ़ाने के लिये टिकट चार आने वाले तीस हजार छपाकर पंचायतियों और समाज के मुखियाओं को भेजे गये। सडक के बनाने में श्री ईश्वरीप्रसाद जी ओवरसियर मुरैना, मोहनलाल जी जैसवाल लश्कर, सेठ घासीलाल जी सोनी, लश्कर, सेठ गुलाबचन्द जी दोषी, मुरार, बाबूखेमचन्द जी जैसवाल, लश्कर ने समय समय पर आकर विशेष सहायता कि श्री गप्पूलाल जी बाकलीवाल मंत्री ने दिन रात सड़क पर ही रहकर कार्य कराया। सड़क के किनारे किनारे फलदार, छायादार वृक्ष लगवाये। पक्की सड़क बनवाई। पहाड़ पर घास का ठेका रियासत की ओर से सन् १९३६-३७ में दिया गया। पहाड़ पर कुछ लोग जूते पहनकर जाने लगे। उस समय कमेटी ने दतिया महाराज का प्रार्थना पत्र भेजा एवं प्रतिनिधि मण्डल मिला। दतिया महाराज की ओर से घास और लकड़ी का ठेका समाप्त किया गया एवं पहाड़ पर जूते पहनकर जाने वालों पर रोक लगाई गई।तत् सम्बंधी बोर्ड भी लगवाया गया। ढोर पहाड़ पर जिन रास्तों से जाते थे वे बन्द कराये गये। दिनांक १८/३/३७ की मीटिंग में सोनागिर का विस्तृत इतिहास लिखने का प्रस्ताव किया गया परंतु अभी तक कार्य रूप परिणित नहीं हुआ।

परिक्रमा का रास्ता बड़ा खराब था। आठ सितम्बर १९४४ को दतिया स्टेट से परिक्रमा बनाने की स्वीकृति हुई। तहसीलदार दतिया ने पहाड़ पर निर्माण कार्य के सम्बंध में आपत्ति की इस पर दतिया स्टेट के दिनांक ३१/१०/४४ के अनुसार पहाड़ पर कमेटी अपनी इच्छानुसार नवीन निर्माण, जीर्णोद्धार, संशोधन परिवर्तन आदि समस्त कार्य कर सकती है। इसके लिए किसी इजाजत की आवश्यकता नहीं है। ग्राम सिनाबल में इमारतों के बनवाने, तरमीम करने या उनमें कोई नई तामीर कमेटी द्वारा कराने में कोई आपत्ति स्टेट को नहीं यदि ऐसी भूमि कमेटी के कब्जे में बहैसियत मालिक हो।

सिद्धक्षेत्र सोनागिर कमेटी की त्रैवार्षिक रिपोर्ट सन् १९५३ से सन् १९५५ में बताया गया है कि सोनागिर सिद्धक्षेत्र कमेटी का निर्माण सन् १९२० में श्री भारतवर्षीय दिग. जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी द्वारा हुआ था और सन् १९२५ में यह क्षेत्र पूर्णरूप से कमेटी के अधीन आ गया। तभी से इसका प्रबंध कमेटी द्वारा बराबर होता चला आ रहा है। विगत ३१ वर्षों में कमेटी के हाथ में प्रबंध आने के बाद क्षेत्र

पर जो आशातीत उन्नति हुई है वह किसी भी यात्री से छिपी नही है। जिस समय कमेटी के हाथों प्रबंध आया उस समय क्षेत्र की दशा बहुत ही चिन्ताजनक थी। मन्दिरों में जाने के लिये सुगम मार्ग नहीं था। मन्दिरों में किवाड़ जोड़ी न होने से पक्षीयों ने अपने घोंसले बनाकर रहने के स्थान बना लिये थे। मन्दिर जीर्ण शीर्ण हो रहे थे। पुताई, सफाई का कोई प्रबंध नहीं था। कमेटी ने सर्वप्रथम मन्दिरों में लोहे की जोड़ियां लगाने का प्रबंध कराया जो तीर्थ भक्त शिरोमणि लाला देवीसहाय जी सहारनपुर की ओर से सम्पन्न हुआ। इसके बाद मार्ग और मन्दिरों का जीर्णोद्धार कराया और प्रति तीसरे वर्ष पुताई का आयोजन किया। मन्दिरों में सामग्री चढ़ाने की उचित व्यवस्था नहीं थी। वेदियां भी जीर्ण शीर्ण हो चुकी थी। अर्घ चढ़ाने के दोहे नहीं थे, फर्श मारबल भी नहीं लगे थे, क्षेत्र अवनति दशा को पहुंच चुका था। कमेटी ने इन सब बातों की व्यवस्था दान दाताओं द्वारा कराई जिससे क्षेत्र उन्नति दशा को प्राप्त होने लगा। क्षेत्र की परिक्रमा का मार्ग बड़ा ही कठिन था। उसमें कांटों और ककड़ों का जङ्गल बिछा हुआ था। जिसमें यात्रीगण कष्ट का अनुभव करते थे। बहुसंख्या में यात्री परिक्रमा में जाते नहीं थे। इस कार्य को भी कमेटी ने दान दाताओं को प्रेरणा करके पक्की परिक्रमा बना दी है। क्षेत्र पर कमेटी की विशाल धर्मशाला नहीं है क्षेत्र पर नल और बिजली का अभाव भी खटकने लगा है। ताल का सुधार विन्ध्य प्रदेश शासन द्वारा हो चुका है जिससे उसमें बारह महीने पानी पर्याप्त मात्रा में रहने लगा है। प्रकाश के लिये कमेटी तीन जनरेटर मंगा चुकी है।

गत तीन वर्षों में कमेटी द्वारा दो विशेष आयोजन किये गए। पहला श्री १००८ बाहुबलि स्वामी महाराज का महामस्तकाभिषेक जो वीर सं. २४७९ में उसी समय हुआ था जबकि श्रवणबेलगोला में महामस्तकाभिषेक हुआ था। इसमें श्री मिश्रीलाल पाटनी लश्कर वालों का बहुत सहयोग रहा दूसरा आयोजन मानस्तम्भ महामस्तकाभिषेक व नवीन कलशारोहण वीर सं. २४८० में हुआ। इस कार्य में श्री फूलचंदजी डबरा वालों का बहुत सहयोग रहा। वे कमेटी के उपमंत्री थे।''

एक बार शासन की ओर से पर्वत पर मोरम निकालने का ठेका दिया गया इसका प्रकरण कमेटी ने दायर किया जो रेवेन्यू बोर्ड तक चला। बोर्ड से ठेका निरस्त किया गया क्योकि पर्वत पर अनेकों जिनालय बने हुए थे और इस पर्वत का कण कण जैनियों के लिए पूज्य था।

श्री मानिकचंद जी गंगवाल एडवोकेट के मंत्रित्वकाल में पर्वत पर और क्षेत्र पर बिजली और पानी की व्यवस्था की गई। सोनागिर सम्बंधी साहित्य

प्रकाशित हुआ :-

१. सोनागिर सुषमा (काव्यमय) रचयिता – शर्मनलाल 'सरस'।

२. श्री बृहत् सिद्धक्षेत्र सोनागिर सचित्र पूजन – रचयिता पं. छोटेलाल वरैया (आमौल निवासी) उज्जैन। इसके दो संस्करण प्रकाशित हुए।

३. स्वर्णाचल महात्म्य संस्कृत एवं हिन्दी अनुवाद – अनुवादक बालचन्द्र जैन। यह सब साहित्य कमेटी द्वारा प्रकाशित किया गया है।

इस प्रकार अनेक विघ्न बाधाओं से जूझते हुए कमेटी ने क्षेत्र की आशातीत उन्नति की। पहाड़ पर वन्दना हेतु प्रत्येक बाल आबाल वृद्ध बड़ी सुगमता पूर्वक एवं प्रसन्नतापूर्वक जाते है। चंदाप्रभू के मन्दिर पर पहुँचते ही इसकी प्राकृतिक सौन्दर्यता एवं वैभव को देखते ही रोम रोम पुलकित होकर भाव विभोर हो उठता है और अनायास ही वाणी मुखरित हो उठती है –

''सिद्धक्षेत्र सोनागिर वन्दू, वन्दू चंद्रप्रभू जिनराय।
नंग अनंगकुमार सुवन्दू, साढे पाँच कोटि मुनिराय॥''

श्री मानिकचंद गंगवाल एडवोकेट के परिश्रम व सेवाभाव से जो अपूर्व उन्नति हुई उसके फलस्वरूप समाज ने एक स्वर से उन्हें 'तीर्थ भक्त' की उपाधि से सन्मानित किया।

एक घटना का जिक्र आवश्यक समझता हूँ कि मिती चैत्र वदी एकम् से चैत्र वदी पंचमी सन् १९४२ वि. सं. १९९९ में लगभग १५० वर्षों के बाद श्री सिद्धक्षेत्र सोनागिर पर जरसेना वाले श्री हुबसेन जी ने पंचकल्याणक महोत्सव का आयोजन किया। जिसके प्रतिष्ठाचार्य पं. श्री सिद्धसागर जी ललितपुर वाले थे। इस आयोजन के मंत्री श्री प्यारेलाल वरैया मामा का बाजार, लश्कर वाले थे। इस समय जो पांडुकशिला बनाई गई थी वहीं अब तक उपयोग में आ रही है। यह आयोजन बहुत अभूतपूर्व रहा इसकी प्रतिष्ठा के लिए श्री हुबसेन जी ने भगवान आदिनाथ की प्रतिमा विराजमान की थी जिसे वे अपने गाँव जरसेना ले जाने वाले थे परंतु आयोजन समाप्ति के बाद उपयुक्त साधन न मिलने के कारण उस समय नहीं ले जा सके और प्रतिमा जी पर्वत की तलहटी के मन्दिर नं. १ में विराजमान कर दी गई। बाद में श्री हुबसेन जी उसे लेने आए तो कहा जाता है कि प्रतिमा जी वहाँ से नहीं उठी इसलिए उन प्रतिमा जी को मन्दिर नं. १ में ही विराजमान रहने दिया।

श्री हुकमचन्द जी अजमेरा एडवोकेट, नया बाजार, लश्कर के कार्यकाल में पंचकल्याणक महोत्सव एवं श्री आचार्य विमलसागर जी महाराज की जन्म जयंती मनाई गई थी।

श्री मिश्रीलाल पाटनी के मंत्रित्व काल में स्टेशन से सोनागिर तक यात्रियों को लाने ले जाने तक बस की व्यवस्था की गई तथा इस हेतु बस भी खरीदी गई। विशाल धर्मशाला का निर्माण कार्य भी प्रारंभ किया गया। कमेटी के कार्यालय का सुधार किया गया तथा बाहरी भाग सुन्दर बनाया गया। 'सोनागिर एक परिचय' ले. कपूरचंद वरैया का प्रकाशन हुआ।

वर्तमान कार्यकारिणी के मंत्री श्री ज्ञानचन्द जी एडवोकेट ने विकास कार्य को जारी रखा और उनके कार्यकाल में निम्नलिखित कार्य सम्पन्न हुए – १. पर्वत पर मुख्य मन्दिर श्री चंद्रप्रभू के सामने मान स्तम्भ के तीन ओर चौबीसी प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा हेतु पंचकल्याणक महोत्सव का आयोजन हुआ। मूर्तियां प्रतिष्ठित होकर विराजमान हुई तथा चौबीसी का फर्श मारबल का निर्मित कराया गया।
२. पर्वतराज के मन्दिर नं. ७३ से ७७ तक चैक टायल्स का फर्श लगवाया गया।
३. नीचे विशाल धर्मशाला में दो बड़े हाल एवं आठ कमरे आधुनिक सुविधाओं सहित निर्मित कराये गये।
४. नरवरनी वाली धर्मशाला जो जीर्ण शीर्ण थी उसका नये सिरे से निर्माण कराया गया। जिसमें आधुनिक समस्त सुविधाओं सहित १७ कमरों का निर्माण कराया गया।
५. पुलिस चौकी के बंगल में शान्तिदेवी त्यागी आश्रम धर्मशाला समस्त सुविधाओं सहित निर्मित हुई।
६. चम्पालाल जैन की बगल की जगह में तीन कमरे व एक दुकान का निर्माण हुआ
७. शिखरचंद वाली धर्मशाला उनके द्वारा निर्मित होकर कमेटी के सिपुर्द हुई।
८. कमेटी कार्यालय की धर्मशाला में गर्म जल का संयत्र लगवाया गया।
९. क्षेत्र से तीन किलो मीटर की दूरी पर बोरिंग कराकर उससे ऊपर पहाड़ पर टंकी बना कर एवं धर्मशाला में जल निरंतर प्राप्त होता रहे इसकी व्यवस्था की गई
१०. विशाल धर्मशाला में टेलीफोन एक्सचेंज के लिए कमरों का निर्माण कराया गया।
११. विशाल धर्मशाला में त्रिमूर्ति मन्दिर की स्थापना हुई। इस प्रकार क्षेत्र पर विकास गति बढ़ रही है और सोनागिर सिद्धक्षेत्र अनेक सुविधाओं सहित ध्यान, भक्ति एवं धार्मिक भावनाओं को बढ़ाने का एक उपयुक्त क्षेत्र हो गया है।
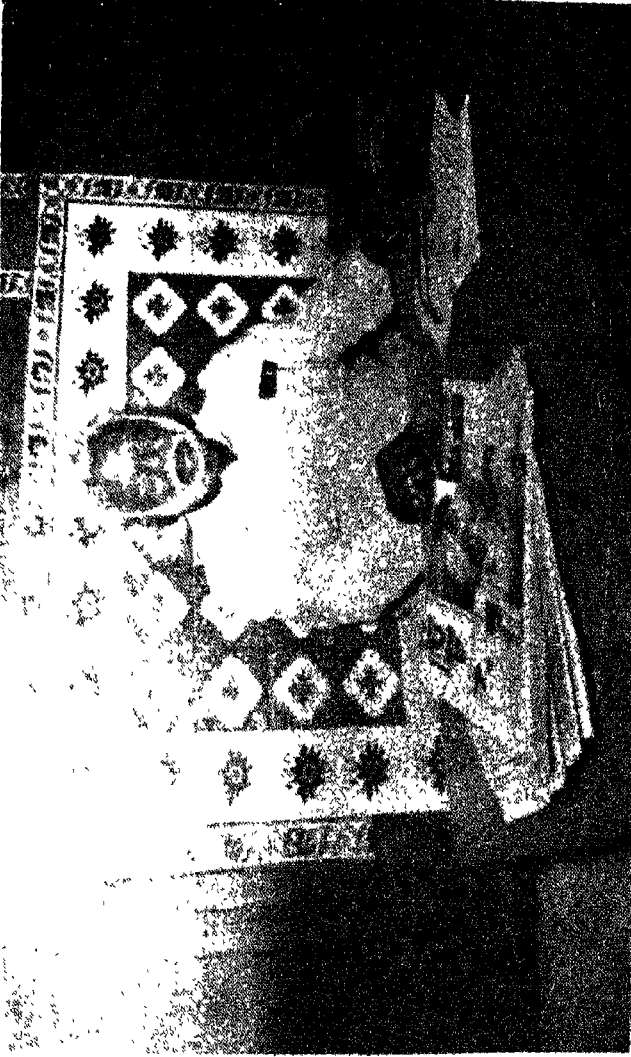
श्री डालचंद जैन भूतपूर्व सांसद, सागर
अध्यक्ष श्री सिद्धक्षेत्र सोनागिर संरक्षिणी कमेटी

❖ वर्तमान कार्यकारिणी ❖

अध्यक्ष–

श्री डालचन्द जैन (भूतपूर्व सांसद) चमेली चौक, सागर, ✆ २२७८९, ३४३३६६

उपाध्यक्ष–

श्री निर्मलकुमार जैन, एडवोकेट, नया बाजार, ग्वा., ✆ ३२३६१६, ३२०८२४

श्री रमेशचन्द्र जैन, वर्धमान आयरन स्टोर्स, चौक, झांसी ✆ ४४०८८९

मंत्री–

श्री ज्ञानचन्द जैन, एडवोकेट, मनीराम का बाड़ा, दानाओली, ग्वालियर ✆ ३२७२१७

उपमंत्री–

श्री महेन्द्र कुमार जैन, जैन साहित्य सदन, पाटनकर बाजार, ग्वालियर ✆ ३२५१७९, ३२६७६४, ३२५१४१, ३२५५४३

श्री लालजीराम जैन, जवाहरगंज, डबरा, ✆ २२४०६, २३०३५

प्रचार मंत्री–

श्री राजकुमार जैन, एडवोकेट, नया बाजार, ग्वालियर ✆ ३२२८८२

कोषाध्यक्ष–

श्री सुमतप्रसाद जैन, चितेरा ओली, माधौगंज, ग्वालियर, ✆ ३३३७०९

आडीटर–

श्री द्वारकाप्रसाद जैन, गांधी नगर, ग्वालियर, ✆ ३३४९४६

सदस्यगण–

श्री मानिकचन्द्र जैन, एडवोकेट, हुजरात रोड, नया बाजार, ग्वा., ✆ ३२३५५४

श्री राजेन्द्र कुमार जैन, एडवोकेट, काशी नरेश की गली, ग्वालियर ✆ ३६४१६३

श्री रवीन्द्र मालव, 'शान्ति सदन', फालका बाजार, ग्वालियर ✆ ३२६८३४

श्री पुत्तनलाल जैन, एडवोकेट, दानाओली, ग्वा. ✆ ३२७९८१ R ३२१८९७.O

श्री सुमतिचन्द शास्त्री, मोरैना

श्री नेमीचन्द जैन, मुरार

श्री महेन्द्रकुमार जैन, मैं. मुंशीलाल महेन्द्रकुमार माधौगंज, ग्वा. ✆ ३३१४८८

श्री रमेशचन्द्र जैन, रमेश आयनर स्टोर्स, लोहिया बाजार, ग्वा. ✆ ३२०४२४

श्री तेजकुमार जैन, मेरीना स्टोर्स, सराफा बाजार, ग्वालियर © ४२०७१४

श्री डॉ. चन्द्रकुमार गंगवाल, सराफा बाजार, ग्वालियर

श्री सतीश अजमेरा, दौलतगंज, ग्वालियर © ३२२०९२,३२१९००

श्री शान्तिचन्द जैन, छीपीटोला, आगरा

श्री लक्ष्मीनारायण जैन, दाना ओली, ग्वालियर

श्री अजीत कुमार जैन, मैं. गन्नामल धन्नालाल, सराफा बाजार, ग्वा. © ३३३३६९

श्री द्वारिकाप्रसाद जैन, एडवोकेट, मुरैना

श्री प्रवीण कुमार गंगवाल, दाना ओली, ग्वालियर © ३६९९२२

श्री श्रीचन्द जैन (चावल वाले), दिल्ली

श्री चन्द्रसेन जैन, खुर्जावालों का मोहल्ला, दौलतगंज, ग्वालियर

श्री छोटेलाल जैन "नेता", भिण्ड

श्री अजीत वरैया, भाऊ का बाजार, दाना ओली, ग्वा. © ३२००५०,३२७९५८

श्री प्रो. अमरचन्द जैन, हाईकोर्ट लेन, हाईकोर्ट रोड, ग्वालियर © ३२२९७६

श्री बाबूलाल जैन, खुर्जोवाला मोहल्ला, दौलत गंज, ग्वालियर

श्री बादामीलाल जैन, न्यू पेपर एजेन्ट, माधौगंज, ग्वालियर © ३३५३१२

श्री जयचंद लुहाड़े, बम्बई

सोनागिर

फोन: (०७५२२) ६२२२२, ६२२२३

❖ श्री सिद्धक्षेत्र सोनागिर पूजन ❖

(रचयिता – होतीलाल जैन वरैया "हेती" आमौलवासी, हाल निवासी, न्यू सैनिक कालोनी
बी–अजयपुर रोड, सिंकदर कम्पू, ग्वालियर म.प्र.)

स्थापना

हिन्द देश के मध्य क्षेत्र में, पड़े ग्वालियर का दक्षिण।
नंगा नंग कुमार मुनि की, सिद्ध भूमि है करुं नमन ॥
चन्द्रप्रभु की दिव्य ध्वनि को, इन्द्र रचा था समवशरण।
साढ़े पाँच कोड़ि मुनियों का, कोटि–कोटि है अभिनंदन ॥
इसी क्षेत्र से मुक्ति हुए थे, कर्म दहन कर सभी श्रमण।
श्रमणांचल है सोनागिर गिर, भूमि तलहटी बिम्ब भवन ॥
आव्हानन सबही का करते, पूज रहे हैं विघ्न हरण।
मांग रहे है निज स्वभाव को, मुक्ति गये जो सभी श्रमण ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धक्षेत्र सोनागिर से नंगानंग कुमार मुनीश्वरादि साढे पाँच करोड़ मुनि सिद्ध पद प्राप्तये अत्र अवतर अवतर संवौषट् आव्हानन्।

ॐ ह्रीं श्री--------अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्री--------अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

पड़ा आवरण ज्ञान गुणों पर, ज्ञानावरणी उदय रहा।
पूर्व किये थे कर्मबन्ध जो, उनसे यह प्रारब्ध बना ॥
प्रारब्धों की कड़ी तोड़ने, जल लेकर यह भाव करूँ।
यों श्रद्धा ज्ञान जगाकर अपना, शांति पंथ की राह चलूँ ॥
सोनागिर से सिद्ध हुए मुनि, उनकी पूजन भक्ति करूँ।
श्री चन्द्रप्रभु के दर्शन कर, उन भावों का ही पात्र बनूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धक्षेत्र सोनागिर से नंगानंग कुमार मुनीश्वरादि साढे पाँच करोड मुनि सिद्ध पद प्राप्तये जलं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन आवरणी कर्म उदय, जब जब सत्ता में आता।
तब तब प्राणी दर्शन गुण से, अपने को है बंचित पाता ॥
ये कर्म प्रकृती दूर भगाने, चन्दन भक्ति का लाया।
तुम तोड़ चुके हो कर्मबन्ध को, पंथ हमें यह दर्शाया ॥ सोनागिर से सिद्ध ० ॥

ॐ ह्रीं श्री--------चंदनं।

जब सुखी हुआ तब हूँ प्रसन्न में, दुखी हुआ तब पछताया।
है कर्म वेदनीय पूर्व बन्ध जो, सतत चले इसकी छाया ॥
बढ़ते है इससे रागद्वेष, बंधते हैं इससे पुन: बन्ध।
बस छूट जाय जग के प्रपंच, अक्षत रखना चरणारुविन्द ॥ सोनागिर ० ॥
ॐ ह्रीं श्री-------अक्षतम्।

जब तन मिलता है नया नया, तब रिस्ते बनते नये नये।
बढ़ गया सभी से मोह यहां, तन बदले सब ही छूट गये ॥
क्षण क्षण में जितना राग किया, तब मोह कर्म का बन्ध बड़ा।
सब टूट जाय तुम भक्ति से, इन भावों का यह पुष्प चढ़ा ॥ सोनागिर ० ॥
ॐ ह्रीं श्री-------पुष्पं।

यह जीव जगत मैं है भ्रमता, कई गति के तन को है पाता।
किस तन में कितना समय रुके, यह आयु कर्म से है नाता ॥
गति बन्ध स्वयं ही जीव स्वयं की, करनी का बनता कर्ता।
नैवेद्य चढ़ा पूजूं तुमको मैं, बनूं बंध गति का हर्ता ॥ सोनागिर ० ॥
ॐ ह्रीं श्री-------नैवेद्यं।

परिणमन स्वयं ही तरह तरह, भटकाता है इस प्राणी को।
शुभ अशुभ नाम का बन्ध पडा, वैसा तन पाता प्राणी वो ॥
ये द्रव्य कर्म अरु भाव कर्म का, भेद ज्ञान तुम बतलाया।
बस इन्हें समझने भाव बने, अज्ञान तिमिर हरने आया ॥ ॥ सोनागिर ० ॥
ॐ ह्रीं श्री-------दीपं।

पर की निन्दा स्वयं प्रशंसा, करके यह मन सुखी हुआ।
यों अशुभ गोत्र का बन्ध बांधकर, जग दु:खों का विस्तार हुआ ॥
बसु कर्म प्रवृत्ती हो न सके यह, धूप चढ़ाने मैं आया।
दर्शन का ज्ञान मिले प्रभु मुझको श्रद्धा से तुम ढिंग आया ॥
सोनागिर से सिद्ध हुए मुनि उनकी पूजन भक्ति करुं।
श्री चन्द्रप्रभु के दर्शन कर, उन भावों का ही पात्र बनूं ॥ सोनागिर ० ॥
ॐ ह्रीं श्री-------धूपम्।

दान किसी का रूकवाया या लाभ किसी का रुकवाया।
ये कर्म बन्ध है अन्तराय का, उदय हुआ मन पछताया ॥
विघ्न न होवे मेरे द्वारा, तुम पूजन से यह पाऊं।

बस इसी हेतु फल चढ़ा रहा इस अन्तराय को विघटाऊं ॥ सोनागिर ० ॥
ॐ ह्रीं श्री--------फलम् ।

अष्ट द्रव्य से पूजन करता, श्रृद्धा मेरी बढ़ जावे।
सद् दर्शन ज्ञान बढ़े प्रभु निश दिन, अशुभ कर्म घटते जावे॥
समदृष्टि का करूं आचरण, हेतु अर्घ मैं चढ़ा रहा।
अष्ट कर्म की सभी प्रकृति, नाश करूं यह भाव रहा ॥ सोनागिर ० ॥
ॐ ह्रीं श्री-------अर्घम् ।

卐 जयमाला 卐

सोनागिर गिर मध्य तलहटी, सवा सतक जिनबिम्ब भवन।
नंगा नंगकुमार वाहुबलि चऊबीसी, मुनि चरण नमन ॥
तप करके जो सिद्ध हुए मुनि, नंगा नंग सहित मुनिगण।
साढे पाँच कोटि मुनियों का, इसी क्षेत्र से मुक्ति गमन ॥
यह प्रदेश है मध्य देश में, कहलाता है मध्य प्रदेश।
बिन्ध्याचल पर्वत की श्रेणी, वेष्ठित करतीं भाग विशेष ॥
शान्ति क्षेत्र कहीं सिद्धक्षेत्र कहीं जीव जंगली वन उपवन।
शोभित होते ग्राम नगर पुर, गिरि शाखायें हरती मन ॥
वन उपवन उद्‌गम नदियों के झरना झरें भरैं तालाब।
सरहद करती जिला परगना, नदियाँ वन हस्ती अपबाद ॥
दुर्ग बने हैं कई शाखा गिरि खनिज खान भण्डार प्रदेश।
एसी गिरि शाखा का वर्णन मिलता दतिया जिला विशेष ॥
बुन्देलखण्ड था इस से पहले, दतिया राज्य स्वयं स्वाधीन।
था अधिकार क्षेत्र गद्दी का, स्वर्णगिरि पुर है प्राचीन ॥
गिरि की महीमा हुई प्रसिद्ध जब, चन्द्र प्रभु के हुए बिहार।
समवशरण की रचना हुई थी, थी प्रमाण से पन्द्रह बार ॥
समय धन्य था इस भूमि पर, चन्द्र प्रभु के रूके चरण।
भूमि बन गई अति पवित्र गिरि, प्राणी पहुँचे समवशरण ॥
दिव्य ध्वनि थी खिरी प्रभु की, आत्म हितों को सोनागिर।
अतिशय सब ही प्रकट हुए थे, तीर्थ बना है सोनागिर ॥
श्रमण संस्कृति पली क्षेत्रपर, आत्म हितों को सोनागिर।
सही परीषह तरह तरह से, चमत्कार थे सोनागिर ॥

शिला बाजनी कुंड नारियल, अतिशय हैं प्रत्यक्ष प्रमाण।
सिद्धक्षेत्र है उन मुनियों से, जिनके हुए मोक्षकल्याण ॥
यों सिद्धक्षेत्र है तीर्थक्षेत्र है, तपोभूमि है सोनागिर।
चरण चिन्ह निर्मित मुनियों के, भव्य जिनालय सोनागिर ॥
मूलनायक चन्द्रप्रभु की, मूर्ति वैभव क्षेत्र प्रधान।
एक हजार तीन सौ पैतीस, हुई प्रतिष्ठा सम्वत् जान ॥
है दर्शन पूजन भव्य साधना, धर्मी आते सोनागिर।
भाव बनाता आत्म धर्म का, अतिशय कारी सोनागिर ॥
पर्वत पर है ज्ञान गूदडी, आत्म शान्ति का देती ज्ञान।
आत्म हितैषी ''हेती'' बनकर, करैं बन्दना गिरि की आन ॥
भव्य बनेंगे भाव धर्म के, ऐसा निश्चय श्रृद्धा जान।
करै साधना उन भावों की, जिनसे हुआ मोक्षकल्याण ॥
ॐ ह्रीं श्री--------पूर्णार्घम्।

दोहा – सोनागिर की बन्दना, पूजन है सुखकार।
भाव बना पूजा लिखी, पढै हरैं अपकार ॥

इत्यार्शीवाद

✤✤✤✤✤✤✤✤✤✤✤✤✤

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

१. भारत के दि.जैन तीर्थ (भाग-३) मध्यप्रदेश-लेखक बलभद्र जैन, प्रकाशक-भारतवर्षीय दि.जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी, मुंबई-४.

२. सोनागिर : एक परिचय-लेखक कपूरचन्द वरैया-प्रकाशक श्री दि.जैन सिद्ध क्षेत्र सोनागिर संरक्षिणी कमेटी, सोनागिर.

३. सोनागिर - चित्रावली

४. सोनागिर सुषमा (काव्यमय परिचय) रचयिता-शर्मनलाल जैन 'सरस' प्रकाशक-मंत्री सोनागिर सिद्धक्षेत्र कमेटी.

५. श्री वृहद् सिद्धक्षेत्र सोनागिर सचित्र पूजन-रचयिता पं. छोटेलाल वरैया (आमोल निवासी) उज्जैन.

६. अर्हत वचन वर्ष ७ अंक २ अप्रैल १९५५ सम्पादक अनुपम जैन प्रकाशक कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ, इन्दौर.

७. पं. बाबूलाल जैन जमादार अभिनन्दन ग्रन्थ.

८. अहिंसा वाणी वर्ष १२ अंक ९ सितम्बर १९६२ तीर्थंकर चन्द्रप्रभु व पुष्पदन्त विशेषांक.

९. सोनागिर सिद्धक्षेत्र कमेटी की रिपोर्ट.

१०. स्वर्णाचल महात्म्य संस्कृत एवं हिन्दी अनुवाद-अनुवादक बालचन्द्र जैन प्रकाशक मंत्री श्री दि.जैन सिद्धक्षेत्र सोनागिर कमेटी.

११. भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी की सिद्धियों के छप्पन साल सं. १९५९ से २०१५.

१२. श्री दि. जैन वरैया समाज का इतिहास -लेखक रामजीत जैन एडवोकेट प्रकाशक श्री लालमणिप्रसाद जैन 'माणि', ग्वालियर.

१३. श्री दि. जैन खरौआ समाज का इतिहास - ले. रामजीत जैन एडवोकेट प्रकाशक गयेलिया धर्मार्थ ट्रष्ट.

१४. श्री दि. जैन गोलालारे जैन समाज का इतिहास - ले. रामजीत जैन एडवोकेट प्रकाशक श्री वीरसेन जैन, भिण्ड.

१५. श्री दि. जैन जैसवाल समाज का इतिहास -ले. रामजीत जैन एडवोकेट प्रकाशक जैसवाल जैन समाज.

१६. मध्यभारत का इतिहास प्रथम खण्ड (सन् ३५० ई. तक) लेखक हरिहरनिवास दिवेद्वी प्रकाशक अनन्तमराल शास्त्री संचालक सूचना विभाग मध्यभारत - १४ अक्टूबर १९५६

१७. जैन शिलालेख संग्रह (भाग ५) सम्पादक डॉ. विद्याधर जोहरापुरकर प्रकाशक भारतीय ज्ञानपीठ १९७१.
१८. भट्टारक सम्प्रदाय–सम्पादक डॉ. विद्याधर जोहरापुरकर.
१९. सन्मार्ग दिवाकर परमपूज्य श्री १०८ आचार्य विमलसागर जी महाराज अभिनन्दन ग्रन्थ.
२०. श्रमणगिरि श्रमणयोग स्मारिका १९८९.
२१. '' '' '' हीरकजंयती विशेषांक १९९०.
२२. स्व. श्री १०८ आचार्य श्री शिवसागर स्मृति ग्रन्थ.
२३ एतिहासिक भारतीय अभिलेख –लेखक प्रो. कृष्णादत्त बाजपेयी, डॉ. कन्हैयालाल, डॉ. संतोष बाजपेयी – प्रकाशक पब्लीकेशन स्कीम जयपुर (भारत) पृ. ८८ लेख ९.
२४. दतिया: उदभव और विकास –प्रकाशक श्रीश्यामसुन्दर 'श्याम' जन सहयोग एवं सामुदायिक विकास संस्थान, दतिया.
२५. गजेटियर आफ इंडिया – मध्यप्रदेश–दतिया १९७७.
२६. तीर्थंकर वाणी वर्ष २ अंक ११ अगस्त १९५५ संपादक – डॉ. शेखरचन्द्र जैन (अहमदाबाद प्रकाशन).
२७. संक्षिप्त जैन इतिहास भाग ३ खण्ड १ दक्षिण भारत के जैन धर्म का इतिहास ले. कामताप्रसाद जैन प्रकाशक मूलचंद किशनचंद कापडिया जैन मित्र कार्यालय, सूरत.
२८. भद्रबाहु चरित्र–सम्पादन एवं अनुवादक डॉ राजाराम जैन प्रकाशक श्री दि. जैन युवक संघ, द्वितीय सस्करण १९९२

सोनागिर पर्वतराज के मन्दिरों का
विहंगम दृश्य